इकाई-3

हिन्दी का भाषिक रूप

प्रश्न 9. स्वनिम की अवधारणा क्या है? इसकी विशेषताएँ एवं उपयोगिता का वर्णन कीजिए। इसकी समस्याएँ भी बताइए।

उत्तर-

स्वनिम की अवधारणा

स्वनिम किसी भाषा की लघुतम अर्थभेदक इकाई है। इसकी सत्ता अमूर्त होती है और यह मानव मस्तिष्क में होता है। मानव मस्तिष्क में स्वनिम संकल्पनात्मक रूप में रहते हैं और उन्हीं के आधार पर मनुष्य उनका बार-बार भाषा उत्पादन (अभिव्यक्ति) और बोधन में उपयोग करता है। स्वनिमों को दो स्लैश के बीच ('//' में) प्रदर्शित किया जाता है।

किसी स्वनिम विशेष के ही जब एक से अधिक रूप भाषा में प्रचलित हो जाते हैं तो वे आपस में उपस्वन कहलाते हैं। उपस्वन का प्रयोग संबंधित स्वनिम के स्थान पर करने पर शब्द का अर्थ नहीं बदलता है। स्वनिम और उपस्वन एक ही प्रकार्य सम्पन्न करते हैं। उनके प्रयोग की स्थितियाँ अलग-अलग होती हैं।

स्वनिम शब्द अंग्रेजी के फोनीम का नवीनतम हिन्दी रूपान्तर है। इसके लिए अब तक 'ध्वनिग्राम' शब्द का प्रयोग होता रहा है, किन्तु भारत सरकार के पारिभाषिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने 'कोनीम' का हिन्दी रूपान्तर स्वनिम किया है। स्वनिम शब्द संस्कृत के स्वन् धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ होता है ध्वनि या आवाज करना। स्वनिम उच्चरित भाषा का वह न्यूनतम अंश है, जो दो ध्वनियों का अन्तर प्रदर्शित करता है। 'क' और 'ख' या 'च' और 'प' में अन्तर इसलिए है कि ये भिन्न स्वनिम हैं। 'गान' और 'कान' में अन्तर स्वनिम भेद के कारण ही प्रतीत होता है। सरस, चरस, परस, बरस शब्दों के केवल आरम्भ में एक-एक ध्वनि के अन्तर के कारण प्रत्येक शब्द का अर्थ बदल जाता है। इन शब्दों के अर्थ में भेद का कारण स, च, प, ब ध्वनियाँ है, जो भिन्न-भिन्न स्वनिम है। इसलिए स्वनिम की परिभाषा में 'अन्तर' शब्द पर बल दिया गया है।

इस प्रकार स्वनिम भाषा की वह लघुतम इकाई है, जो समान ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करती है। यह अन्य ध्वनियों से भिन्न होती है। इसका सम्बन्ध किसी भाषा विशेष से होता है। (ब्लॉक एण्ड ट्रेगर) देवेन्द्रनाथ शर्मा के अनुसार, "स्वनिम उच्चरित भाषा का वह न्यूनतम अंश है, जो ध्वनियों का अन्तर प्रदर्शित करते हैं।" ग्लीसन के अनुसार, स्वनिम किसी भाषा अथवा बोली में समान ध्वनियं का समूह है। स्वनिम वर्णमाला को द्योतित करता है। भाषा ध्वनि या वर्णमाला के अर्थ में स्वनिम शब्द का प्रयोग अर्वाचीन है। प्रत्येक स्वनिम स्वतंत्र रूप से एक ही संकेत से संकेतित किया जाता है। उच्चारण स्थान और प्रयत्न की समानता के आधार पर स्वनिमों का निर्धारण किया जाता है। क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ओ, औ आदि हिन्दी के स्वनिम है। कुल मिलाकर हन्दी में 54 स्वनिम हैं। 11 स्वर स्वनिम है और 33 व्यंजन स्वनिम। एक विकेन्द्रिय स्वनिम (ऑ), 5 विकेन्द्रिय व्यंजन स्वनिम, दो अन्तस्थ स्वनिम, अनुस्वार स्वनिम, विसर्ग स्वनिम। 11 + 33 + 1 + 5 + 2 + 1 + 1 = 54 हिन्दी के इन स्वनिमों से अनन्त शब्द निर्मित होते हैं। भाषा की न्यूनतम इकाई स्वन

या ध्वनि है। कोई व्यक्ति एक ही ध्वनि का उच्चारण बार-बार एक ही समान नहीं कर सकता। कमल, कपट, कान, कोट, कर्म, कर्ण कठिन आदि शब्दों के आरम्भ में 'क' ध्वनि है। लेकिन प्रत्येक 'क' ध्वनि का उच्चारण भिन्न-भिन्न है। ध्यान देने पर यह उच्चारण भिन्नता साफ दिखाई देगी। एक ही ध्वनि को सौ बार बोलने पर उनमें उच्चारण में भिन्नता आ जाएगी। लेकिन इस उच्चारण भिन्नता को अंकित करना नामुमकिन है। स्वनिम की इस उच्चारण भिन्नता को संस्वन कहते हैं। अर्थात् एक ही ध्वनि के उच्चारण में जो भिन्नता हो, जो अन्तर हो, वह संस्वन है। कहने का तात्पर्य यह है कि स्वनिम, संस्वनों का एक वर्ग है। जिन परिस्थितियों में एक स्वनिम आता है, ठीक उन्हीं परिस्थितियों में दूसरा स्वनिम नहीं आ सकता।

स्वनिम की विशेषताएँ

स्वनिम की विशेषताएँ इस प्रकार हैं-

1. स्वनिम किसी भाषा की लघुतम अखण्ड्य इकाई होता है। जैसे- अ, क, च, ट, त, प। यह एक जाति या श्रेणी है।

2. स्वनिम समान ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करता है। एक ही ध्वनि यदि अनेक प्रकार से उच्चरित होती है तो स्वनिम एक ही होगा।

3. स्वनिम में अर्थ-परिवर्तन की शक्ति होती है, जैसे- काल, गाल, चाल, लाल में क, ग, च, ल स्वतंत्र स्वनिम हैं। अत: इनके भेद से अर्थ में परिवर्तन हो जा रहा है। 'प' और 'क' भिन्न स्वनिम है। 'पल' और 'कल' में 'ल' दोनों शब्दों में है। लेकिन 'प' और 'क' के कारण कल और पल में अर्थ भेद हो गया है।

4. स्वनिम समीपवर्ती ध्वनियों से प्रभावित होते हैं। जैसे- 'लाल', 'लूटा', 'उल्टा' में 'ल' ध्वनि। 'लाल' में ल् आ के कारण कण्ठस्थान से प्रभावित है, 'लूटा' में ऊ से तथा 'उल्टा' में 'ट' से। इस प्रकार तीनों 'ल' के उच्चारण में अन्तर है।

5. स्वनिम का सम्बन्ध उच्चरित भाषा से है, लिखित भाषा से नहीं। लिखित भाषा में इसी तरह की इकाई लेखिम होती है। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी के though शब्द में स्वनिम केवल दो (द्ओ) हैं, पर लेखिम छ: हैं। इसी तरह अंग्रेजी का 'फ' एक स्वनिम है, पर उसे लिपि में अभिव्यक्त करने के कई लेखिम हैं, जैसे- f-fine, ff-sufficient, ph-philosophy, pph-sapphire, gh-laugh। इस तरह एक ही 'फ' स्वनिम को पाँच प्रकार से लिखा गया है।

6. प्रत्येक भाषा के अपने स्वनिम होते हैं, जो दूसरी भाषा से सर्वथा भिन्न होते हैं। जैसे- हिन्दी का द्वयोष्ठ्य 'फ' अंग्रेजी में नहीं है, वहाँ केवल दंत्योष्ठ्य 'फ' है। हिन्दी का 'अ' वृत्ताकार नहीं है, जबकि बांग्ला के 'अ' ओष्ठ को वृत्ताकार करके बोला जाता है।

7. स्वनिम दो प्रकार के हैं- खण्ड्य और खण्ड्येतर। खंड्य में स्वर और व्यंजन आते हैं, क्योंकि इनको पृथक्-पृथक् किया जा सकता है। खण्डयेत्तर में सुर, मात्रा, बलाघात, संगम, अनुनासिकता आदि हैं। अत: केवल स्वरों और व्यंजनों को ही स्वनिम समझना त्रुटिपूर्ण है।

8. एक ही भाषा का प्रत्येक स्वनिम एक-दूसरे से भिन्न होता है।

स्वनिम की उपयोगिता

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी (भाषा-विज्ञान एवं भाषाशास्त्र) ने इसकी उपयोगिता का उल्लेख इस प्रकार किया है-

(1) स्वनिम-विज्ञान भाषा-शिक्षण की सरलतम वैज्ञानिक पद्धति है। इसमें प्रत्येक भा की प्रचलित वर्णमाला पर ध्यान न देकर केवल मूल ध्वनियों को नोट किया जाता है। इ प्रकार प्रत्येक भाषा में मूल ध्वनियों की संख्या सीमित रह जाती हैं और उन पर सरलता अधिकार करके नवीन भाषा को सरलतम ढंग से सीखा जा सकता है।

(2) स्वनिम-विज्ञान के विश्लेषणों से सिद्ध हुआ है कि विश्व की भाषाओं में कम कम 15 से लेकर अधिक से अधिक 60 स्वनिम पाये जाते हैं। सामान्य रूप से 30 स्वनि का औसत है। इनके शुद्ध ज्ञान से सम्बद्ध भाषा का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

(3) ध्वनि-विज्ञान (फोनेटिक्स) के द्वारा संग्रहित सामग्री का स्वनि-विज्ञान व्यावहारिक उपयोग होता है। संग्रहित ध्वनियों में से स्वनिमों का संकलन किया जाता फोनेटिक्स समुद्र है तो फोनेमिक्स उसमें से निकाले गए रत्न हैं। इन रत्नों की माला (स्वनि माला) ही प्रत्येक भाषा का सर्वस्व है।

(4) स्वनिम-विज्ञान भाषाशास्त्र को एक नवीन व्यावहारिक दृष्टिकोण देता है। भाषा के अनुसार अंश को छोड़कर सार-भाग ग्रहण करने की शिक्षा देता है और अनावश्य विस्तार के स्थान पर सूत्र-रूप में कार्य निर्वाह की विधि बताता है।

(5) स्वनिम-विज्ञान भाषाशास्त्र की नींव है। भाषाशास्त्र के सभी अंग- पद-विज्ञ वाक्य-विज्ञान, अर्थ विज्ञान आदि स्वनिम के ज्ञान पर ही निर्भर हैं। स्वनिम-समूह ही पद ब है और पद-समूह वाक्य। इस प्रकार स्वनिम-विज्ञान पद, वाक्य और अर्थ का बोध क के कारण भाषाशास्त्र की आधारशिला है।

(6) स्वनिम-विज्ञान ही आदर्श वर्णमाला या लिपि के निर्माण में समर्थ है। विश्व सभी भाषाओं के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय लिपि स्वनिम-विज्ञान के आधार पर ही सम्भव जिसमें एक ध्वनि के लिए एक ही संकेत हो तथा एक लिपि-संकेत से एक ध्वनि या स्व का बोध हो।

स्वनिम-विज्ञान के प्रवर्तक के रूप में महर्षि पाणिनि का नाम सादर लिया जा सक है। इन्होंने माहेश्वर सूत्रों के रूप में संस्कृत के स्वनिमों का सर्वांगीण संग्रह किया है। म पाणिनि की पद्धति आज भी विश्व के भाषाशास्त्रियों के लिए आदर्श एवं ग्राह्य है।

स्वनिमक व्यवस्था की समस्याएँ

हिन्दी की स्वनिमक व्यवस्था के कई प्रमुख समस्याएँ हैं, जो उसे शिक्षार्थियों के कठिन बना सकती हैं। ये समस्याएँ निम्नलिखित हैं-

- **स्वर समरूपता**—हिन्दी में कई स्वर होते हैं, जिनमें छोटे, लम्बे, नासिक द्विध्वन स्वर शामिल हैं। इन स्वरों के बीच की समरूपता को समझना और उच्चारण क शिक्षार्थियों के लिए मुश्किल हो सकता है।
- **आस्पिरेटेड और अनास्पिरेटेड व्यंजनों का भेद**—हिन्दी में आस्पिरेटेड अनास्पिरेटेड व्यंजनों का भेद होता है, जैसे कि "प" और "फ", "त" और "थ"। भेद को समझना और उच्चारण करना नए शिक्षार्थियों के लिए मुश्किल हो सकता है।
- **रेट्रोफ्लेक्स व्यंजन**—हिन्दी में रेट्रोफ्लेक्स व्यंजन जैसे कि "ट", "ड", " होते हैं, जो जीभ को मुँह के छत की ओर घुमाकर उत्पन्न होते हैं। इनका सही उच्चा करना शिक्षार्थियों के लिए चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

• **संयुक्त व्यंजनों की उच्चारण की कठिनाई**—हिन्दी में विभिन्न प्रकार के संयुक्त व्यंजन होते हैं, जैसे कि "क्ष", "त्र", "ज्ञ"। इनका सही उच्चारण करना भी शिक्षार्थियों के लिए कठिन हो सकता है।

• **व्यंजन-प्रवृत्ति स्वर**—हिन्दी में कुछ व्यंजन स्वरों के साथ जुड़े होते हैं, जैसे कि "क", "ख", "ग", "घ" आदि। ये स्वर उच्चारण के दौरान शिक्षार्थियों के लिए गलती का कारण बन सकते हैं।

• **विकल्प उच्चारण**—हिन्दी में कुछ शब्दों का उच्चारण वैकल्पिक होता है, जो शिक्षार्थियों के लिए संज्ञान लाने में कठिनाई पैदा कर सकता है।

इन समस्याओं का समाधान समर्पित अभ्यास और सही उच्चारण के माध्यम से किया जा सकता है। शिक्षार्थी और भाषा विद्यार्थियों को इन समस्याओं के समाधान के लिए धैर्य और निरन्तर प्रयास की आवश्यकता होती है। ■

प्रश्न 9. (अ) स्वनिमों का वर्गीकरण कीजिए। **अथवा**
खण्डात्मक स्वनिम एवं अधिखंडात्मक स्वनिम को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

स्वनिमों का वर्गीकरण

स्वनिमों के दो वर्ग किए गए हैं- खण्डात्मक और अधिखण्डात्मक (खण्ड्येतर)।

(I) खंडात्मक—खंडात्मक स्वनिम वे स्वनिम हैं जिनका एक निश्चित अवधि में उच्चारण होता है तथा जो अनुक्रम में प्रयुक्त होते हैं। इसके अलावा इन स्वनिमों के और अधिक खंड व्यावर्तक अभिलक्षणों के रूप में किए जा सकते हैं। इनके मुख्यत: दो भेद किए गए हैं-

1. स्वर—स्वर वे भाषिक ध्वनियाँ हैं, जिनके उच्चारण के समय मुख विवर से प्रश्वास के मार्ग में कोई रुकावट नहीं होती है। स्वरों का उच्चारण स्वतंत्र रूप से किया जाता है। हिन्दी में अंग्रेजी से आगत 'औ' सहित 11 स्वर माने जाते हैं-

अ आ ऑ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

कुछ हिन्दी वैयाकरणों द्वारा 'ऋ' को भी हिन्दी में स्वर के अन्तर्गत रखा जाता है, किन्तु यदि उच्चारण की दृष्टि से देखा जाए तो आज यह स्वर के रूप उच्चरित होने के बजाए 'रि' के रूप में उच्चरित होता है। संस्कृत में इसका उच्चारण स्वर की तरह किया जाता था, किन्तु हिन्दी में यह व्यंजनात्मक हो गया है।

2. व्यंजन—व्यंजन वे भाषिक ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण में मुख विवर में विकार उत्पन्न होता है। अर्थात् इनके उच्चारण में मुख विवर में वायु प्रवाह को कहीं-न-कहीं से बाधित किया जाता है। प्राय: व्यंजनों का स्वतंत्र रूप से उच्चारण नहीं किया जाता। कोई भी व्यंजन किसी-न-किसी स्वर के साथ जुड़कर ही उच्चरित होता है।

हिन्दी में निम्नलिखित व्यंजन हैं-

क ख ग घ ङ	क़ ख़ ग़
च छ ज झ ञ	
ट ठ ड ढ ण	ड ढ
त थ द ध न	
प फ ब भ म	फ़
य र ल व	
श ष स ह	ज़

नोट–ध्यान दें कि हिन्दी वर्णमाला में पाए जाने वाले 'क्ष, त्र, ज्ञ' संयुक्त वर्ण हैं, दो स्वनिमों के मिलने से बने हैं, जैसे- क्ष = क् + ष, त्र = त् + र, ज्ञ = ज् + ञ। अत: हिन्दी व्यंजनों की सूची मे इन्हें स्थान नहीं दिया जा सकता है। लिखित रूप अलग होने के कारण इन्हें वर्णमाला में रखा जाता है।

इनमें अरबी फारसी से ली गई कुछ आगत ध्वनियाँ तथा देशज ध्वनियाँ भी हैं, जिन्हें पूर्व में प्राप्त निकटतम हिन्दी स्वनिमों के उपस्वनों के रूप में रखा जा सकता है। इस प्रकार स्वनिम-उपस्वन युग् इस प्रकार बनाए जा सकते हैं-

(क) → क, क़ (ख) → ख, ख़
(ग) → ग, ग़ (ज) → ज, ज़
(ढ) → ढ, ढ़ (ड) → ड, ड़
(फ) → फ, फ़

कुछ शब्दों में अरबी/फारसी के स्वनिमों के होने या न होने के कारण अर्थभेद भी होता है, जैसे- राज = राज्य करने की अवस्था या शासन, राज़ = रहस्य। ऐसी स्थिति में इन्हें दो स्वतंत्र स्वनिम भी माना जा सकता है।

स्वर और व्यंजन के रूप में प्राप्त होने वाले खंडात्मक स्वनिमों का विविध आधारों पर वर्गीकरण भी किया जाता है। स्वन विज्ञान में यह वर्गीकरण मुख्य रूप से 'उच्चारण स्थान' और 'उच्चारण प्रयत्न' आदि के आधार पर किया जाता है। स्वरों के वर्गीकरण हेतु डैनियल जोन्स द्वारा 'मानस्वरों का एक चतुर्भुज' दिया गया है जिसमें उन्हें चिन्हित किया जा सकता है।

नोट–हिन्दी में प्रयुक्त अनुस्वार (ं) अनुनासिक (ँ) और विसर्ग (:) अतिरिक्त लक्षण है, जो किसी भी स्वर या व्यंजन के साथ प्रयुक्त होने की योग्यता (कुछ विशेष परिस्थितियों को छोड़कर, जैसे- 'ह' के बाद विसर्ग नहीं आता।) रखते हैं। इसलिए इन्हें भी मूल स्वनिमों की उपर्युक्त सूची में स्थान नहीं दिया गया है।

(II) अधिखंडात्मक (खंड्येतर)–स्वनिमों का भाषा व्यवहार में प्रयोग करते समय उनके साथ कुछ ऐसे भाषित तत्व भी आ जाते हैं, जो स्वयं 'स्वन' या 'ध्वनि' नहीं होते, किन्तु शब्द या वाक्य पर उनका प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। ऐसे भाषिक अभिलक्षणों को अधिखंडात्मक अभिलक्षण या स्वनगुणिक अभिलक्षण कहा जाता है। भाषा व्यवहार में ये अभिलक्षण शब्दों और वाक्यों के साथ जुड़कर आते हैं और अभिव्यक्ति को प्रभावित करते हैं या अभिव्यक्ति के अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं। इस प्रकार के कुछ प्रमुख अधिखंडात्मक अभिलक्षण निम्नलिखित हैं-

1. मात्रा–किसी स्वन के उच्चारण में लगने वाली समयावधि को मात्रा कहते हैं। कुछ स्वनों के उच्चारण में कम समय लगता है और कुछ के उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक। इस दृष्टि से भारतीय वैयाकरणों द्वारा मात्रा के तीन स्तर बताए गए हैं-

(क) ह्रस्व–यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की कम मात्रा है, जैसे- अ, इ, उ आदि।

(ख) दीर्घ–यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की अपेक्षाकृत अधिक मात्रा है, जैसे- आ, ई, ऊ आदि।

(ग) प्लुत—यह किसी स्वन में उच्चारण में लगने वाले समय की बहुत अधिक मात्रा है। संस्कृत के 'ओठम्' का 'ओउ' इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। हिन्दी में कोई प्लुत स्वन नहीं है।

2. बलाघात–भाषा व्यवहार में किसी 'अक्षर' पर कम या अधिक बल देने की अवस्था बलाघात है। सामान्यत: बलाघात किसी स्वन विशेष पर न होकर अक्षर पर ही होता है। जिस अक्षर पर अधिक बलाघात होता है, उसका स्वर उच्च होता है। इसे मशीन में चित्रात्मक रूप से या 'डेसिबल' से मापकर तुलनात्मक रूप से स्पष्ट देखा जा सकता है। बलाघात के कम या अधिक होने के कारण शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के 'Present' शब्द को देखा जा सकता है, जिसके पहले अक्षर पर बलाघात होने पर इसका अर्थ उपहार और दूसरे अक्षर पर बलाघात होने पर इसका अर्थ प्रस्तुत करना होता है। वाक्य स्तर पर भी उच्चारण में किसी शब्द-विशेष पर बल दिया जाता है, जैसे- मोहन घर जाओ। वाक्य में यदि घर शब्द पर बल दिया गया ह तो इसका अर्थ हुआ कि घर ही जाओ, कहीं और नहीं।

3. सुर और अनुतान—इनका सम्बन्ध स्वरतंत्रियों के कम्पन में अन्तर से है। स्वरतंत्रियों मे कम्पन होने को तान कहा जाता है, जिसे हर्ट्ज़ में मापा जाता है। कम्पन की अधिकता और कमी अथवा सामान्य स्थिति के आधार पर इनके उच्च, निम्न और सम तीन भेद किए जा सकते हैं। कम्पन्न में यह अन्तर जव शब्द स्तर पर होता है तो इसे 'सुर' और जव वाक्य स्तर पर होता है तो इसे 'अनुतान' कहते हैं। शब्द या वाक्य का उच्चारण करते समय सुर या अनुतान में अन्तर होने से अभिप्राय वदल जाता है। इसके अलावा इस अन्तर के आधार पर वक्ता की मनस्थिति का भी अनुमान किया जा सकता है।

4. संहिता—शब्द अथवा वाक्य के उच्चारण में दो अक्षरों के वीच सीमा को व्यक्त करने वाली इकाई 'संहिता' है। यदि यह सीमा स्पष्ट न हो तो अर्थबोध प्रभावित होता है और कई वार तो अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना बनी रहती है, जैसे-

(क) (मैंने) यह दवाई पी ली है।	यह दवाई पीली है।
(ख) लड्डू वंद रखा गया।	लड्डू बन्दर खा गया।
(ग) उसे रोको मत, जाने दो।	उसे रोको, मत जाने दो।

इनमें अक्षर के सीमांकन और विराम के कारण अर्थ पूर्णत: परिवर्तित हो जा रहा है। लेखन में यह अन्तर समझ में आ जाता है, क्योंकि दो शब्दों के वीच खाली स्थान होता है, परन्तु उच्चारण में हम लगातार वोलते हैं। इसलिए श्रोता का मस्तिष्क सम्भावित विरामों के आधार पर दो शब्दों को अलगाता है। इसे भाषा प्रयोगशाला में उच्चरित वाक्य की ध्वनि तरंग को देखकर सफलतापूर्वक समझा जा सकता है। ■

प्रश्न 10. शब्द संरचना से आप क्या समझते हैं? उपसर्ग, प्रत्यय एवं समास को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

शब्द संरचना

'शब्द' एक धातु है जिसका अर्थ है शब्द करना अर्थात् बोलना। इसस प्रकार जिससे बोलने का अर्थ ज्ञान हो, वही शब्द है। वंशानुक्रम की दृष्टि से पद से छोटी इकाई शब्द है। विशुद्ध रूप से शब्द-व्युत्पत्ति को ही शब्द-रचना कहा जायेगा। इस प्रकार शब्द-रचना की परिधि में यौगिक शब्द ही आते हैं, न कि रूढ़ शब्द। शब्द-रचना से यही परिभाषित होता

है कि प्रचलित शब्द भाषा के अन्य प्रचलित शब्द से किस प्रकार बना हुआ है। शब्द संरचना के सम्बन्ध में कामता प्रसाद गुरु कहते हैं- "एक ही भाषा के किसी शब्द से जो दूसरे शब्द बनते हैं, वे बहुधा तीन प्रकार से बनाए जाते हैं। किसी-किसी शब्द के पूर्व एक-दो अक्षर लगाने के लिए शब्द बनाये जाते हैं और किसी-किसी शब्द के पश्चात् एक-दो अक्षर लगाकर नये शब्द बनाये जाते हैं और किसी-किसी शब्द के साथ दूसरा शब्द मिलने से नये संयुक्त शब्द तैयार होते हैं।" साधारणतया इसे उपसर्ग, प्रत्यय, समास जैसा नाम दिया जाता है।

उपसर्ग—उपसर्ग उस भाषिक इकाई को कहते हैं, जिसका भाषा विशेष में स्वतंत्र प्रयोग न होता हो, किन्तु जिसे विभिन्न प्रकार के शब्दों के आरम्भ में जोड़कर शब्द-रचना की जाती हो। जैसे सुनिश्चित। यहाँ 'सु' उपसर्ग है। हिन्दी में आए हुए उपसर्गों में तत्सम, तद्भव तथा इतर भाषीय है। इनका विवेचन निम्न हैं-

तत्सम—हिन्दी में बहुत से संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग होता है। उन शब्दों में संस्कृत के उपसर्ग व्यवहृत होते हैं। इस दृष्टि से संस्कृत स्त्रोत से आय उपसर्गों का विवरण निम्न है-

प्र	-	(अधिक) प्रयत्न, प्रख्यात, प्रबल, प्रक्रिया, प्रगति।
परा	-	(पीछे, उल्टा) परभाव, पराक्रम, पराजय।
अप	-	(दूर या बुरा) अपमान, अपकर्ष, अपरूप, अपकृति।
सम्	-	(साथ, पूर्णता), सम्मान, सम्पूर्ण, सम्मोहन, संविधान।
अनु	-	(अनुसारता अथवा साथ) अनुगमन, अनुरूप, अनुगत, अनुमान।
अव	-	(विरोध एवं विकृति) अवचेतन, अवशेष, अवगुण, अवरूद्ध।
निस्	-	(बिना, बाहर) निस्तार, निष्कासन, निस्सन्देह।
निर	-	(बाहर) निर्जन, निरपराध, निर्दोष, निर्गम।
दुस्	-	(कठिन) दुस्सह, दुष्काल।
दुर्	-	(बुरा) दुर्गध, उदुर्गुण, दुर्गम, दुर्लभ।
अति	-	(अधिक, उल्लंघन) अतिरिक्त, अत्याधिक, अत्यंत।
अधि	-	(विशिष्टता, अधिकता) अधिनियम, अधिमास, अधिभौतिक।
अभि	-	(विशिष्टता, उन्मुखता) अभिमत, अभ्यंतर, अभीष्ट।
अपि	-	(निकट) अपिधान, अपिकर्ण।
उप्	-	(नैकट्य सहकार्य, लघुता) उपनगर, उपमंत्री, उपनाम, उपजाति।
प्रति	-	(ओर, उल्टा) प्रतिकार, प्रतिगमन, प्रतिष्ठा।
वि	-	(अभाव एवं विशिष्टता) विक्र, विज्ञान, विनाश।
नि	-	(नीचे) निक्षेप, निपात।
सु	-	(श्रेष्ठता) सुगंध, सुकर्ण, सुगम।
परि	-	(परिधि, पूर्णता) परिजन, परिवर्तन, परितोष।

कुछ अव्यय और विशेषण भी उपसर्गों की भाँति व्यवहार में लाये जाते हैं-

अन्नत	-	अन्तर्धान, अन्तर्हित।
अलं	-	अलंकार।
आवि	-	आविर्भाव।
तिर	-	तिरोहित, तिरोधान।

कु – कुसंग।
किं – किंचित।
चिर – चिरायु।
तद् – तदकार।
पुनः – पुनर्विवाह, पुनर्मिलन।

तद्भव—ये उपसर्ग हिन्दी के तद्भीय शब्दों के साथ प्रयुक्त होते हैं। वस्तुतः ये उपसर्ग संस्कृत से आकर हिन्दी के अपने हो गए हैं। इनका विवेचन निम्न हैं-

अन् – (नहीं) अनभल, अनबन, अनजान।
कु – (विकृति) कुचाल, कुसाज।
उन् – (एक कम या एक नहीं) उजड्ड, उचक्का, उन्नीस, उनतीस।
अध – (आधा) अधपका, अधेसरा।
औ – (हीनता) औघट, आँगुन।
क – (हीनता) कपूत।
दु – (बुराई) दुबला, दुकाल।
नि – (अभावद्योतक) निहत्था, निडर।
भर – (पूर्णत्वबोधक) मरकस, भरपेट।
सवा – (चौथाई अधिक) सवा पाँ, सवा सात।

इतरभाषीय उपसर्ग—ये उपसर्ग अरबी-फारसी तथा अंग्रेजी से आये हुए हैं। इनमें अरबी-फारसी उपसर्गों की संख्या अधिक है।

अरबी-फारसी

कम – (हीनत्वबोधक) कमजोर, कम उम्र।
ना – (अभाव तथा निषेध), नापसंद, नामंजूर।
फी – (प्रत्येक) फी आदमी।
बद – (विकृति) बदनाम, बदचलन।
बे – (अभाव) बेइमान।
ला – (अभाव) लावारिस, लापरवाह।
गैर – (नकारात्मक) गैरवाजिब।
दर – (मे) दर किनार, दर असल।
ब – (से) बदस्तूर, बखूबी।

अंग्रेजी

डिप्टी – (उप) डिप्टी कलेक्टर, डिप्टी कमिश्नर।
वाइस – (उप) वाइस चांसलर।
सब – (उप) सबडिवीजन।
हॉफ – (आधा) हॉफ पैण्ट, हॉफ शर्ट।
हेड – (प्रधान) हेड मास्टर, हेड क्लर्क।

प्रत्यय—शब्दों के पश्चात् जो अक्षर व अक्षर-समूह लगाया जाता है, उसे प्रत्यय कहते हैं। भाषिक व्यवस्था में प्रत्यय का महत्व निर्विवाद है, प्रत्ययों के सहयोग से हो आशय तथा अर्थ, अनेकानेक शब्दों के रूप में प्रकट हो भाषा को समर्थ बनाते हैं।

प्रत्यय के कई भेद किए जाते हैं। कुछ लोक प्रत्यय को देशी और विदेशी भेदों में बाँटते हैं और कुछ लोग संस्कृत की परिपाटी को मानते हुए प्रत्यय को कृत तथा तद्धित के रूप में विभाजन करते हैं, किन्तु स्वीकृत परिपाटी का समग्रत: अनुपालन हिन्दी प्रत्यय परम्परा में कुछ व्यावहारिक नहीं लगता है, क्योंकि ऐसे भी प्रत्यय हैं, जो कृत और तद्धित दोनों ही रूपों में प्रयुक्त होते हैं। जैसे- आई। प्रस्तुत प्रत्यय से पढ़ाई (कृत) तथा चतुराई (तद्धि) दोनों ही बनते हैं, क्योंकि पढ़ना धातु है और चतुर शब्द है।

हिन्दी भाषाविदों ने प्रयोग के अर्थ को दृष्टि में रखकर प्रत्यय के निम्न भेद किए हैं-

(1) संज्ञा विधेयक, (2) विशेषण विधेयक, (3) क्रिया विधेयक, (4) क्रिया विशेषण विधायक, (5) स्त्री प्रत्यय आदि। हिन्दी प्रत्ययों को निम्नत: विवेचित किया जा सकता है-

संज्ञा विधेयक प्रत्यय—इन प्रत्ययों में देशी-विदेशी दोनों का समावेश है, क्योंकि हिन्दी भाषा में उपसर्गों की भाँति अरबी-फारसी के प्रत्यय भी प्रविष्ट हो चुके हैं। संज्ञा विधायक प्रत्यय के कुछ उदाहरण निम्न हैं-

देशी	प्रत्यय	शब्द
	-अ क	पाठक
	-अ त	खपत
	-अ ट	जीवन
	-अ न	चलन, सड़न
	-अन् त	रटन्त, गढ़न्त
	-आ न	थकान
	-आ ई	लड़ाई
	-आ र	लोहार, चमार, कुम्हार
	-आ रा	निपटारा
	-आरी	भिखारी
	-आ स	मिठास
	-आ व	छलाव, छिड़काव, बचाव
	-आ वा	पछतावा
	-आ व न	बिछावन
	-आ व ट	लिखावट
	-आ ह ट	गरमाहट
	-ई	बोली, हँसी
	-ऐ त	लठैत
	-औ ता	समझौता
	-प न	लड़कपन, बाल्पन
	-ता	सुन्दरता
	-त् व	वीरत्व
	-नी	करनी
	-वा न	हाथीवान
	-वा रा	बंटवारा

	-शा ला	धर्मशाला इत्यादि।
विदेशी	प्रत्यय	शब्द
	-इ श	आजमाइश
	-इ य त	इन्सानियत
	-का र	पेशकार
	-खा ना	छापाखाना
	-गी र	राजगीर, रहगीर
	-दा न	पायदान
	-दा नी	मच्छरदानी
	-नी व	अर्जीनवीस
	-बन्द	बिस्तरबन्द
	-वा र	माहवार

विशेषण विधेयक प्रत्यय—विशेषण विधायक प्रत्यय उन्हें कहते हैं, जहाँ प्रत्ययों के संयोग से विशेषण शब्दों की निर्मिति हो। यथा-

-अक्कड़	पियक्कड़, घुमक्कड़
-ओड	हँसोड
-इयल	सडियल
-आउ	बिकाऊ
-ए क	तीनेक
-इ या	दुखिया
-औ टा	कजरौटा
- थ।	चौथा
- ला	पिछला इत्यादि।

क्रिया विधेयक प्रत्यय—इन प्रत्ययों के योग से क्रिया पदों की रचना होती है। यथा-

-अ	=	तैरा, जगा, घुमा
-वा	=	पड़ता, पिलवा आदि।

समास—समास का अर्थ है- संक्षेप में कहना।

परिभाषा—दो या दो से अधिक शब्दों के योग से नवीन सार्थक शब्द बनाने की प्रक्रिया को समास कहते हैं। जैसे- घोड़ों की दौड़ - घुड़दौड़।

समस्त पद—दो या दो से अधिक शब्दों के मेल से नये और सार्थक शब्द समस्त ले कहलाते हैं।

पूर्व पद और उत्तर पद—समस्त पद का पहला पद पूर्व पद व दूसरा पद उत्तर पद कहलाता है। जैसे- समस्त पद - घुड़दौड़ पूर्व पद - घुड़ उत्तर पद - दौड़

समास विग्रह—समस्त पद के पदों को अलग-अलग करने की प्रक्रिया समास विग्रह कहलाती है।

समास के भेद-1. अव्ययीभाव समास—अव्यय का अर्थ है- जिन शब्दों में लिंग, वचन, कारक और काल के अनुसार कोई परिवर्तन न हो अर्थात् जिस सामासिक पद का प्रथम पद अव्यय होता है, उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। जैसे- आजन्म - जन्मभर

2. तत्पुरुष समास—जिस समास में उत्तर पद प्रमुख होता है तथा समस्त पद बनाते समय शब्द-समूहों के बीच कारक चिन्हों का लोप होता है, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं।

जैसे- यशप्राप्त - यश को प्राप्त

3. कर्मधारय समास—जिस समास का दूसरा पद प्रधान (प्रमुख) होता है और दोनों पदों में एक विशेषण और एक विशेष्य अथवा उपमेय-उपमान का सम्बन्ध होता है, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। जैसे- महादेव - महान है जो देव।

4. द्विगु समास—जिस समास का प्रथम पद संख्यावाचक होता है तथा समस्त पद किसी समूह का बोध कराते हैं, उसे द्विगु समास कहते हैं। जैसे- नवरत्न - नौ रत्नों का समूह।

5. द्वंद्व समास—इस समास में दोनों पद प्रधान होते हैं। विग्रह करने पर योजक (जोड़ने वाले) शब्दों का प्रयोग किया जाता है। जैसे- रात-दिन - रात और दिन।

6. बहुब्रीहि समास—जिस समास में कोई भी पद प्रधान नहीं होता, बल्कि दोनों पद मिलकर किसी तीसरे अर्थ को प्रकट करते हैं, उसे बहुब्रीहि समास कहते हैं।

जैसे- मीनाक्षी - मीन (मछली) के समान आँखों वाली - विशेष स्त्री। ■

प्रश्न 10. (अ) हिन्दी की रूप संरचना से आप क्या समझते हैं? हिन्दी की व्याकरणिक कोटियों को स्पष्ट कीजिए। अथवा लिंग, वचन एवं कारक को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

रूप संरचना

ध्वनियों के योग से शब्द या पद बनते हैं और शब्दों के योग से 'वाक्य' बनते हैं। 'शब्द' किसी भाषा की वह इकाई है, जो स्वतंत्र रूप से अर्थ का वहन करती है। उदाहरण के लिए- पुस्तक, मेज शब्दों के स्वतंत्र अर्थ हैं। इन्हें मिलाकर वाक्य बनाया जा सकता है, किन्तु केवल शब्दों का योग वाक्य नहीं होता। जब शब्दों को वाक्य में प्रयुक्त किया जाता है, तो उनमें कुछ व्याकरणिक परिवर्तन किए जाते हैं, जिससे संप्रेषणीय वाक्य की रचना होती है। इन परिवर्तनों के बाद शब्द पद में बदल जाते हैं।

रूप संरचना और व्याकरणिक कोटियाँ

शब्दों से जब शब्द रूपों (पदों) का निर्माण किया जाता है, तो शब्द में शाब्दिक अर्थ के साथ-साथ कुछ अन्य व्याकरणिक सूचनाएँ भी जुड़ जाती हैं। ये सूचनाएँ व्याकरणिक कोटियों (लिंग, वचन, पुरुष, काल, पक्ष, वृत्ति आदि) से सम्बन्धित होती हैं। शब्द के मूल रूप में भी इनसे सम्बनधित कुछ सूचनाएँ रहती हैं, किन्तु वाक्य में प्रयोग होने पर उनमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन हो जाता है। अत: रूप साधन शब्दों में व्याकरणिक सूचनाओं के अनुरूप परिवर्तन करने की प्रक्रिया है। अत: रूप संरचना में रूप साधन हेतु विभिन्न प्रकार के शब्दों के साथ लगने वाले प्रत्ययों आदि का अध्ययन करने पूर्व व्याकरणिक कोटियों का ज्ञान आवश्यक है। व्याकरणिक कोटि की सूचना में परिवर्तन से शब्द का रूप परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित वाक्य को देखें-

- बच्चा खाना खाता है।
- बच्चे खाना खाते हैं।

उपर्युक्त वाक्यों में बच्चा और बच्चे शब्द बच्चा कोशीय शब्द के दो रूप हैं, जो दो अलग-अलग वाक्यों में प्रयुक्त हुए हैं। इनमें शब्द के साथ ही लिंग और वचन सम्बन्धी

सूचनाएँ निहित हैं। बच्चा शब्द एकवचन पुल्लिग है, जबकि बच्चे शब्द बहुवचन पुल्लिग है। इसी प्रकार क्रिया और विशेषण आदि विकारी शब्दवर्गों के शब्दों का भी वाक्य में प्रयोग होने पर उनके साथ व्याकरणिक कोटियों की सूचना आ ही जाती है। यहाँ ध्यान रखने वाली बात है कि यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक शब्द पर सभी व्याकरणिक कोटियों का प्रभाव हो ही। शब्द के वर्ग और उनकी प्रकृति के अनुसार सम्बन्धित व्याकरणिक कोटि का प्रभाव पड़ता है और उसका रूप परिवर्तित होता है। हिन्दी की रूप संरचना को प्रभावित करने वाली व्याकरणिक कोटियाँ इस प्रकार हैं-

(क) लिंग—प्राणियों की वह प्रकृति जिससे उनके नर या मादा होने का बोध होता है, प्राकृतिक लिंग है। भाषा में इसका बोधन व्याकरणिक लिंग है। मूल रूप से लिंग के तीन प्रकार किए जा सकते हैं- पुरुष, स्त्री और अन्य। इस आधार पर तीन लिंग होते हैं- पुल्लिग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग, किन्तु कुछ भाषाओं में कुछ शब्द ऐसे भी होते हैं, जिनसे पुरुष और स्त्री दोनों प्रकार लिंगों का बोध होता है, जिन्हें उभयलिंग कहते हैं, किन्तु इन चार लिंगों का सभी भाषाओं में पाया जाना आवश्यक नहीं है। सभी भाषाएँ अपनी-अपनी प्रकृति और समाज-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के अनुरूप लिंगों का बोध कराती हैं।

हिन्दी में दो लिंग पाए जाते हैं- पुल्लिग और स्त्रीलिंग। अत: इसमें नर और मादा के अलावा अन्य प्रकार के सभी शब्दों को भी इन्हीं दो लिंगों में विभक्त करके देखा जाता है। हिन्दी में लिंग के आधार पर संज्ञा, विशेषण और क्रिया के रूप प्रभावित होते हैं।

(ख) वचन—वाक्य में प्रयुक्त शब्द द्वारा होने वाला उसकी संख्या का बोध वचन है। अधिकांश भाषाओं में वचन का विभाजन एक और अनेक दो रूपों में किया जाता है। इस आधार पर वचन के दो प्रकार होते हैं- एकवचन और बहुवचन। हिन्दी में भी यही स्थिति पाई जाती है। यद्यपि संस्कृत जैसे भाषाओं में द्विवचन भी प्राप्त होता है, किन्तु हिन्दी में केवल दो ही वचन हैं। वचन के आधार पर भी हिन्दी में संज्ञा, विशेषण और क्रिया के रूप प्रभावित होते हैं। हिन्दी में 'संज्ञा' शब्दों की रूपरचना को वचन के साथ-साथ परसर्ग भी प्रभावित करते हैं।

(ग) पुरुष—पुरुष द्वारा यह ज्ञात होता है कि भाषिक उक्ति वक्ता के संबद्ध है या श्रोता से अथवा किसी अन्य से। यह व्याकरणिक कोटि शब्दवर्गों (या शब्दभेदों) में मुख्यत: सर्वनाम से सम्बन्धित है। सभी संज्ञा शब्द सदैव अन्य पुरुष में होते हैं। पुरुष के तीन प्रकार हैं- उत्तम पुरुष या प्रथम पुरुष, मध्यम पुरुष, अन्य पुरुष। हिन्दी सर्वनाम तीनों पुरुषों में एकवचन और बहुवचन दोनों रूपों में पाए जाते हैं, जैसे- मैं, हम, तुम, तुम लोग, वह, वे आदि।

(घ) कारक—कारक सम्बन्ध है, जो वाक्य की मुख्य क्रिया को वाक्य में आए संज्ञा पदबंधों से जोड़ता है। यह पदबंध स्तर की इकाई है। कारक को व्यक्त करने के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रत्यय, शब्द आदि प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी में इन कारक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति परसर्गों के माध्यम से होती है। संस्कृत में विभक्तियों द्वारा कारकों की अभिव्यक्ति होती थी। इसी कारण कुछ वैयाकरणों द्वारा परसर्गों को विभक्ति नाम दिया गया है। संज्ञाओं के साथ परसर्ग अलग लिखे जाते हैं और सर्वनामों के साथ जोड़कर। किन्तु परसर्गों का प्रयोग होने पर संज्ञाओं के रूप भी बदलते हैं, जैसे- लड़का का बहुवचन रूप 'लड़के' है जो परसर्ग लगने पर 'लड़कों' हो जाता है। ■

प्रश्न 11. संज्ञा एवं सर्वनाम से आप क्या समझते हैं? इनके प्रकारों को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

संज्ञा और उसके प्रकार

किसी व्यक्ति, प्राणी, वस्तु, स्थान, गुण, धर्म, भाव आदि का बोध कराने वाले शब्दों को संज्ञा कहते हैं। कुछ संज्ञा शब्द प्राणिवाचक होते हैं और कुछ अप्राणिवाचक। राधा, मोहन, बंदर, घोड़ा आदि प्राणिवाचक हैं और पुस्तक, मेज, हिमालय, नदी आदि अप्राणिवाचक हैं।

कुछ संज्ञाओं को गिना जा सकता है। इन्हें गणनीय संज्ञाएँ कहते हैं- जैसे- मेज, कुर्सी, मनुष्य हाथी। कुछ संज्ञाओं को गिना नहीं जा सकता। इन्हें अगणनीय संज्ञाएँ कहते हैं, जैसे- आग, सच्चाई, प्यार, वायु।

संज्ञा का अर्थ है- नाम। इस प्रकार नाम वाले शब्द संज्ञा कहलाते हैं।

संज्ञा के भेद—संज्ञा के तीन भेद माने जाते हैं- व्यक्तिवाचक संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा, भाव वाचक संज्ञा।

व्यक्तिवाचक संज्ञा—जो शब्द किसी विशेष व्यक्ति, स्थान या वस्तु का बोध कराते हैं, उन्हें व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे-

व्यक्ति—रमेश, रहमान, शीला, मीरा, विलियम आदि।

स्थान—भारत, चीन, रूस, इंग्लैंड, ईरान, दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, केरल, अमेरिका, चिड़ियाघर प्रगति मैदान आदि।

वस्तु—गंगा (नदी), हिमालय (पहाड़), चेतक (घोड़ा), गीता (ग्रंथ), हिन्द महासागर आदि।

जातिवाचक संज्ञा—जो शब्द किसी जाति, धर्म, प्राणि, वस्तु के पूरे समूह का बोध कराते हैं, उन्हें जातिवाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे- मनुष्य, घोड़ा, पहाड़, नदी, सोना, लोहा।

जातिवाचक संज्ञा के दो उपभेद हैं—द्रव्यवाचक संज्ञा और (ख) समूहवाचक संज्ञा। कुछ विद्वान इन दोनों भेदों को संज्ञा के भीतर रखकर संज्ञा के पाँच भेद बताते हैं, किन्तु ये दोनों उपभेद जातिवाचक संज्ञा के अन्तर्गत आते हैं और ये दोनों एक प्रकार से जाति का ही बोध कराते हैं। अत: इन्हें जातिवाचक संज्ञा के उपभेद के रूप में रखना उचित होगा।

(क) द्रव्यवाचक संज्ञा—इससे ऐसे द्रव्यों, पदार्थों अथवा सामग्री का बोध होता है, जिससे अनेक वस्तुएँ बनती हैं। इसे पदार्थवाचक संज्ञा भी कहते हैं, जैसे-

लकड़ी- (फर्नीचर आदि के लिए),
सोना-चाँदी- (आभूषणों के लिए), लोहा, पीतल,
स्टील- (बर्तनों आदि के लिए),
ऊन- (स्वेटर आदि के लिए)।

द्रव्यवाचक संज्ञा शब्दों का प्रयोग प्राय: एक वचन में होता है और ये शब्द गणनीय नहीं होते।

(ख) समूहवाचक संज्ञा—जो संज्ञा पद किसी एक व्यक्ति के वाचक न होकर समूह या समुदाय का बोध कराते हैं, जैसे- सेना, पुलिस, भीड़, मेला, सभा, कक्षा, दल।

इन शब्दों का प्रयोग एक वचन में होता है, क्योंकि ये एक ही जाति के सदस्यों के समूह को एक इकाई के रूप में व्यक्त करते हैं।

भाववाचक संज्ञा—जो शब्द धर्म, गुण, भाव, स्वभाव, अवस्था आदि का बोध कराते हैं उन्हें भाववाचक संज्ञा कहते हैं, जैसे- लम्बाई, बचपन, अहिंसा, भय, खटास, आलस्य।

भाववाचक संज्ञाएँ पाँच प्रकार के शब्दों से बनती हैं- जातिवाचक संज्ञा से, सर्वनाम से, विशेषण से, क्रिया विशेषण से और अव्यय से। उदाहरण के लिए,

जातिवाचक संज्ञा	**भाववाचक संज्ञा**
बच्चा	बचपन
बूढ़ा	बुढ़ापा
मनुष्य	मनुष्यत्व
इन्सान	इन्सानियत
मित्र	मित्रता
शत्रु	शत्रुता
भाई	भाईचारा
ठग	ठगी
सर्वनाम	**भाववाचक संज्ञा**
अपना	अपनापन, अपनत्व
निज	निजत्व
विशेषण	**भाववाचक संज्ञा**
मीठा	मिठास
खट्टा	खटास
काला	कालापन
गरम	गरमी
सुंदर	सुंदरता
गहरा	गहराई
क्रिया	**भाववाचक संज्ञा**
पढ़ना	पढ़ाई
दौड़ना	दौड़
सजाना	सजावट
घबराना	घबराहट
हँसना	हँसी
उड़ना	उड़ान
अव्यय	**भाववाचक संज्ञा**
शीघ्र	शीघ्रता
मना	मनाही
समीप	समीपता, सामीप्य

सर्वनाम एवं उसके प्रकार

मोहन मेरा भाई है। वह दसवीं कक्षा में पढ़ता है। वह अपनी कक्षा में प्रथम आता है। बाद के वाक्यों में मोहन के स्थान पर 'वह' पद का प्रयोग हुआ है। यहाँ संज्ञा 'मोहन' के स्थान पर जिस पद 'वह' का प्रयोग हुआ है, वह सर्वनाम है।

अत: जिस शब्द या पद का प्रयोग सभी प्रकार के नामों अर्थात् संज्ञाओं के लिए अथवा उनके स्थान पर होता है, उसे सर्वनाम कहते हैं।

इस प्रकार भाषा में सहजता, स्वाभाविकता, संक्षिप्तता, सुन्दरता, सरलता तथा सुविधा लाने के लिए सर्वनाम का प्रयोग होता है। बोलने वाले व्यक्ति के नाम के स्थान पर 'मैं', 'हम' सर्वनामों का प्रयोग होता है, जिस व्यक्ति से बात की जा रही है, उसके नाम के स्थान पर 'तू', 'तुम', 'आप' सर्वनामों का प्रयोग होता है और जिसके सम्बन्ध में बात की जा रही है, उसके नाम के स्थान पर 'यह', 'वह', 'वे' सर्वनामों का प्रयोग होता है।

सर्वनाम के भेद—सर्वनाम के छह भेद होते हैं-

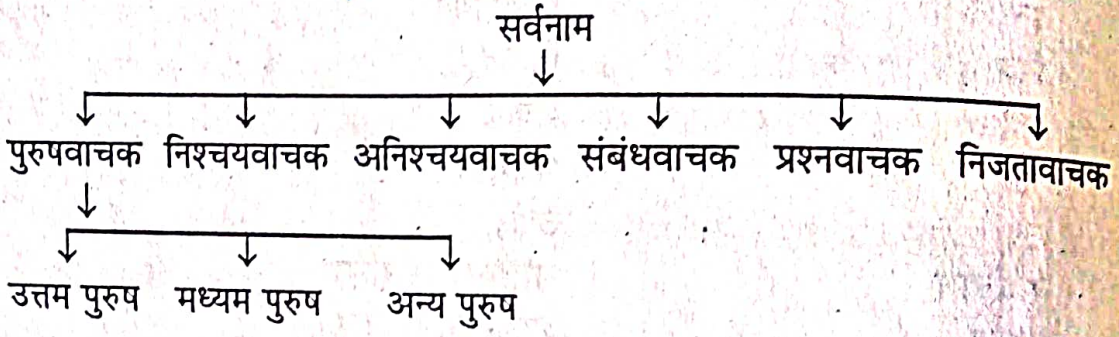

पुरुषवाचक सर्वनाम—जो सर्वनाम किसी पुरुष के लिए प्रयोग में आता है, उसे पुरुषवाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे- मैं, तु, वह।

पुरुषवाचक सर्वनाम तीन प्रकार के होते हैं-

(क) उत्तम पुरुष—बात कहने वाले को उत्तम पुरुष कहते हैं, जैसे- मैं, हम।

(ख) मध्यम पुरुष—जिससे बात कही जाए, वह मध्यम पुरुष है, जैसे- तू, तुम, आप।

(ग) अन्य पुरुष—जिसके सम्बन्ध में बात कही गई हो, वह अन्य पुरुष हैं, जैसे- वह, यह, वे, ये।

बहुवचन के लिए तुम, आप, वे, ये का प्रयोग आदरसूचक एकवचन के रूप में होता है, इसलिए आप, वे, ये के साथ लोग शब्द लगा दिया जाता है। कुछ लोग हम के साथ लोग लगा देते हैं, जो सही नहीं है, जैसे-

- तुम लोग कहाँ थे ?
- आप लोग भोजन कीजिए।
- ये लोग चले गए।
- हम लोग अभी स्कूल आए हैं।

निश्चयवाचक सर्वनाम—जिस सर्वनाम से किसी वस्तु का निश्चित बोध होता है, वह निश्चयवाचक सर्वनाम होता है, जैसे- यह, वह, ये, वे।

यह मछली मेरी है। वह पुस्तक अच्छी है।

यहाँ यह और वह निश्चयवाचक सर्वनाम का काम कर रहे हैं, न कि अन्य पुरुष सर्वनाम का।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम—जिस सर्वनाम से किसी वस्तु का निश्चित बोध नहीं होता, उसे अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे- किसी, कुछ कोई।

किसी को बुलाओ। घी में कुछ मिला है।

संबंधवाचक सर्वनाम—जिस सर्वनाम से दो वस्तुओं अथवा व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध प्रकट होता है, उसे संबंधवाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे-

जो लड़का कल आया था।
वह पढ़ने में तेज है।
जो बोओगे, सो काटोगे।
जो तुम चाहो, वह करो।

प्रश्नवाचक सर्वनाम—जिस सर्वनाम से प्रश्न का वोध होता है, उसे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं, जैसे- कौन, क्यों, क्या, कैसे।

यहाँ कौन है? वो मुझे नहीं जानता? वह यहाँ क्यों खड़ी है?
वह क्या चाहता है तुम कैसे आए?

निजवाचक सर्वनाम—जिस सर्वनाम से कर्त्ता का बोध होता है, वह निजतावाचक सर्वनाम होता है, जैसे-

आप जैसा समझें, करें। वह क्या आप ही हो गया?
उन्होंने मुझे रहने को कहा और आप चलते वने। वह अपने-आप से वोला।

सर्वनाम के रूपान्तर (लिंग, वचन और कारक)

सर्वनाम का रूपान्तर चाहे किसी भी लिंग के लिए प्रयुक्त हो, उसका रूप हमेशा एक ही होता है। इसमें लिंग-भेद के कारण रूपान्तर होता है, जैसे-

वह गाता है।
वह गाती है।
तुम खाते हो।
तुम खाती हो।

वचन—संज्ञा के समान सर्वनाम के भी दो वचन होते हैं- एकवचन, वहुवचन।

पुरुषवाचक और निश्चयवाचक सर्वनाम को छोड़कर शेष सर्वनाम विभक्तिरहित बंहुवचन में एकवचन के समान रहते हैं, जैसे-

एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
मैं	हम	तू	तुम, आप
वह	वे	यह	ये

कारकों के चिन्हों के साथ सर्वनाम के रूप बदल जाते हैं। आगे सर्वनाम रूपावली में देखें।

सर्वनाम रूपावली—सर्वनाम में संज्ञा की भाँति लिंग, वचन, कारक होते हैं, किन्तु इसमें संबोधन कारक नहीं होता। कारकों के चिन्हों के साथ सर्वनाम के रूप बदल जाते हैं, जैसा कि इस 'सर्वनाम रूपावली' तालिका में दिखाया गया है-

सर्वनाम	वचन	कर्ता	कर्म	करण	संप्रदान	अपादान	संबंध	अधिकरण
मैं	एकवचन	मैं, मैंने	मुझको, मुझे	मुझसे	मुझको, मुझे, मेरे लिए	मुझसे	मेरा, मेरी,	मुझसे मुझपर

हम	बहुवचन	हम, हमने	हमको, हमें	हमसे	हमको हमें, हमारी, लिए	हमसे हम पर हमारे	हमारा,	हममें
तू	एकवचन	तू, तूने	तुझको, तुझे	तुझसे	तुझको, तुझे	तुझसे तुमसे	तेरा, तेरी तेरे तुम्हारा	तुझ में, तुझ पर
तुम	एकवचन	तुम, तुमने	तुमंको, तुम्हें	तुमसे	तुमको तुम्हें	अपने से, अपने से	तुम्हारी तुम्हारे	तुममें तुमपर
आप	बहुवचन	आप, आपने	अपने को	अपने से	अपने लिए	उससे	अपना अपनी अपने	अपने में
यह	एकवचन	वह, उसने	उसको, उसे	उससे	उसको उसे	इससे	उसका उसकी उसके	उसमें उसपर
यह	एकवचन	यह, इसने	इसको, इसे	इससे	उसके लिए इसको	उनसे	इसका इसकी इसके	इसमें इस पर
वे	बहुवचन	वे, उन्होंने	उनको, उन्हें	उनसे	इसे इसके लिए	इनसे	उनका उनकी उनके	उनमें उनपर
ये	बहुवचन	ये, इन्होंने	इनको, इन्हें	इनसे	उनको उन्हें उनके लिए इनके उन्हें इनके लिए		इनका इनकी इनके	इनमें इनपर

प्रश्न 11. (अ) विशेषण एवं क्रिया रूप व इनके प्रकारों को सोदाहरण स्पष्ट करें।

उत्तर-

विशेषण और उसके प्रकार

विशेषण से संज्ञा का गुण अथवा विशेषता प्रकट होती है और उसके प्रयोग से संज्ञा की व्यापकता मर्यादित हो जाती है, जैसे- सफेद घोड़ा कहने से घोड़े की विशेषता व्यक्त होने के अतिरिक्त उसी घोड़े का बोध होता है, जो सफेद है। संज्ञा अथवा सर्वनाम की विशेषता बताने वाले शब्द विशेषण कहलाते हैं।

विशेषण एक ऐसी विकारी शब्द है, जो हर स्थिति में संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताता है।

विशेषण के भेद-

प्रयोग की दृष्टि से विशेषण के चार भेद माने गए हैं-

1. गुणवाचक विशेषण 2. संख्यावाचक विशेषण
3. परिमाणवाचक विशेषण 4. सार्वनामिक विशेषण (संकेतवाचक)

गुण, संख्या और परिमाण के आधार पर विशेषण पदों के भेदों का वर्गीकरण इस प्रकार है-

गुणवाचक विशेषण—जिन विशेषणों से पदार्थ के गुण, रंग, आकार, दशा, अवस्था, रूप आदि का बोध होता है, उन्हें गुणवाचक विशेषण कहते हैं, जैसे-

अच्छा, बुरा, पापी, सरल, दुष्ट।
लाल, पीला, सफेद, काला, आसमानी, धानी।
सुन्दर, कुरूप, ऊँचा, नीचा।
भीतरी, बाहरी, ऊपरी, निचला।
लम्बा, घोड़ा, टेढ़ा, तिकोना, दुबला, पतला, ढीला, मोटा, ताजा।

संख्यावचक विशेषण—जिससे वस्तुओं की संख्या का बोध हो, उसे संख्यावचक विशेषण कहते हैं, जैसे- तीन लड़के, चतुर्थ वर्ग, दस गुने लोग।

संख्यावचक विशेषण के पाँच प्रकार हैं, जैसे कि-

- **गुणवाचक**—यह वस्तुओं की गणना बतलाता है, जैसे- सात केले, वीस कुर्सियाँ।
- **क्रमवाचक**—यह क्रम के अनुसार गणना का बोध कराता है, जैसे- पहला लड़का, पाँचवीं लड़की, तृतीय श्रेणी।
- **आवृत्तिवाचक**—यह एक वस्तु से दूसरी वस्तु के आधिक्य का अनुपात बताता है, जैसे- चौगुना धन, सौगुना दिमाग, दूध से दुगुना पानी।
- **समुदायवाचक**—यह संख्या के समुदाय का बोध कराता है, जैसे- तीनों लड़के, सातों घर, दोनों भाई, चारों बहनें।
- **प्रत्येकवाचक**—यह अनेक वस्तुओं में से हरेक का बोध कराता है, जैसे- प्रत्येक व्यक्ति, हरेक नेता, एक-एक अपराधी।

परिमाणवाचक विशेषण—जो शब्द किसी वस्तु के परिमाण (माप-तौल) का बोध कराता है, उसे परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं, जैसे- थोड़ा दूध, सारा देश, कम जल।

परिमाणवाचक के दो भेद हैं-

- **निश्चित परिमाणवाचक**—यह वस्तुओं के ठीक परिमाण का बोध नहीं कराता है, जैसे- थोड़ा दूध, इतना पानी, अधिक चीनी।
- **सार्वनामिक विशेषण**—जो सर्वनाम शब्द विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं, उन्हें सार्वनामक विशेषण कहते हैं। इसे संकेतवाचक विशेषण भी कहते हैं, जैसे-

(1) यह लड़का हमारे कॉलेज का है। (2) वह आदमी मेरा दोस्त है।
(3) मुझे कुछ दवाइयाँ चाहिए। (4) कोई बच्चा सो रहा है।

यह, वह, कुछ, कोई, सर्वनाम, क्रमश लड़का, आदमी, दवाइयाँ, बच्चा की विशेषता बताते हैं, अत: ये सार्वनामिक विशेषण हुए।

सर्वनामों के संबंधकारकीय रूप भी विशेषण होते हैं, जैसे- मेरा घर, हमारी पुस्तकें, तुम्हारी माता जी, उसका नाम, किसकी पेंसिल।

सर्वनामों से निर्मित विशेषण—मूल सर्वनाम में प्रत्यय लगाने पर जो यौगिक सर्वनाम बनते हैं, उनसे भी सार्वनामिक विशेषण बनते हैं। जैसे- यह से ऐसा, इतना, क्या से कैसा, वह से वैसा और उतना तथा जो से जैसा, जितना।

निश्चयवाचक सर्वनाम और सार्वनामिक विशेषण में अन्तर

निश्चयवाचक सर्वनाम और सार्वजनिक विशेषण में सूक्ष्म अन्तर है। निश्चयवाचक सर्वनाम किसी व्यक्ति, प्राणी, वस्तु घटना आदि की निश्चितता का बोध कराता है, जबकि सार्वनामिक विश्लेषण से व्यक्ति, प्राणी, वस्तु आदि की विशेषता का द्योतन होता है, जैसे-

(क) (1) यह मोहन की पुस्तक है।
(2) वह शीला का घर है।
(ख) (1) यह पुस्तक मोहन की है।
(2) वह घर शीला का है।

उपर्युक्त (क) के अन्तर्गत वाक्य (1) और (2) में यह और वह क्रमशः मोहन की पुस्तक और शीला का घर की निश्चितता का बोध कराते हैं। इसलिए निश्चयवाचक सर्वनाम है। (ख) के अन्तर्गत वाक्य (1) और (2) मैं यह पुस्तक और वह घर में यह पुस्तक की और वह घर की विशेषता बता रहे हैं, इसलिए सार्वनामिक विशेषण है।

क्रिया और उसके प्रकार

जिस शब्द से किसी काम को करने अथवा होने का बोध होता है, उसे क्रिया कहते हैं। वास्तव मैं क्रिया शब्द का अर्थ है काम। वाक्य में जिस शब्द से किसी काम का होना अथवा करना पाया जाए, उसे क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए-

1. रश्मि दौड़ी। 2. शीला पन्ना जाएगी। 3. रमा खेल रही है।

यहाँ 'दौड़ी, जाएगी, खेल रही है से' किसी काम के होने अथवा करने का बोध होता है, अतः ये शब्द क्रिया रूप हैं।

क्रिया के भेद—क्रिया मुख्य रूप से दो प्रकार की होती हैं- अकर्मक क्रिया, सकर्मक क्रिया

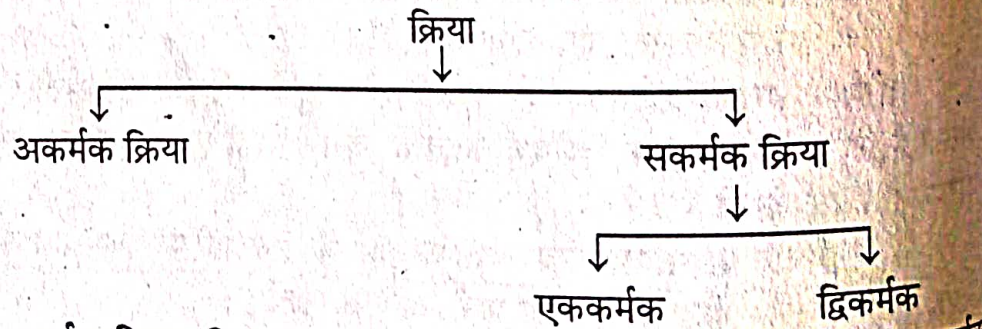

अकर्मक क्रिया-जिस क्रिया के व्यापार का फल कर्त्ता पर पड़ता है, उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं, जैसे- नम्रता घर गई। यहाँ 'गई' क्रिया के व्यापार का फल 'नम्रता' कर्त्ता पर पड़ता है, अतः 'गई' क्रिया अकर्मक है।

सकर्मक क्रिया-क्रिया के व्यापार का फल कर्म पर पड़ता है, उसे सकर्मक क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए, शरद आम खा रहा है। यहाँ खा रहा है, क्रिया के व्यापार का फल आम पर पड़ रहा है, अतः खा रहा है क्रिया सकर्मक है। सकर्मक क्रिया को पहचानने का तरीका यह है कि क्रिया से क्या अथवा कौन के प्रश्न करने पर यदि उत्तर मिल जाये तो वह सकर्मक क्रिया हो जाएगी, जैसे- शरद क्या खा रहा है? उत्तर- आम।

इस प्रकार कर्म वाली क्रिया सदैव सकर्मक क्रिया होती है।

सकर्मक क्रिया भी दो प्रकार की होती है-

(क) एककर्मक क्रिया--एक कर्म वाली क्रिया एककर्मक कहलाती है। उदाहरण के लिए, मोहन, किताब पढ़ रहा है। यहाँ किताब एककर्मक है। पढ़ना सकर्मक क्रिया है।

(ख) द्विकर्मक क्रिया-कुछ सकर्मक क्रियाएँ दो कर्म वाली होती हैं, इन्हें द्विकर्मक क्रिया कहते हैं। इनमें एक कर्म मुख्य होता है और दूसरा कर्म गौण। उदाहरण के लिए- श्वेता ने श्रेया को पुस्तक दी। यहाँ 'दी' सकर्मक क्रिया के दो कर्म श्रेया और पुस्तक हैं। इस प्रकार 'दी' द्विकर्मक क्रिया है। इसमें पुस्तक मुख्य कर्म है और श्रेया गौण कर्म। इसी प्रकार लेना, खरीदना, बेचना द्विकर्मक क्रियाएँ हैं।

कुछ क्रियाएँ अकर्मक और सकर्मक दोनों भूमिकाएँ निभाती हैं, जैसे-

(क) पुस्तक के लिए साक्षी का जी ललचाता है। यहाँ ललचाता अकर्मक क्रिया है।

(ख) शिकारी वंशी बाजकर हिरन को ललचाता है। यहाँ ललचाता सकर्मक क्रिया है और कर्म हिरन है।

प्रेरणार्थक क्रिया--जिस क्रिया से बनने वाली क्रिया मुख्य कर्ता द्वारा स्वयं न होकर किसी दूसरे की प्रेरणा से सम्पन्न होती है, वह प्रेरणार्थक क्रिया कहलाती है। इस क्रिया के आगे आ या वा प्रत्यय लगाकर कार्य सम्पन्न किया जाता है, जैसे-

क्रिया	**प्रेरणार्थक क्रिया**	**क्रिया**	**प्रेरणार्थक क्रिया**
करना	कराना, करवाना	खाना	खिलाना, खिलवाना
कटना	कटाना, कटवाना	चलना	चलाना, चलवाना
लजाना	लजाना, लजवाना	देना	दिलाना, दिलवाना
लिखना	लिखाना, लिखवाना	सोना	सुलाना, सुलवाना

प्रेरणार्थक क्रिया के मुख्यत: दो रूप हैं-

अकर्मक क्रिया प्रत्यक्ष प्रथम प्रेरणार्थक होने पर सकर्मक हो जाती है, जैसे-

अकर्मक क्रिया	**प्रत्यक्ष प्रेरणार्थक क्रिया अथवा सकर्मक**
उड़ना	उड़ाना
दौड़ना	दौड़ाना
रोना	रुलाना
पढ़ना	पढ़ाना
सोना	सुलाना
हँसना	हँसाना

प्रेरणार्थक क्रियाएँ सकर्मक और अकर्मक दोनों क्रियाओं से बनती हैं, जैसे-

सकर्मक क्रिया	**प्रत्यक्ष या प्रथम प्रेरणार्थक क्रिया**	**अप्रत्यक्ष या द्वितीय प्रेरणार्थक क्रिया**
उड़ना	उड़ाना	उड़वाना
काटना	कटाना	कटवाना
दौड़ना	दौड़ाना	दौड़वाना
पढ़ना	पढ़ाना	पढ़वाना
सोना	सुलाना	सुलवाना
हँसना	हँसाना	हँसवाना

उदाहरण-

- माँ बच्चे को दूध पिलाती है। (प्रत्यक्ष प्रेरणार्थक क्रिया)
- माँ नौकरानी से बच्चे को दूध पिलवाती है। (अप्रत्यक्ष प्रेरणार्थक क्रिया)

यौगिक क्रिया—दो या दो से अधिक धातुओं और दूसरे शब्दों के योग से या धातुओं में प्रत्यय लगाने से जो क्रिया बनती है, वह यौगिक क्रिया कहलाती है, जैसे-

- चलना - चलाना, रोना, - धोना, उठना - बैठना
- रो पड़ना, चल देना, खा लेना, उठ जाना।

नामिक क्रिया—नामिक क्रिया में एक अंश संज्ञा या विशेषण होता है और दूसरा क्रिया जिसे क्रिया कर भी कहते हैं। यह क्रिया अपने पूर्ववर्ती शब्द से मिलकर नामिक क्रिया का निर्माण करती है, जैसे- स्वीकार करना, याद होना, अच्छा लगना, क्षमा करना, पसंद करना।

नामधातु—जो धातु संज्ञा या विशेषण के आगे ना प्रत्यय लगाने से बनती है, उसे नामधातु कहते हैं, जैसे-

संज्ञा	नामधातु	विशेषण	नामधातु
हाथ	हथियाना	गरम	गरमाना
बात	बतियाना	दुबला	दुबलाना
लात	लतियाना	पागल	पगलाना

1. क्रियार्थक संज्ञा—कोई क्रिया अपने साधारण रूप में क्रिया नहीं है। विधि और काल के रूप को छोड़कर उसका प्रयोग प्राय: संज्ञा के समान होता है, अत: ऐसे शब्दों को क्रियार्थक संज्ञा कहा जाता है। ऐसी क्रियार्थक संज्ञा भाववाचक संज्ञा के अन्तर्गत आती है। जैसे- टहलना स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है। यहाँ टहलना भाववाचक संज्ञा है।

क्रिया के कार्य—किसी कार्य के होने अथवा किए जाने का बोध कराना, जैसे-

गाय घास चर रही है। हिमांशु किताब पढ़ रहा है। पारुल गीत गा रही है।

किसी व्यक्ति अथवा वस्तु की क्रियाशीलता का बोध कराना, जैसे-

भैंस चरती है। लड़के खेलते हैं। गेंद लुढ़कती है।

स्थिति अथवा अवस्था का बोध कराना, जैसे-

नीतू पढ़ती है। महेन्द्र खड़ा है। वह सो रहा है।

अस्तित्व का बोध कराना, जैसे-

मनुष्य समाज में रहता है। चीता जंगल में रहता है। वह सो रहा है।

अस्तित्व का बोध कराना, जैसे-

मनुष्य समाज में रहता है। चीता जंगल में रहता है। मछली जल में रहती है।

मन:स्थिति का बोध कराना, जैसे-

लड़के प्रसन्न हो रहे थे। छात्र पढ़ रहे थे। छोटू रो रहा है।

2. पूरक—कुछ अकर्मक और सकर्मक क्रियाएँ ऐसी होती हैं, जो कर्ता और कर्म के अनुसार रहते हुए भी पूरा अर्थ प्रकट नहीं करतीं। इस स्थिति में वाक्य में क्रिया का अर्थ पूरा करने के लिए जो शब्द जाड़े जाते हैं, उन्हें पूरक कहते हैं। उदाहरण के लिए, उन्होंने उसे डॉक्टर बनाया।

इस वाक्य में उन्होंने कर्ता और बनाया क्रिया के होते हुए भी वाक्य पूरा नहीं होता। इसलिए उसे पूरा करने के लिए डॉक्टर शब्द जोड़ना पड़ा है। अत: डॉक्टर शब्द पूरक है।

3. **व्युत्पत्ति के अनुसार क्रिया-भेद**—क्रिया के तीन भेद होते हैं-

मूल क्रिया—जो क्रिया दूसरे शब्द से न बनी हो, उसे मूल क्रिया कहते हैं, जैसे- आना, जाना, खाना, पीना आदि। हूँ, है, था, थी, थीं, ये भी मूल क्रिया के ही उदाहरण हैं।

संयुक्त क्रिया—मुख्य क्रिया के बाद दूसरी क्रिया मिलकर जो क्रिया बनाती है, यह संयुक्त क्रिया है। इसमें पहली मुख्य क्रिया और दूसरी रंजक क्रिया होती है। संयुक्त क्रिया में रंजक क्रिया मुख्य क्रिया पर अपना रंग चढ़ा देती है। ये रंग अतिशयताबोधक, पूर्णता बोधक, आकस्मिकता बोधक, आरम्भ बोधक आदि होते हैं। हिन्दी में मुख्य रंजक क्रिया है- आना, जाना, लेना, उठना, बैठना, लगना। उदाहरण के लिए-

- मुझे भूख लग आई। (आरम्भ बोधक)
- उसने खाना खा लिया है। (पूर्णता बोधक)
- वह सो गया है। (पूर्णताबोधक)
- मरीज चिल्ला उठा। (आकस्मिकता बोधक)
- बच्चा विद्यालय जाने लगा है। (आरंभ बोधक)

(क) संज्ञा अथवा विशेषण के आगे 'ना' प्रत्यय लगाकर - धिक्कार - धिक्कारना, पुचकार - पुचकारना, खरीद - खरीदना। इसे नामधातु क्रिया भी कहते हैं।

पूर्वकालिक क्रिया—जिस क्रिया का सिद्ध होना किसी दूसरी क्रिया के सिद्ध होने के पहले पाया जाए और जो लिंग, वचन, पुरुष से प्रयुक्त न हो, उसे पूर्वकालिक क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए, सुकन्या पढ़कर सोती है। यहाँ पढ़ने का कार्य सोने के पूर्व हो चुका है, अत: 'पढ़कर' पूर्वकालिक क्रिया है।

4. क्रिया की अवस्था—क्रिया की अवस्था क्रिया के व्यापार को प्रकट करने का एक भाव है, जिसमें वक्ता के प्रयोजन या मनोवृत्ति की ओर संकेत होता है। इसे क्रियार्थ, क्रियाभाव या वृत्ति भी कह सकते हैं। प्रत्येक काल में क्रिया की तीन अवस्थाएँ होती हैं-

सामान्य अवस्था—जिस क्रिया से सामान्य अवस्था का बोध हो तथा किसी विधान का निश्चय ज्ञात हो, उसे सामान्य अवस्था की क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए, रमेश आया। रमा खेल रही है।

यहाँ 'आया', खेल रही है' क्रिया से आने और खेलने के विधान का निश्चय होता है, अत: यहाँ क्रिया की सामान्य अवस्था है।

विधि अवस्था—जिस क्रिया से आज्ञा, प्रार्थना, प्रश्न आदि का भाव प्रकट हो, उसे विधि अवस्था की क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए- (क) तुम खाओ। (ख) आप मुझे सौ रुपए दीजिए। (ग) क्या मैं अन्दर आऊँ।

यह अवस्था दो प्रकार की होती है-

प्रत्यक्ष विधि—इस विधि से आज्ञा, प्रार्थना, प्रश्न आदि का वर्तमान काल में कार्यान्वित होना ज्ञात होता है, जैसे-

अभी कॉलेज जाओ। हम यहाँ खेलें? हे प्रभु! उसकी रक्षा करो।

परोक्ष विधि—इस विधि से आज्ञा, प्रार्थना, प्रश्न आदि का भविष्यत् काल में कार्यान्वित होना ज्ञात होता है, जैसे-

तुम कल कॉलेज जाना। क्या तुम मैदान में खेलोगे?

आप मुझे पुस्तक दीजिएगा।

संभाव्य अवस्था—जिस क्रिया से अनुमान, इच्छा, संदेह आदि का बोध होता है, उसे सामान्य अवस्था की क्रिया कहते हैं। उदाहरण के लिए जैसे-

शायद वह कोलकाता में मिल जाए। वह घर पर होगा या नहीं।

मैं परीक्षा में शायद उत्तीर्ण हो जाऊँ।

प्रश्न 12. वाक्य की अवधारणा क्या है? भाषा की इकाई के रूप में वाक्य पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

वाक्य की अवधारणा

भाषा का मुख्य कार्य अभिव्यक्ति है। भाव की पूर्ण अभिव्यक्ति वाक्य के माध्यम से होती है। वाक्य के अभाव में भाव या विचार की स्थिति संदिग्ध हो जाएगी। वास्तव में भाव मन में अव्यक्त वाक्य के रूप में विद्यमान होते हैं, ध्वनि-प्रतीकों या लिपि-चिन्हों का आधार पाने पर वाक्य का व्यक्त रूप सामने आता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि मनुष्य जो भी सोचता या अभिव्यक्त करता है, वह सब वाक्य के ही माध्यम से होता है। भावाभिव्यक्ति सन्दर्भ में वाक्य भाषा की सहज तथा प्रथम इकाई है।

वाक्य की परिभाषा—समय-समय पर विभिन्न विद्वानों ने वाक्य की परिभाषा की है। कुछ प्रमुख भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ उद्धत हैं-

(क) **पतंजलि** ने महाभाष्य में वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है, "आख्यात साव्यकारक विशेषण वाक्यम्।" अर्थात् जहाँ क्रिया अव्यय, कारक तथा विशेषण पद एकत्र हों, उसे वाक्य कहते हैं।

(ख) **आचार्य विश्वनाथ** ने साहित्य-दर्पण में लिखा है- "वाक्यं स्याद् योग्य ताकांक्षासक्तियुक्तः पदोच्चयः।" अर्थात् पदों का वह समूह जो योग्यता, आकांक्षा और आसक्ति से युक्त हो, उसे वाक्य कहते हैं।

(ग) **डॉ. भोलानाथ तिवारी** ने भाषा में वाक्य की परिभाषा इस प्रकार की है, "वाक्य भाषा की सहज इकाई है, जिसमें एक या अधिक शब्द हों, जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो या अपूर्ण व्याकरणिक दृष्टि से अपने विशिष्ट संदर्भ में अवश्य पूर्ण होती है, साथ ही परोक्ष रूप से कम से कम एक क्रिया का भाव अवश्य होता है।"

(घ) हिन्दी के प्रसिद्ध वैयाकरण **पं. कामताप्रसाद गुरू** ने 'हिन्दी व्याकरण' में वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है- "प्रत्येक पूर्ण विचार को वाक्य और प्रत्येक भावना को शब्द कहते हैं।"

(ङ) **आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा** के अनुसार, "भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य है।"

भाषा की इकाई के रूप में वाक्य

भाषा की विभिन्न इकाइयों में वाक्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है। इसकी प्रमुखता को रेखांकित करने के लिए निम्नलिखित तथ्यों पर विचार किया जा सकता है-

(क) भाषा की प्रथम इकाई

प्राचीन भारतीय भाषा-चिन्तन के आधार पर ध्वनि भाषा की लघुत्तम इकाई थी। आधुनिक भाषा-चिन्तन में भावाभिव्यक्ति को सर्वाधिक महत्व देने के कारण वाक्य भाषा की प्रथम इकाई सिद्ध हुआ है भाषा को भावाभिव्यक्ति का साधन कहते हैं, अतः उक्त विचार

तर्कसंगत लगता है। बच्चा भाषा-प्रयोग के प्रारम्भिक चरण में वाक्य का ही प्रयोग करता है। ऐसे क्षण बच्चे के मन में विचार-प्रवाह चलता रहता है। प्रारम्भ में इस विचार-प्रवाह का वाक्यात्मक रूप मात्र एक ध्वनि के रूप में प्रकट होता है। बच्चा अपने परिवेश के निकटस्थ व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा प्रयुक्त भाषा की बहु प्रयुक्त सरल ध्वनि को अपनाता है। हिन्दी भाषी क्षेत्र का बच्चा आ, इ आदि स्वरों के पश्चात् प्राय: अल्पप्राण अघोष ओष्ठ्य या दन्त्य "प" और "त" का प्रयोग करता है। इन ध्वनियों का वाक्यात्मक रूप या अर्थ-ज्ञान प्रसंग के आधार पर जान सकते हैं, यथा-

बच्चे द्वारा प्रयुक्त ध्वनि	संदर्भ-विचार	वाक्यात्मक रूप
"आ"	भूख लगने पर	आओ, भूख लगी है, दूध दे दो।
"त"	आग के पास	यह बहुत गर्म है।
"प"	बिस्तर गीला करने पर	बिस्तर गीला हो गया है।

यहाँ बच्चे की ध्वनि का वाक्यात्मक स्वरूप श्रोता की मानसिक परिकल्पना पर आधारित होता है, जो श्रोता "ध्वनि" के संदर्भ से पूरी तरह विज्ञ होता है। वह उसका वाक्यात्मक रूप पूरी तरह समझ जाता है। संदर्भ-ज्ञान के अभाव में बच्चे के मन का विचार या ध्वनि का वाक्यात्मक रूप समझना असम्भव हो सकता है। इस प्रकार वाक्य का यह रूप अस्पष्ट होता है, किन्तु संदर्भ से जुड़ जाने पर सहज ज्ञान हो सकता है।

बुद्धि-विकास क्रम में बच्चा भाषा-अर्जन के माध्यम से शब्दों का प्रयोग करने लगता है। उसके उच्चारण की विशेष प्रक्रिया में भी वाक्यात्मक रूप छिपा होता है, जो संदर्भ से पता लग जाता है, यथा-

बच्चे का वाक्य	संदर्भ-विशेष	सामान्य वाक्य-रूप
"पा"	प्यास की स्थिति	पापा मुझे प्यास लगी है।
हप्पा	भूख की स्थिति	मुझे भूख लगी/मुझे खाना दे दो।
लोटी (रोटी)	भूख की स्थिति	मैं लोटी (रोटी) खाऊँगा।
आती	सामने हाथी होने पर	आती (हाथी) है।

जब बालक एक-एक शब्द का शुद्ध उच्चारण करने लग जाता है, तो वाक्य का एकपदीय रूप सामने आ जाता है, यथा-

बालक का वाक्य	संदर्भ-विशेष	सामान्य वाक्य-रूप
पानी	प्यास, लगने पर	मैं पानी पीऊँगा।
चाँद	लेने की इच्छा पर	मैं चाँद लूँगा।
पापा	साथ जाने की इच्छा पर	मैं पापा के साथ जाऊँगा।

(ख) भाषा की सहज इकाई

वाक्य भाषा की मूल और महत्वपूर्ण इकाई है। वाक्य के सहज रूप को इसके ध्वनि से शब्द, पद और वाक्य तक के विस्तृत प्रयोग में देख सकते हैं। "आ" एक ध्वनि है, इसका प्रयोग शब्द और वाक्य के रूप में होता है, यथा-

ध्वनि	शब्द रूप	वाक्य रूप
आ	आ (जाना)	(तू) आ

बच्चा प्राय: "आ" के प्रयोग से भाषा सीखना शुरू करता है। बोलचाल की भाषा में एकपदीय वाक्यों-आ, जा, खा आदि का बहुल प्रयोग सहजता से किया जाता है। मानव अपने

विचारों को दूसरों तक पहुँचाना चाहता है। भाषा की इकाई जो भाव को पूर्णता से प्रकट कर दे, वह ही मनुष्य के लिए सहज होगी। इस प्रकार पूर्ण अर्थ या भाव की अभिव्यक्ति के आधार पर वाक्य भाषा की सहज इकाई है। चॉम्स्की ने मन में स्थित वाक्य के मौन रूप को आदर्श वाक्य की संज्ञा दी है।

(ग) सार्थकता

भाषा का मुख्य उद्देश्य भावाभिव्यक्ति है। वाक्य के अतिरिक्त भाषा की किसी भी इकाई-ध्वनि (स्वन) शब्द या पद में पूर्ण और निश्चित अर्थ अभिव्यक्ति की शक्ति नहीं है। क्, च्, त् आदि स्वतंत्र स्वनों में किसी पूर्ण भाव का ग्रहण सम्भव नहीं है। "मधुर" शब्द से उसके संज्ञा (मधुर गया) या विशेषण (मधुर फल) होने का ज्ञान नहीं होता है। संज्ञा होने पर मधुर क्या खाता है, कहीं जाता है, पढ़ता है या अन्य कोई कार्य करता है, इसका ज्ञान नहीं होता है। इस प्रकार किसी भी शब्द से पूर्ण भाव प्रकट होना असम्भव है। पद में वाक्य रचना की व्याकरणिक योग्यता अवश्य होती है, किन्तु पूर्ण भावाभिव्यक्ति की शक्ति नहीं होती, यथा- विजय ने, सुरेन्द्र को, जा रहा है आदि से अर्थज्ञान सम्भव नहीं है।

विचारों की पूर्ण अभिव्यक्ति वाक्य द्वारा ही सम्भव है, अत: वाक्य भाषा की स्वतंत्र और सार्थक इकाई है, यथा-

1. सदा सत्य बोलो
2. जयशंकर प्रसाद महान कवि थे।

इन वाक्यों से पूर्ण भाव की अभिव्यक्ति होती है।

(घ) व्याकरणिक पूर्णता

वाक्य की व्याकरणिक पूर्णता अर्थ है- वाक्य में सभी शब्दों या पदों का अपेक्षित विधान-आधार पर प्रयोग होना, यथा- "सुनीता आम खा रही है" वाक्य में कर्त्ता, कर्म और क्रिया पद प्रयुक्त है और सभी पद हिन्दी व्याकरण के वाक्य-सिद्धान्तानुसार व्यवस्थित हैं।

व्याकरणिक पूर्णता कभी-कभी विशेष संदर्भ से होती है। सामान्य बातचीत में और संवादात्मक शैली के लेखन में प्राय: एकपदीय वाक्यों का प्रयोग होता है। ऐसे वाक्यों का कुछ अंश लुप्त होता है। वाक्य का पूर्ववर्ती अथवा परवर्ती, कोई भी लुप्तांश हो सकता है, यथा-

रमेश	जाओ
मनोज	कौन यहाँ रहेगा
रमेश	मैं।

यहाँ बातचीत में प्रयुक्त "जाओ" और "मैं" वाक्य है। श्रोता संदर्भ के अनुसार व्याकरणिक पूर्णता प्राप्त कर लेता है-

बातचीत का वाक्य	**व्याकरणिक अनुभूत वाक्य**
जाओ	(तुम) जाओ
मैं	मैं (यहाँ रहूँगा)।

बातचीत के सन्दर्भ में कभी-कभी पर्याप्त विस्तृत वाक्य एकपदीय रूप में प्रयुक्त होते हैं। संदर्भानुसार उनकी व्याकरणिक पूर्णता हो जाती है, यथा-

प्रभात	तुम कल सबेरे कहाँ जा रहे हो?
विभूति	हिसार और तुम कहाँ जा रहे हो?

प्रभात — कनराल।
विभूति — आशु तो दस दिन पूर्व करनाल पहुँच गया होगा?
प्रभात — हाँ।

यहाँ "हिसार", "करनाल" और "हाँ" एकपदीय वाक्य हैं। श्रोता इन एकपदीय वाक्यों को संदर्भानुसार इस प्रकार पूर्ण कर लेता है-

एकपदीय वाक्य	व्याकरणिक अनुभूत वाक्य
हिसार	मैं कल सवेरे हिसार जा रहा हूँ।
करनाल	मैं कल सबेरे करनाल जा रहा हूँ।
हाँ	हाँ! आशु दस दिन पूर्व ही करनाल पहुँच गया है।

(ङ) वाक्य में प्रयुक्त या अप्रत्यक्ष रूप में एक क्रिया की अनिवार्यता

पूर्ण भावाभिव्यक्ति के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में कम से कम एक क्रिया का होना अनिवार्य है। भाषा की विभिन्न इकाइयों में वाक्य एकमात्र ऐसी इकाई है, जिसमें उक्त विशेषता निश्चित रूप से मिलती है।

प्रत्यक्ष प्रयोग—वाक्य में क्रिया पदों का प्रयोग प्राय: प्रत्यक्ष रूप में होता है, यथा-
एक क्रिया-प्रयोग-तुम जाओ। वह खाती है।
एकाधिक क्रियाओं का प्रयोग- उसने कहा कि तुम गाओ।
जब तुम आओगे तब मैं चलूँगा।

अप्रत्यक्ष प्रयोग—संवादात्मक शैली के प्रयोग पर प्राय: क्रिया का अप्रत्यक्ष प्रयोग मिलता है। इस प्रकार के वाक्यों से भावाभिव्यक्ति या भाव-ग्रहण में कोई कठिनाई नहीं होती है, क्योंकि श्रोता या पाठक संदर्भानुसार वाक्य-पूर्ति कर लेता है, यथा-

प्रवीण — कौन गाएगा?
गुलशन — मैं।

यहाँ "मैं" के साथ "गाऊँगा" क्रिया का अप्रत्यक्ष प्रयोग है, जो प्रसंगानुसार "मैं गाऊँगा" पूरा कर लिया जाता है।

(च) वाक्य उच्चारण एवं ग्रहण

भावाभिव्यक्ति की सहज किन्तु विस्तृत प्रक्रिया में वाक्य का ही सर्वाधिक महत्व है। वक्ता से श्रोता तक विचार पहुँचाने में वाक्य सेतु का कार्य करता है। मनुष्य के मन में विभिन्न विचार वाक्य के रूप में स्थित होते हैं। मनुष्य भाव प्रकट करने के लिए क्रमश: भाषा, शब्द, पद और वाक्य का चयन करता है। उपयुक्त चयन के पश्चात् उच्चारण प्रक्रिया के साथ श्रोता क्रमश: ध्वनि, शब्द, पद और वाक्य को ग्रहण करता है। श्रोता के द्वारा वाक्य-चिन्तन के पश्चात् अर्थ-ग्रहण होता है। इस पूरी प्रक्रिया में वक्ता के विचार श्रोता द्वारा ग्रहण किए गए अर्थ तक वाक्य की बलवती भूमिका होती है। इस तथ्य को इस प्रकार रेखांकित कर सकते हैं-

वक्ता → विचार > भाषा > शब्द चयन > पद चयन > वाक्य चयन

उच्चारण | संवाहन

श्रोता ← अर्थ ग्रहण > वाक्य विश्लेषण > वाक्य ग्रहण > शब्द ग्रहण > ध्वनि ग्रहण

■

प्रश्न 12. (अ) वाक्य रचना के अन्तर्गत पदक्रम एवं अन्विति की अवधारणा को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

पदक्रम की अवधारणा

वाक्य में पदक्रम एक महत्वपूर्ण तत्व हैं, संस्कृत जैसे श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में पदक्रम इतना महत्वपूर्ण नहीं, क्योंकि शब्द के साथ जुड़ी हुई विभक्ति सर्वत्रा अपना वहीं अर्थ देगी, चाहे उस पद को किसी भी स्थान पर रख दें। जैसे- रामः पुस्तकं पठति वाक्य में पदों के स्थान बदलने से उनके अर्थ में कोई अन्तर नहीं आएगा। पुस्तकं पठति रामः या पठित पुस्तकं रामः कैसे भी लिखें अर्थ एक ही होगा- राम पुस्तक पढ़ता है। परन्तु जो धातु वियोगात्मक हो गई है, उनमें या अयोगात्मक भाषाओं में पदक्रम का बहुत महत्व है। इन भाषाओं में पदों के स्थान परिवर्तन के साथ ही अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

वाक्य में पदक्रम

हिन्दी विश्लेषणात्मक भाषा है। इसमें पदक्रम का बड़ा महत्व है। पदक्रम में थोड़ा-सा परिवर्तन हो जाने पर अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना रहती है। वाक्य में पदों का उचित स्थान पर होना पदक्रम है। वाक्य-रचना करते समय कर्ता, कर्म, क्रिया-विशेषण आदि को किस क्रम से रखना चाहिए, इस बात की ओर ध्यान देना आवश्यक है।

यह भी ध्यान देने की बात है कि परसर्ग सहित पदों का स्थानान्तरण किय जाए तो अर्थ में परिवर्तन नहीं होगा। उदाहरण के लिए, 'मोहन, सोहन को पीटता है' वाक्य में 'सोहन को' पद का स्थानान्तरण 'मोहन' से पहले किया जाए तो 'सोहन' को मोहन पीटता है' वाक्य बनेगा। इसमें कोई अर्थ परिवर्तन नहीं होगा।

यदि परसर्ग रहित पद या शब्द का स्थानांतरण किया जाए तो उसमें अर्थ परिवर्तन होगा। उदाहरण के लिए, (1) 'मोहन सोहन को पीटता है।' वाक्य में 'मोहन' के स्थान पर 'सोहन' को लाया जाए और 'सोहन' के स्थान पर 'मोहन' को लाया जाए तो अर्थ में परिवर्तन हो जाएगा, जैसे-

(2) ''सोहन मोहन को पीटता है।'' वाक्य (2) मैं 'सोहन' कर्त्ता और 'मोहन' कर्म हो जाएगा, जबकि वाक्य (1) में 'मोहन' कर्त्ता है और 'सोहन' कर्म है।

वाक्यपरक स्तर पर पदक्रम में परिवर्तन होने पर अर्थ बदल जाता है। उदाहरण के लिए, 'शिकारी ने दौड़ते हुए शेर को मारा।' वाक्य संदिग्धार्थक है। इसमें दो कथ्य मिलते हैं- (1) शिकारी दौड़ रहा था या (2) शेर दौड़ रहा था। यदि 'दौड़ते हुए पद को स्थानांतरित कर 'शिकारी' से पहले लिखा जाए तो अर्थ निश्चित हो जाएगा। 'दौड़ते हुए शिकारी ने शेर को मारा' वाक्य में 'शिकारी दौड़ रहा था' न कि 'शेर दौड़ रहा था'। इसी प्रकार के अन्य उदाहरण देखे जा सकते हैं।

पदक्रम में अधिक अशुद्धियाँ विशेषणों के प्रयोग में होती हैं और वे भी सार्वनामिक, संख्यावाचक और गुणवाचक विशेषणों में। उदाहरण के लिए-

अशुद्ध- मुझे एक चाय का पैकेट चाहिए।
शुद्ध- मुझे चाय का एक पैकेट चाहिए।
अशुद्ध- उसे एक फूलों की माला खरीदनी है।
शुद्ध- उसे फूलों की एक माला खरीदनी है।

अशुद्ध- यह असली गाय का दूध है।
शुद्ध- यह गाय का असली दूध है।

पदक्रम सही न होने के कारण कभी-कभी अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। उदाहरण के लिए- अशुद्ध- पुलिस द्वारा चोरी का माल बरामद हुआ।
(इससे ऐसा लगता है कि माल की चोरी पुलिस ने की।)
शुद्ध—चोरी का माल पुलिस द्वारा बरामद हुआ।
अशुद्ध- मंत्री द्वारा भगाई गई औरतों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गयी।
शुद्ध- भगाई गई औरतों के प्रति मंत्री द्वारा सहानुभूति व्यक्त की गयी।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि वाक्य में अभिप्रेत अर्थ निकालने के लिए कभी-कभी पदक्रम में उलटफेर किया जाता है। उदाहरण के लिए- (1) रवि मंजू को नहीं बताएगा। (2) मंजू को रवि नहीं बताएगा। (3) मंजू को नहीं बताएगा रवि। (4) नहीं बताएगा मंजू को रवि। इस प्रकार जिस शब्द या पद पर बल देना होता है उसे पहले रखा जाता है। अत: कभी कर्त्ता, कभी कर्म और कभी क्रिया पहले आती है और कभी बाद में। जैसे, 'उसकी पुस्तक राम ने रख ली है।' इसमें कर्म पहले आया है, कर्त्ता बाद में। 'बुलाया था रवि को, दौड़े आए संतोष।' इसमें क्रिया पहले आई है।

अन्विति की अवधारणा

हर भाषा में संज्ञाओं की तीन प्रमुख व्याकरणिक कोटियाँ होती हैं- वक्ता, लिंग और पुरुष। इनकी एक विशेषता यह होती है कि ये प्राय: संज्ञा के माध्यम से वाक्य के कुछ घटकों (जैसे- विशेषण और क्रिया) के रूपों को प्रभावित करती है। दूसरे शब्दों में, ये संज्ञाएँ उन्हें अपनी व्याकरणिक कोटि (लिंग-वचन-पुरुष) के अनुकूल रूप बदलने को बाध्य करती है। किसी घटक विशेष के प्रभाव में रूप बदलने की इस प्रक्रिया को अन्विति कहते हैं।

यद्यपि अन्विति की यह प्रक्रिया सभी भाषा में कमोबेश देखी जाती है, लेकिन हिन्दी में यह प्रवृत्ति बहुत अधिक है। हिन्दी में अन्विति दो स्तरों पर देखी जा सकती है- विशेषण और क्रिया।

1. विशेषण स्तर पर- छोटा लड़का, छोटे लड़के, छोटी लड़की
2. क्रिया स्तर पर- लड़का आ गया। सीता आ गई।
मेहमान आ गए। महिलाएँ आ गईं।

वाक्य के संदर्भ में इनमें से संज्ञा-क्रिया की अन्विति अधिक महत्वपूर्ण है। संज्ञा-विशेषण की अन्विति मुख्यत: पदबंध स्तर तक सीमित रहती है।

1. कर्त्ता-कर्म-क्रिया की अन्विति

कई लोग 'गीता ने फल खाई' या 'राकेश ने एक कहानी सुनाया' जैसे वाक्यों का प्रयोग करते पाए जाते हैं। मगर इससे यह पता चलता है कि प्रयोग करने वाले को क्रिया, लिंग और वचन का सही ज्ञान नहीं है। इसके कुछ नियम है, जो हमें समझना जरूरी हैं-

नियम के अनुसार
कर्त्ता + कर्म + क्रिया
गीता + फल + खाना
यहाँ कर्त्ता 'गीता' स्त्रीलिंग हैं कर्म 'फल' पुल्लिग है, इसलिए क्रिया पुल्लिग 'खाया' होगी और वाक्य बनेगा- 'गीता ने फल खाया'।

ठीक ऐसे ही राकेश वाले दूसरे उदाहरण में कर्म स्त्रीलिंग है इसलिए क्रिया भी स्त्रीलिंग 'सुनाई' होगी।

2. विशेष्य-विशेषण प्रयोग में अन्विति

शुद्ध लेखन के लिए वाक्यों में प्रयुक्त विशेष्य और विशेषण का ज्ञान होना हमारे लिए आवश्यक है। आपने कई प्रयोग देखे होंगे, जैसे- लाल गाय, काली बिल्ली, सफेद हाथी, ऊँची दुकान, फीका पकवान, मोटा लड़का, पतली लड़की। इन रचनाओं में पहला विशेषण और दूसरा विशेष्य है। किसी व्यक्ति या वस्तु के गुण-दोष, रूप-रंग, आकार-प्रकार आदि की विशेषताओं का बोध कराने वाले शब्द विशेषण कहलाते हैं। मतलब 'विशेषण' वह शब्द भेद है, जो संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताता हो और जिसकी विशेषता बताई जा रही है उसे 'विशेष्य' कहते हैं। पहले उदाहरण में 'लाल' विशेषण है और 'गाय' विशेष्य।

आकारांत ('आ' ध्वनि से अन्त होने वाले शब्द) विशेषण, जैसे 'गोरा', 'काला, 'पीला' आदि में सावधान रहना है।

3. संज्ञा-सर्वनाम की अन्विति

लेखन में (वाक्य बनाते समय) संज्ञा प्रयोग में भी अशुद्धि देखने को मिल जाती है, जैसे-

डाकुओं का एक गिरोह पकड़े गए।

फूलों का गुच्छा बहुत अच्छे लगते हैं।

यह वाक्य बनाने वाले की बहुत भारी भूल है। पहले वाक्य में 'पकड़ा गया' और दूसरे में 'अच्छा लगता है' का प्रयोग होना चाहिए था। क्योंकि यहाँ कर्त्ता समूह वाचक संज्ञाएँ (गिरोह, गुच्छा) हैं अर्थात् ऐसे वाक्यों में का, की के बाद में आने वाली संज्ञा कर्त्ता होती है और कर्त्ता के हिसाब से क्रिया एकवचन होगी।

4. सर्वनाम का प्रयोग

'सुमित कल सुबह आया था। सुमित हिन्दी की किताब दे गया था।' इस वाक्य में दो बार सुमित आया है। यह वाक्य ठीक नहीं लग रहा है। इसमें सर्वनाम का प्रयोग करने के बाद वाक्य सही बनेगा, जैसे- 'सुमित कल सुबह आया था। वह हिन्दी की किताब दे गया था।' यहाँ सर्वनाम के प्रयोग से वाक्य सुधर जाता है। ऐसे शब्दों को 'सर्वनाम' कहते हैं, जो संज्ञा के स्थान पर प्रयोग किए जाते हैं।

5. कर्त्ता, कर्म क्रिया अन्विति—वाक्य में क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष उसके कर्त्ता के अनुसार होता है, जैसे-

अशुद्ध	**शुद्ध**
लड़का लोग गए।	लड़का गया। लड़के गए।
राम, लक्ष्मण और सीता गई।	राम, लक्ष्मण और सीता गए।
आप हमारे घर आ जाओ।	आप हमारे घर आ जाइए। तुम हमारे घर आ जाओ।

6. 'ने' और 'को' वाले वाक्यों में यह नियम कुछ बदल जाता है। आप जानते हैं कि कर्त्ता के साथ 'ने' लगाकर केवल भूतकाल का वाक्य बन सकता है, जैसे राम ने पाठ पढ़ा। इसमें क्रिया कर्त्ता के अनुसार नहीं, कर्म के अनुसार (लिंग, वचन) होती है, जैसे-

राम ने पाठ पढ़ा।

राम ने पुस्तक पढ़ी।
राम ने पुस्तकें पढ़ीं।

'ने' वाक्य में कर्म के साथ 'को' लगा हो तो क्रिया सदा अन्य पुरुष एकवचन ही रहेगी, जैसे-

राम ने पाठ को पढ़ा।
राम ने पुस्तक को पढ़ा।
राम ने पुस्तकों को पढ़ा।

7. विरामचिन्हों का ठीक प्रयोग

वाक्य का अर्थ ठीक-ठीक समझने में विराम चिन्ह भी सहायक होते हैं, इसलिए अच्छी हिन्दी लिखने के लिए हमें उचित स्थान पर उपयुक्त विराम चिन्ह लगाना चाहिए। विराम चिन्ह न लगाने से अर्थ अस्पष्ट होता है और कभी-कभी अर्थ का अनर्थ होने की सम्भावना भी होती है, जैसे-

- तुम उठो मत बैठे रहो। (अस्पष्ट)
- तुम उठो, मत बैठे रहो। (उठने का आदेश)
- तुम उठो मत, बैठे रहो। (न उठने का आदेश)
- राधा मोहन और कृष्णकांत पधार रहे हैं (दो लोग आ रहे हैं)
- राधा, मोहन और कृष्णकान्त पधार रहे हैं (तीन लोग आ रहे हैं)

लम्बे और जटिल वाक्यों में विराम चिन्हों की उपयोगिता और बढ़ जाती है, क्योंकि उन्हीं से मालूम होता है कि राजनीतिक का कौन-सा हिस्सा किस अंश से जुड़ा है और कहाँ किस पर कितना बल है।

8. वाक्यों के बारे में कुछ और

अच्छी हिन्दी लिखने में निपुणता पाने के लिए अच्छे वाक्यों का गठन होना चाहिए। अच्छे वाक्य से तात्पर्य है- सरल, स्पष्ट, चुस्त और आकर्षक वाक्य। हमें यथासम्भव जटिल वाक्य बनाने से बचना चाहिए, क्योंकि प्राय: बड़े वाक्यों में गलतियाँ होने की सम्भावना रहती है। बड़े वाक्य में जो कहना हो उसे दो-तीन-चार छोटे सरल वाक्यों में कह सकें तो अच्छा है। स्पष्टता के बारे में हम अनेक बार बता चुके हैं, क्योंकि अर्थ स्पष्ट होने पर ही लेखन की सार्थकता है। वाक्यों में अनावश्यक शब्द नही होने चाहिए और न ही अप्रचलित, कठिन या भारी भरकम शब्दों का प्रयोग। कुछ लोग समझते हैं कि जटिल, तत्सम (संस्कृत) शब्दों के प्रयोग से रौब पड़ता है, यह सच नहीं। सरलता में अनूठी सुन्दरता है, स्वयं देखिए-

- वाम पृष्ठ पर लिखित तर्कों का अवलोकन करें।
  बाईं और लिखे तर्क देखें।
- भारत लक्ष्य प्राप्ति के सन्निकट प्रतीत होता है।
  भारत लक्ष्य के पास लगता है।
- महिला लेखिकाओं का सम्मेलन हुआ।
  लेखिकाओं का सम्मेलन हुआ।
- नेताजी स्वयं अपना आत्मप्रचार करते हैं।
  नेताजी अपना प्रचार स्वयं करते हैं।
  नेता जी आत्मप्रचार करते हैं।

■

इकाई-4

हिन्दी के विविध रूप

प्रश्न 13. सम्पर्क भाषा से आप क्या समझते हैं? भारत की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

सम्पर्क भाषा

सम्पर्क भाषा या जनभाषा वह भाषा होती है, जो किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश के ऐसे लोगों के बीच पारस्परिक विचार-विनिमय के माध्यम का काम करे, जो एक-दूसरे की भाषा नहीं जानते। दूसरे शब्दों में विभिन्न भाषा-भाषी वर्गों के बीच सम्प्रेषण के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, वह सम्पर्क भाषा कहलाती है। इस प्रकार सम्पर्क भाषा की सामान्य परिभाषा होगी- 'एक भाषा-भाषी जिस भाषा के माध्यम से किसी दूसरी भाषा के बोलने वालों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके, उसे सम्पर्क भाषा या जनभाषा कहते हैं।

उदाहरण—आधुनिक काल में विश्व की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी है। उदाहरण के लिए, यदि कोई जापानी भाषा और स्वाहिली भाषा के मातृभाषी आपस में बातचीत करें तो वे आमतौर पर अंग्रेजी का ही प्रयोग करेंगे, हालाँकि अंग्रेजी उनमें से किसी की भी मातृभाषा नहीं है। अलग-अलग स्थानों पर ऐसी अनेक सम्पर्क भाषाएँ मिलती हैं। भारतीय उपमहाद्वीप और उसके आसपास के क्षेत्रों में हिन्दी भारत के अलावा नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, पाकिस्तान, तिब्बत, अफगानिस्तान, श्रीलंका इत्यादि में बहुत लोगों द्वारा समझी जाती है, आन्तरिक भारत में भी अंतरराजकीय भाषीय अन्तर को अंग्रेजी ने कम किया है।

भारत की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी

भारत एक बहुभाषी देश है और बहुभाषा-भाषी देश में सम्पर्क भाषा का विशेष महत्व है। अनेकता में एकता हमारी अनुपम परम्परा रही है। वास्तव में सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारत सदैव एक ही रहा है। हमारे इस विशाल देश में जहाँ अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं और जहाँ लोगों के रीति-रिवाजों, खान-पान, पहनावे और रहन-सहन तक में भिन्नता हो, वहाँ सम्पर्क भाषा ही एक ऐसी कड़ी है, जो एक छोर से दूसरे छोर के लोगों को जोड़ने और उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का काम करती है। डॉ. भोलानाथ ने सम्पर्क भाषा के प्रयोग क्षेत्र को तीन स्तरों पर विभाजित किया है- एक तो वह भाषा जो एक राज्य (जैसे महाराष्ट्र या असम) से दूसरे राज्य (जैसे बंगाल या असम) के राजकीय पत्र-व्यवहार में काम आए। दूसरे वह भाषा जो केन्द्र और राज्यों के बीच पत्र-व्यवहारों का माध्यम हो। और तीसरे वह भाषा जिसका प्रयोग एक क्षेत्र/प्रदेश का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र/प्रदेश के व्यक्ति से अपने निजी कामों में करें।

आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमारी यह कामना थी कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होगी, जिससे देश एकता के सूत्र में सदा के लिए जुड़ा रहेगा। महात्मा गाँधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि सभी महापुरुषों ने एक मत से इसका समर्थन किया, क्योंकि हिन्दी हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों की ही नहीं, अपितु राष्ट्रीय चेतना एवं स्वाधीनता आन्दोलन की अभिव्यक्ति की भाषा भी रही है।

भारत में हिन्दी बहुत पहले सम्पर्क भाषा के रूप में रही है इसीलिए यह बहुत पहले

राष्ट्रभाषा कहलाती है, क्योंकि हिन्दी की सार्वदेशिकता सम्पूर्ण भारत के सामाजिक स्वरूप का प्रतिफल है। भारत की विशालता के अनुरूप ही राष्ट्रभाषा विकसित हुई है, जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम कहीं भी होने वाले मेलों- चाहे वह प्रयाग में कुंभ हो अथवा अजमेर शरीफ की दरगाह हो या विभिन्न प्रदेशों की हमारी सांस्कृतिक एकता के आधार स्तंभ तीर्थस्थल हो सभी स्थानों पर आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिन्दी का ही अधिकतर प्रयोग होता है। इस प्रकार इस सांस्कृतिक परम्पराओं से हिन्दी ही सार्वदेशिक भाषा के रूप में लोकप्रिय है, विशेषकर दक्षिण और उत्तर के सांस्कृतिक सम्बन्धों की दृढ़ श्रृंखला के रूप में हिन्दी ही सशक्त भाषा बनी। हिन्दी का क्षेत्र विस्तृत है।

सम्पर्क भाषा हिन्दी का आयाम, जनभाषा हिन्दी, सबसे व्यापक और लोकप्रिय है जिसका प्रसार क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर से बढ़कर भारतीय उपमहाद्वीप तक है। शिक्षित, अर्धशिक्षित, अशिक्षित, तीनों वर्गों के लोग परस्पर बातचीत आदि के लिए और इस प्रकार मौखिक माध्यम में जनभाषा हिन्दी का व्यवहार करते हैं। भारत की लिंग्वे फ्रांका, लैंग्विज आव वाइडर कम्युनिकेशन, पैन इंडियन लैंग्विज, अन्तर प्रादेशिक भाषा, लोकभाषा, भारत-व्यापी भाषा, अखिल भारतीय भाषा- ये नाम जनभाषा हिन्दी के लिए प्रयुक्त होते हैं। हमारे देश की बहुभाषिकता के ढाँचे में हिन्दी की विभिन्न भौगोलिक और सामाजिक क्षेत्रों के अतिरिक्त भाषा-व्यवहार के क्षेत्रों में भी सम्पर्क सिद्धि का ऐसा प्रकार्य निष्पादित कर रही है, जिसका न केवल कोई विकल्प नहीं, अपितु जो हिन्दी की विविध भूमिकाओं को समग्रता के साथ निरूपित करने में भी समर्थ है।

हिन्दी ने पिछले हजार वर्षों में विचार-विनिमय का जो उत्तरदायित्व निभाया है, वह एक अनूठा उदाहरण है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि हिन्दी पहले राष्ट्रभाषा कहलाती थी, बाद में इसे सम्पर्क भाषा कहा जाने लगा और अब इसे राजभाषा बना देने से इसका क्षेत्र सीमित हो गया है। वस्तुत: यह उनका भ्रम है। जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि हिन्दी सदियों से सम्पर्क भाषा और राष्ट्रभाषा एक साथ रही है और आज भी है। भारत की संविधान सभा द्वारा 14 सितम्बर, 1949 को इसे राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लेने से उसके प्रयोग का क्षेत्र और विस्तृत हुआ है। जैसे- बंगला, तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम आदि को क्रमश: बंगाल, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल आदि की राजभाषा बनाया गया है। ऐसा होने से क्या उन भाषाओं का महत्व कम हो गया है? निश्चय ही नहीं। बल्कि इससे उन सभी भाषाओं का उत्तरदायित्व और प्रयोग क्षेत्र पहले से अधिक बढ़ गया है। जहाँ पहले केवल परस्पर बोलचाल में काम आती थी या उसमें साहित्य की रचना होती थी, वहीं अब प्रशासनिक कार्य भी हो रहे हैं। यही स्थिति हिन्दी की भी है। इस प्रकार हिन्दी सम्पर्क और राष्ट्रभाषा तो है ही, राजभाषा बनाकर इसे अतिरिक्त सम्मान प्रदान किया गया है। इस प्रसंग में डॉ. सुरेश कुमार का कथन बहुत ही प्रासंगिक है- हिन्दी को केवल सम्पर्क भाषा के रूप में देखना भूल होगी। हिन्दी, आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्‌भव काल से मध्यदेश के निवासियों के सामाजिक सम्प्रेषण तथा साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की भाषा रही है और अब भी है। भाषा-सम्पर्क की बदली हुई परिस्थितियों में (जो पहले फारसी-तुर्की- अरबी तथा बाद में मुख्य रूप से अंग्रेजी के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप विकसित हुई) तथा स्वतंत्र भारतीय गणराज्य में सभी भारतीय भाषाओं को अपने-अपने भौगोलिक क्षेत्र में व्यावसायिक और सांस्कृतिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग में लेने के निर्णय के बाद, हिन्दी

का सम्पर्क भाषा प्रकार्य, गुण और परिमाण की दृष्टि से इतना विकसित हो गया है कि उसके सम्बन्ध में विचार तथा अनुवादी कार्य, एक सैद्धान्तिक और व्यावहारिक आवश्यकता बन गए हैं। वास्तव में भाषा सम्पर्क की स्थिति ही किसी सम्पर्क भाषा के उद्भव और विकास को प्रेरित करती है या एक सुप्रतिष्ठित भाषा के सम्पर्क प्रकार्य को संपुष्ट करती है। हिन्दी अपने बोलियों के व्यवहारकर्ताओं के बीच सम्पर्क की स्थापना करती रही है और अब भी कर रही है, तथा वाह्य स्तर पर वह अन्य भारतीय भाषा भाषी समुदायों के मध्य एकमात्र सम्पर्क भाषा के रूप में उभर आई है, जिसके अब विविध आयाम विकसित हो चुके हैं। कुल मिलाकर हिन्दी का वर्तमान गौरवपूर्ण है। उसकी भूमिका आज भी सामान्य-जन को जोड़ने में सभी भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक कारगर है। ■

प्रश्न 13. (अ) राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी की विकास यात्रा का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

राष्ट्र भाषा का अभिप्राय

समाज में जिस भाषा का प्रयोग होता है साहित्य की भाषा उसी का परिष्कृत रूप है। भाषा का आदर्श रूप वही है, जिसमें विद्वान समुदाय अपने विचार प्रकट करता है। अर्थात् वह उसका शिक्षा, शासन और साहित्य की रचना के लिए प्रयोग करता है। इन्हीं कारणों से जब भाषा का क्षेत्र अधिक व्यापक और विस्तृत होकर समस्त राष्ट्र में व्याप्त हो जाता है, तब वह भाषा राष्ट्रभाषा कहलाती है।

राष्ट्र भाषा का सीधा अर्थ है राष्ट्र की वह भाषा, जिसके माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र में विचार विनिमय एवं सम्पर्क किया जा सके। जब किसी देश में कोई भाषा अपने क्षेत्र की सीमा को लाँघकर अन्य भाषा के क्षेत्रों में प्रवेश करके वहाँ के जनमानस के भाव और विचारों का माध्यम बन जाती है, तब वह राष्ट्र भाषा के रूप में स्थान प्राप्त करती है। वही भाषा सच्ची राष्ट्र भाषा हो सकती है, जिसकी प्रकृति सारे राष्ट्र की प्रकृति हो, जिस पर समस्त राष्ट्र का प्रेम हो। राष्ट्र के अधिकाधिक क्षेत्रों में बोली जाने वाली तथा समझी जाने वाली भाषा ही राष्ट्र भाषा कहलाती है। राष्ट्र भाषा में समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने, राष्ट्रीय भावना को जागृत करने तथा राष्ट्रीय गौरव की भावना को संवहन करने की शक्ति होती है। राष्ट्र भाषा में समस्त राष्ट्र के जनजीवन की आशाओं, आकांक्षाओं, भावनाओं एवं आदर्शों को चित्रित करने की अद्भुत शक्ति होती है। एक देश में कई भाषाएँ बोली जाती है, परन्तु उनमें से किसी एक भाषा को ही राष्ट्र भाषा का स्थान दिया जाता है। राष्ट्र भाषा राष्ट्र के बहुसंख्यक लोगों के द्वारा समझी और बोली जाने वाली भाषा होती है।

राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी

हिन्दी का स्वरूप एक हजार वर्ष का इतिहास इस बात का साक्षी है कि हिन्दी ग्यारहवीं शताब्दी से ही प्रायः अक्षुण्ण रूप से राष्ट्र भाषा के रूप में प्रतिष्ठित रही है। चाहे राजकीय प्रशासन के स्तर पर कभी संस्कृत, कभी फारसी और बाद में अंग्रेजी को मान्यता प्राप्त रही, किन्तु समूचे राष्ट्र के जनसमुदाय के आपसी सम्पर्क, संवाद-संचार, विचार-विमर्श, सांस्कृतिक ऐक्य और जीवन-व्यवहार का माध्यम हिन्दी ही रही।

ग्यारहवीं सदी से हिन्दी के अविर्भाव से लेकर आज तक राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी की विकास परम्परा को मुख्यतः तीन सोपानों में बाँटा जा सकता है- आदिकाल, मध्यकाल और आधुनिक काल। आदिकाल के आरम्भ से तेरहवीं सदी तक भारत में जिन लोक-बोलियों

...प्रयोग होता था, वे प्राय: संस्कृत की उत्तराधिकारिणी प्राकृत और अपभ्रंश से विकसित ...ई थीं। कहीं उन्हें देशी भाषा कहा गया, कहीं अवहट्ट और कहीं डींगल या पिंगल। ये ...भाषाएँ बोलचाल, लोकगीतों, लोक-वार्ताओं तथा कहीं-कहीं काव्य रचना का भी माध्यम ...। बौद्ध मत के अनुयायी भिक्षुओं, जैन-साधुओं, नाथपंथियों, जोगियों और महात्माओं ने ...भिन्न प्रदेशों में घूम-घूम कर वहाँ की स्थानीय बोलियों या उपभाषाओं में अपने विचार और ...द्धान्तों को प्रचारित-प्रसारित किया। असम और बंगाल से लेकर पंजाब तक और हिमालय ...े लेकर महाराष्ट्र तक सर्वत्र इन सिद्ध-साधुओं, मुनियों-योगियों ने जनता के मध्य जिन ...र्मिक-आध्यात्मिक-सांस्कृतिक चेतना का संचार किया, उसका माध्यम लोक-बोलियाँ या ...न-भाषाएँ ही थीं, जिन्हें पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, राहुल सांकृत्यायन तथा आचार्य हजारी ...प्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वानों ने पुरानी हिन्दी का नाम दिया है। इन्हीं के समानान्तर मैथिली-कोकिल विद्यापति ने जिस सुललित मधुर भाषा में राधाकृष्ण-प्रणय सम्बन्धी सरस पदावली की रचना की, उसे उन्होंने देसिल बअना (देशी भाषा) या अवहट्ट कहा। पंजाब के अद्दहमाण (अब्दुर्रहमान) ने संदेश रासक की रचना परवर्ती अपभ्रंश में की, जिसे पुरानी हिन्दी का ही पूर्ववर्ती रूप माना जा सकता है। रासो काव्यों की भाषा डींगल मानी गई, जो वास्तव में पुरानी हिन्दी का ही एक प्रकार है। सबसे पहले इसी पुरानी हिन्दी को हिन्दुई, हिन्दवी, अथवा हिन्दी के नाम से पहचान दी, अमीर खुसरो ने।

वस्तुत: आदिकाल में लोक-स्तर से लेकर शासन-स्तर तक और सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र से लेकर साहित्यिक क्षेत्र तक हिन्दी राष्ट्र भाषा की कोटि की ओर अग्रसर हो रही थी।

मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन के प्रभाव से हिन्दी भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक जनभाषा बन गई। भारत के विभिन्न वर्गों और क्षेत्रों में सांस्कृतिक ऐक्य के सूत्र होने का श्रेय हिन्दी को ही है। दक्षिण के विभिन्न दार्शनिक आचार्यों ने उत्तर भारत में आकर संस्कृत का दार्शनिक चिन्तन हिन्दी के माध्यम से लोक-मानस में संचारित किया। दूसरे शब्दों में कहें तो हिन्दी व्यावहारिक रूप से राष्ट्र भाषा बन गई।

आधुनिक काल में हिन्दी भारत की राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बन गई। वर्षों पहले अंग्रेजों द्वारा फैलाया गया भाषाई कूटनीति का जाल हमारी भाषा के लिए रक्षाकवच बन गया। विदेशी अंग्रेजी शासकों को समूचे भारत राष्ट्र में जिस भाषा का सर्वाधिक प्रयोग, प्रसार और प्रभाव दिखाई दिया, वह हिन्दी थी, जिसे वे लोग हिन्दुस्तानी कहते थे। चाहे पत्रकारिता का क्षेत्र हो चाहे स्वाधीनता संग्राम का, हर जगह हिन्दी ही जनता के भाव-विनिमय का माध्यम बनी। भारतेन्दु हरिशचन्द्र, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी सरीखे राष्ट्र-पुरुषों ने राष्ट्र भाषा हिन्दी के ही जरिए समूचे राष्ट्र से सम्पर्क किया और सफल रहे। तभी तो आजादी के बाद संविधान-सभा ने बहुमत से हिन्दी को राजभाषा का दर्जा देने का निर्णय लिया था।

भारत की राष्ट्र भाषा के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी ने इन्दौर में 20 अप्रैल 1935 को हिन्दी साहित्य सम्मेलन के चौबीसवें अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए कहा था- 'अंग्रेजी राष्ट्र भाषा कभी नहीं बन सकती। आज इसका साम्राज्य-सा जरूर दिखाई देता है। इससे बचने के लिए काफी प्रयत्न करते हुए भी हमारे राष्ट्रीय कार्यों में अंग्रेजी ने बहुत स्थान ले रखा है, लेकिन इससे हमें इस भ्रम में कभी न पड़ना चाहिए कि अंग्रेजी राष्ट्र भाषा बन रही है। इसकी परीक्षा प्रत्येक प्रान्तों में हम आसानी से करते हैं। बंगाल अथवा दक्षिण भारत को ही लीजिए, जहाँ अंग्रेजी का प्रभाव सबसे अधिक है। वहाँ यदि जनता की मार्फत हम कुछ

भी काम करना चाहते हैं तो वह आज हिन्दी द्वारा भले ही न कर सकें, पर अंग्रेजी द्वारा कर ही नहीं सकते। हिन्दी के दो-चार शब्दों से हम अपना भाव कुछ तो प्रकट कर ही देंगे। पर अंग्रेजी से तो इतना भी नहीं कर सकते। हिन्दुस्तान को अगर वास्तविक एक राष्ट्र बनाना है तो- चाहे कोई मानें या न मानें- राष्ट्र भाषा तो हिन्दी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता।'

संविधान सभा द्वारा राजभाषा संबन्धी निर्णय होने के कुछ सप्ताह बाद ही एक सार्वजनिक के लिए तत्कालीन उप-प्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल ने 23 अक्टूबर, 1949 के अपने संदेश में लिखा था- 'विधान परिषद ने राष्ट्र भाषा के विषय में निर्णय कर लिया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कुछ व्यक्तियों को इस फैसले से दुःख हुआ। कुछ संस्थानों ने भी इसका विरोध किया है। परन्तु जिस प्रकार और बातों में मतभेद हो जाता है, उसी प्रकार इस विषय में यदि मतभेद है और रहे तो उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। विधान में कई ऐसी बातें हैं, जिनसे सबका संतोष होना असम्भव है, परन्तु एक बार यदि विधान में कोई चीज शामिल हो जाए तो उसको स्वीकार कर लेना सबका कर्तव्य है, काम-से-काम जब तक कि ऐसी स्थिति पैदा न हो जाए, जिसमें सर्वसम्मति से या बहुमत से फिर कोई तब्दीली हो सके। अब जबकि हिन्दी को राष्ट्र भाषा की पदवी मिल गई है (यद्यपि कुछ वर्षों के लिए एक विदेशी भाषा के साथ-साथ उसको यह गौरव प्राप्त हुआ है), हर व्यक्ति का कर्तव्य है कि राष्ट्र भाषा की उन्नति करे और उसकी सेवा करे, जिससे कि सारे भारत में वह बिना किसी संकोच या संदेह के स्वीकृत हो। हिन्दी का पद महासागर की तरह विस्तृत होना चाहिए, जिसमें मिलकर और भाषाएँ अपना बहुमूल्य भाग ले सकें। राष्ट्र भाषा न तो किसी प्रान्त की है न किसी जाति की है, वह सारे भारत की भाषा है और उसके लिए यह आवश्यक है कि सारे भारत के लोग उसको सराहा सकें और अपनाने का गौरव हासिल कर सकें। ■

प्रश्न 14. राजभाषा के रूप में हिन्दी की विशेषताएँ, स्वरूप एवं क्षेत्र का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

राजभाषा के रूप में हिन्दी

कोई भी भाषा जितने विषयों में प्रयुक्त होती जाती है। उसके उतने ही अलग-अलग रूप भी विकसित होते जाते हैं। हिन्दी के साथ भी यही हुआ है। पहले वह केवल बोलचाल की भाषा थी। तो उसका एक बोलचाल का ही रूप था, फिर वह साहित्यिक भाषा बनी तो उसका एक साहित्यिक रूप भी विकसित हो गया। समाचार-पत्रों में पत्रकारिता हिन्दी का रूप उभर कर आया। वैसे ही खेलकूद की हिन्दी, बाजार की हिन्दी भी सामने आई। स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी भारत की राजभाषा घोषित की गई तथा उसका प्रयोग न्यूनाधिक रूप में कार्यालयों में होने लगा तो क्रमशः उसका एक राजभाषा रूप विकसित हो गया।

सामान्यतया राजभाषा भाषा के उस रूप को कहते हैं, जो राजकाज में प्रयुक्त होता है। भारत की आजादी के बाद एक राजभाषा आयोग की स्थापना की गई थी। उसी आयोग ने यह निर्णय लिया कि हिन्दी को भारत की राजभाषा बनाई जाए। तदनुसार संविधान में इसे राजभाषा घोषित किया गया था। प्रादेशिक प्रशासन में हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, मध्यप्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, छत्तीसगढ़, बिहार, झारखण्ड राजभाषा हिन्दी का प्रयोग कर रहे हैं। साथ ही दिल्ली में भी इसका प्रयोग हो रहा है और केन्द्रीय सरकार भी अपने अनेकानेक कार्यों में इसके प्रयोग को बढ़ावा दे रही है।

राजभाषा हिन्दी की विशेषताएँ

1. साहित्यिक हिन्दी में जहाँ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के माध्यम से अभिव्यक्ति होती है। राजभाषा हिन्दी में केवल अभिधा का ही प्रयोग होता है।

2. साहित्यिक हिन्दी में एकाधिकार्थता–चाहे शब्द के स्तर पर हो चाहे वाक्य के स्तर पर, काव्य-सौन्दर्य के अनुकूल मानी जाती है। इसके विपरीत राजभाषा हिन्दी में सटीक एकार्थता आवश्यक होती है।

3. राजभाषा अपने पारिभाषिक शब्दों में भी हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों से पूर्णतः भिन्न है। इसके अधिकांश शब्द प्रायः कार्यालयी प्रयोगों के लिए ही उसके अपने अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। जैसे-

आयुक्त – Commissioner
निविदा – Tender
विवाचक – Arbitrator
आयोग – Commission
प्रशासकीय – Administrative
मंत्रालय – Ministry
उन्मूलन – Abolition
आवंटन – Allotment आदि।

4. हिन्दी में सामान्यतः समस्रोतीय घटकों से ही शब्दों की रचना होती है। जैसे- संस्कृत शब्द निर्धन + संस्कृत भाव वाचक संज्ञा प्रत्यय 'ता' = निर्धनता। किन्तु अरबी–फारसी शब्द गरीब + ता = गरीबता। किन्तु अरबी–फारसी शब्द गरीब + अरबी–फारसी भाव वाचक संज्ञा प्रत्यय 'ई' = गरीबी। हिन्दी में न तो निर्धन + ई = निर्धनी बनेगा और न ही गरीब + ता = गरीबता। लेकिन राजभाषा में काफी सारे शब्द विषम स्रोतीय घटकों से बने हैं। जैसे-

उपकिरायेदार – Sub-letting
जिलाधीश – Collector
उपजिला – Sub-district
अरद्द – uncancelled
अस्टाँपित – unstamped
अपंजीकृत – unregistered
मुद्राबन्द – sealed
राशन–अधिकारी – ration-officer ... आदि।

अंग्रेजी, फ्रांसीसी, चीनी, रूसी आदि समृद्ध भाषाओं में एक ही शैली मिलती है, पर राजभाषा हिन्दी में एक ही शब्द के लिए कई शब्द हैं। जैसे-

(1) कार्यालय – दफ्तर – ऑफिस
(2) न्यायालय – अदालत – कोर्ट – कचहरी
(3) शपथ-पत्र – हलफनामा – एफिडेविट
(4) विवाह–शादी–निकाह आदि।

5. राजभाषा हिन्दी का प्रयोग राजतंत्र का कोई व्यक्ति करता है, जो प्रयोग के समय व्यक्ति न होकर तंत्र का एक अंग होता है। इसलिए वह वैयक्तिक रूप से कुछ न कहकर

निर्वेयक्तिक रूप से कहता है। यही कारण है कि हिन्दी की अन्य प्रयुक्तियों में जबकि कर्तृवाच्य की प्रधानता होती है। राजभाषा हिन्दी के कार्यालयी रूप में कर्मवाच्य की प्रधानता होती है। उसमें कथन व्यक्ति-सापेक्ष न होकर व्यक्ति-निरपेक्ष होता है। जैसे- सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है, कार्यवाही की जाए, स्वीकृति दी जा सकती है, आदि।

राजभाषा : स्वरूप एवं क्षेत्र

स्वतंत्रता पूर्व ब्रिटिश शासन काल में समस्त राजकाज अंग्रेजी में होता था। नस् 1947 में स्वतंत्रता की प्राप्ति के पश्चात् महसूस किया गया कि स्वतंत्र भारत देश की अपनी राजभाषा होनी चाहिए, एक ऐसी राजभाषा जिससे प्रशासनिक तौर पर पूरा देश जुड़ा रह सकें। भारतवर्ष के विचारों की अभिव्यक्ति करने वाली सम्पर्क भाषा हिन्दी की राजभाषा के रूप में स्वतंत्र भारत के संविधान में 14 सितम्बर, 1949 में राजभाषा समिति ने मान्यता दी। संविधान सभा में भारतीय संविधान के अन्तर्गत हिन्दी को राजभाषा घोषित करने का प्रस्ताव दक्षिण भारतीय नेता गोपालस्वामी अयंगार ने रखा था। इससे हिन्दी को देश की संस्कृति, सभ्यता, एकता तथा जनता की समसामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली भाषा के रूप में भारतीय संविधान ने देखा है। 26 जनवरी, 1950 से संविधान लागू हुआ और हिन्दी को राजभाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता मिली।

हमारे संविधान में हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किए जाने के साथ हिन्दी का परम्परागत अर्थ, स्वरूप तथा व्यवहार क्षेत्र व्यापकतर हो गया। हिन्दी के जिस रूप को राजभाषा स्वीकार किया गया है, वह वस्तुत: खड़ी बोली हिन्दी का परिनिष्ठित रूप है। जहाँ तक राजभाषा के स्वरूप का प्रश्न है, इसके सम्बन्ध में संविधान में कहा गया है कि इसकी शब्दावली मूलत: संस्कृत से ली जाएगी और गौणत: सभी भारतीय भाषाओं सहित विदेश की भाषाओं के भी प्रचलित शब्दों को अंगीकार किया जा सकता है। राजभाषा शब्दावली (जैसे- अधिसूचना, निदेश, अधिनियम, आकस्मिक अवकाश, अनुदान आदि) को देखकर यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी एक अलग प्रयुक्ति है। शब्द निर्माण के संबंध में राजभाषा के नियम बहुत ही लचीले हैं। यहाँ किसी भी दो या दो से अधिक भाषाओं के शब्दों की संधि आराम से की जा सकती है। जैसे उप जिला मजिस्ट्रेट, रेलगाड़ी आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि राजभाषा के अन्तर्गत शब्द निर्माण के नियम बहुत ही लचीले हैं।

राजभाषा का सम्बन्ध प्रशासनिक कार्य प्रणाली के संचालन से होने के कारण उसका सम्पर्क बुद्धिजीवियों, प्रशासकों, सरकारी कर्मचारियों तथा प्राय: शिक्षित समाज से होता है। स्पष्ट है कि राजभाषा जनमानस की भावनाओं-सपनों-चिन्तनों से सीधे-सीधे न जुड़कर एक अनौपचारिक माध्यम के रूप में प्रशासन तथा प्रशासित के बीच सेतु का काम करती है। बावजूद इसके सरकार की नीतियों को जनता तक पहुँचाने का यह एकमात्र माध्यम है। साधारण जनता में प्रशासन के प्रति आस्था उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि प्रशासन का सारा कामकाज जनता की भाषा में हो, जिससे प्रशासन और जनता के बीच की खाई को पाटा जा सके। यह राजभाषा हिन्दी सरकारी कार्यालयों में प्रयुक्त होकर कार्यालयी हिन्दी, सरकारी हिन्दी, प्रशासनिक हिन्दी के नाम से हिन्दी के एक नए स्वरूप को रेखांकित करती है। राजभाषा का प्रयोग सरकारी पत्र व्यवहार, प्रशासन, न्याय-व्यवस्था तथा सार्वजनिक कार्यों के लिए किया जाता है। जिसमें पारिभाषिक शब्दावली का बहुतायत प्रयोग किया जाता है। अधिकतर मामले में अनुवाद का सहारा लिए जाने के कारण यह कार्यालयी हिन्दी अपनी प्रकृति में निहायत

अनौपचारिक तथा सूचना प्रधान होती है। जहाँ तक राजभाषा हिन्दी के क्षेत्र का प्रश्न
इसके प्रयोग के तीन क्षेत्र हैं- 1. विधायिका, 2. कार्यपालिका और 3. न्यायपालिका। ये
के तीन प्रमुख अंग हैं।

राजभाषा का प्रयोग इन्हीं तीन प्रशासन के अंगों में होता है। विधायिका क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले संसद के दोनों सदन और राज्य विधान मंडल के दो सदन आते हैं। कोई भी सांसद/विधायक हिन्दी या अंग्रेजी या प्रादेशिक भाषा में विचार व्यक्त कर सकता है, परन्तु संसद में कार्य हिन्दी या अंग्रेजी में ही किया जाना प्रस्तावित है। कार्यपालिका क्षेत्र के अन्तर्गत मंत्रालय, विभाग, समस्त सरकारी कार्यालय, स्वायत्त संस्थाएँ, उपक्रम, कम्पनी आदि आते हैं। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी भाषा का अधिकाधिक प्रयोग प्रस्तावित हैं, जबकि राज्य स्तर पर वहाँ की राजभाषाएँ इस्तेमाल होती है। न्यायपालिका में राजभाषा का प्रयोग मुख्यत: दो क्षेत्रों में किया जाता है- कानून और उसके अनुरूप की जाने वाली कार्यवाही अर्थात् कानून, नियम, अध्यादेश, आदेश, विनियम, उपविधियाँ आदि और उनके आधार पर किसी मामले में की गई कार्रवाई और निर्णय आदि। राजभाषा के कार्य क्षेत्रों को अधिक स्पष्ट करते हुए आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा ने राष्ट्रभाषा हिन्दी- समस्याएँ एवं समाधान में लिखा है- राजभाषा का प्रयोग मुख्यत: चार क्षेत्रों में अभिप्रेत है- शासन, विधान, न्यायपालिका और कार्यपालिका। इन चारों में जिस भाषा का प्रयोग हो उसे राजभाषा कहेंगे। राजभाषा का यही अभिप्राय और उपयोग है। ■

प्रश्न 15. माध्यम भाषा से आप क्या समझते हैं? विषय के रूप में भाषा और माध्यम भाषा में अन्तर स्पष्ट करें।

उत्तर-

माध्यम भाषा का आशय

माध्यम भाषा विद्यालयी व शैक्षिक संस्थानों के लिए प्रयुक्त शब्द है, जिस भाषा में हम शिक्षा पाते हैं, वह माध्यम भाषा कहलाती है। बच्चों को कौन-सी भाषा में शिक्षा दी जाए, इस विषय पर बहुत सारे विद्वानों ने अपने विचार दिए हैं। महात्मा गाँधी जी और गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का मत था कि बच्चे को मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए। मातृभाषा भावाभिव्यक्ति एवं विचारों के आदान-प्रदान का आसान माध्यम होती है। प्राय: सभी जगह मातृभाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाता है। इस तरह मातृभाषा अन्य भाषाओं के मुकाबले में ज्ञान-विज्ञान सीखने का आसान साधन होती है। इस तरह प्रारम्भिक शिक्षा का माध्यम व आधारशिला मातृभाषा ही होती है। भारत अंग्रेजों से आजाद हो गया है, लेकिन आज भी अंग्रेजी से आजाद नहीं हो पाया है। भारत में आज भी अधिकतर निजी विद्यालयों में अंग्रेजी माध्यम से पढ़ाई होती है। मातृभाषा में पढ़ाई ज्यादातर सरकारी स्कूलों में होती है। इसलिए सभी मनोवैज्ञनिक तर्कों को छोड़कर भारत में अंग्रेजी भाषा को शिक्षा के माध्यम के तौर पर स्वीकार किया जाता है। जिसे समाज की भी अनौपचारिक मान्यता है। अंग्रेजी माध्यम स्कूलों में पढ़ना सामाजिक हैसियत की तरह देखा जाता है, जो कि बच्चे व परिवार को समाज में एक विशेष स्तर प्रदान करता है। लेकिन सत्य यह है कि मातृभाषा में ही विचार व चिंतन होता है। इसलिए विद्यालयी शिक्षा के किसी भी विषय का ज्ञान मातृभाषा के माध्यम से ही दिया जाना चाहिए। भारत में त्रिभाषा की संकल्पना के माध्यम से शिक्षा के माध्यम को स्पष्ट करने की कोशिश की गई है।

विषय के रूप में भाषा और माध्यम भाषा में अन्तर

विद्यालयी शिक्षा की पाठ्यचर्या में विभिन्न विषयों को पढ़ाया जाता है, जैसे गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन आदि। भाषा के विषयों के रूप में जैसे हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, उर्दू, तमिल, मलयालम इत्यादि भाषाओं का अध्ययन कराया जाता है। जब सभी वषयों को पढ़ने के लिए किसी एक भाषा को माध्यम बनाया जाए तो वह हमारी शिक्षा प्राप्त करने की भाषा हो जाती है। भारत में त्रिभाषा सूत्र के संदर्भ में बच्चा माध्यमिक स्तर तक तीन भाषाओं का अध्ययन कर लेता है। माध्यम की भाषा को भी विद्यार्थी एक विषय के तौर पर पढ़ सकता है। जैसे- हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी को शिक्षा का माध्यम भी बनाया गया है और उसे विद्यालयी पाठ्यक्रम में एक विषय के तौर पर भी पढ़ाया जाता है। भाषा वैज्ञानिकों का मत है कि विद्यालयों की पाठ्यचर्या में मातृभाषा को केन्द्रीय स्थान दिया जाए। मातृभाषा को स्कूलों में केवल एक विषय के तौर पर ही न पढ़ाया जाए, अपितु अन्य विषयों की शिक्षा भी उसी भाषा के माध्यम में दी जानी चाहिए।

माध्यम भाषा के रूप में हिन्दी

हिन्दी को माध्यम भाषा बनाने के लिए उसके रूप में वृद्धि करनी होगी। अभी तक हिन्दी के पास कुछ ही द्विभाषी, त्रिभाषी शब्दकोष हैं। इसी प्रकार विभिन्न विषयों के कोश, पर्याय कोश, व्युत्पत्ति कोश, संदर्भ कोश आदि भी बहुत कम हैं। इन्हें बनाना, प्रकाश में लाना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। इस आवश्यकता की पूर्ति तभी हो सकती है, जब कोश विज्ञान का प्रशिक्षण देकर विभिन्न बोलियों और विषयों के शब्दकोश बनाये जायें। अब रचनाकारों को साहित्य छोड़कर इस क्षेत्र में आना होगा। सृजनात्मक लेखन हिन्दी में बहुत हो चुका है। अब आवश्यकता है उपयोगी साहित्य की या उपयोगी पाठ्य-सामग्री को प्रकाश में लाने की। परिभाषिकों, संकेताक्षरों को इस समय हिन्दी की आवश्यकता है। विदेशी भाषा के प्रत्येक शब्द का धात्वर्थ अनुकूल हिन्दी नामान्तर गढ़ना होगा और हिन्दी के शब्दाभाव को दूर करना होगा। इस प्रकार के प्रयास विश्वविद्यालय के स्तर पर जब होंगे, शिक्षक और शोधार्थी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभायेंगे और नवीनतम ज्ञान को हिन्दी में रूपान्तरित करेंगे, तभी हिन्दी का माध्यम भाषा के रूप में विकास होगा। हिन्दी को माध्यम भाषा न तो दण्डात्मक प्रावधानों के द्वारा बनाया जा सकता है और न ही तुष्टीकरण की नीति के द्वारा। यह तभी सम्भव है, जब अंग्रेजी स्कूलों से बेहतर हिन्दी स्कूल खुल जाएँ और गुलामी को मानसिकता का भारतीयकरण अर्थात् हिन्दीकरण किया जाए। ■

प्रश्न 15. (अ) संचार भाषा के रूप में हिन्दी की उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।

अथवा

संचार भाषा के माध्यम के रूप में हिन्दी के विकास पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

संचार भाषा के रूप में हिन्दी

विभिन्न संचार माध्यमों में हिन्दी अभिव्यक्ति का साधन है। इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों का आधार पाकर हिन्दी दिक्-काल की सीमा पार कर वैश्विक धरातल को अपना चुकी है। हम विभिन्न संचार माध्यमों-आकाशवाणी, दूरदर्शन और कम्प्यूटर में हिन्दी के बढ़ते प्रयोग और प्रयुक्तियों को देख सकते हैं।

संचार भाषा मूलत: सम्प्रेषण की भाषा है। पूरे विश्व में इस समय अघोषित सूचना-युद्ध चल रहा है। समर्थ देशों ने अन्तरिक्ष में अपनी-अपनी प्रयोगशालाएँ स्थापित कर रखी हैं। कृत्रिम उपग्रहों के द्वारा वे भूगोल और खगोल की जानकारी का तेजी से संग्रहण कर रहे हैं। परिणामस्वरूप सूचनाओं का विस्फोट हो रहा है। इन सबने हिन्दी के समक्ष अनेक चुनौतियाँ खड़ी कर दी हैं। भारत भी पीछे नहीं है। इसने भी अन्तरिक्ष युग में प्रवेश कर लिया है। इसलिए हिन्दी को दूरसंचार की सक्षम भाषा के रूप में गठित करना इस समय बड़ी प्राथमिकता है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने एक नई संचार भाषा को पैदा किया, जिसमें संकेताक्षरों, लिपि-चिन्हों और कूट पदों की बहुलता है। सर्वोत्तम संचार भाषा उसे मान जाता है, जिसमें कम-से-कम वर्णाक्षरों का प्रयोग किया जाए। ऐसी ही भाषा को कम्प्यूटर में सुविधापूर्वक भरा जा सकता है। अंग्रेजी में क्योंकि कम वर्ण है, अत: वह दूरसंचार में छा रही है। इसके कारण है कि सर्वत्र अंग्रेजी का बोलबाला है। वह वर्तनी और वाक्य संरचना में इंग्लैण्ड की अंग्रेजी से भिन्न है। **डॉ. सूर्यप्रकाश दीक्षित** ने इसे कम्यूनिकेटिव इंग्लिश कहा है। वे आगे लिखते हैं, "इस शती में अमेरिकी जनजीवन ने साहित्यिक अंग्रेजी को प्रश्रय नहीं दिया, उसने वरीयता दी कामकाजी अंग्रेजी को। इस कम्प्यूटर के युग में अमेरिका वासियों ने अपनी भाषा को प्रयत्न-लाघव से जोड़कर हजारों-लाखों कोड बना डाले। आज वे सीधे सैटेलाइट से समाचार-पत्र का मुद्रण और प्रसारण कर लेते हैं। सम्प्रति कम्प्यूटर समस्त विश्व-ज्ञान को अपने अन्दर समाहित कर लेने की स्थिति में है। वे इस प्रकार संचार की सम्भावनाओं में निरन्तर वृद्धि करते आ रहे हैं।"

भारत अभी मैनुअल मुद्रण के युग में ही है। केवल टी.वी. के आगमन से अब दूरदर्शन को ग्लोबल टी.वी. बनाने की बाध्यता अनुभव हो रही है। यही स्थिति आकाशवाणी और पत्रकारिता की भी है। संचार माध्यमों के अनूकूल हिन्दी की एक नयी छाँव उभर रही है। समाचार-पत्रों की हिन्दी तो वर्षों पूर्व साहित्य हिन्दी से कुछ भिन्न हो गयी थी। फिल्मों में प्रयुक्त हिन्दी भी मानक हिन्दी से पर्याप्त भिन्न हो गयी है।

रेडियो और टी.वी. की हिन्दी भी धीरे-धीरे अपनी अलग पहचान बनाती हुई दिखाई दे रही है। इस समय इस रूपान्तर को योजनाबद्ध ढंग से करने की आवश्यकता है। संचार भाषा के रूप में हिन्दी नये कीर्तिमान स्थापित कर रही है। अभी तक हिन्दी के समाचार-पत्र विदेशी समाचार समितियों से भेजे गए बासी समाचारों को प्रकाशित करते थे। भाषा समाचार एजेंसी की स्थापना से इस स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। यही स्थिति समाचार की है। इससे हिन्दी समाचार-पत्रों की पठनीयता बढ़ी है। आकाशवाणी और दूरदर्शन की समाचार पत्रकारिता ने भी जनजीवन को पर्याप्त प्रभावित किया है। दूरदर्शन चैनलों की बढ़ती स्पर्धा ने भी संचार के रूप में हिन्दी का काफी विकास किया है। ■

प्रश्न 16. राजभाषा हिन्दी की संवैधानिक स्थिति पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

राजभाषा हिन्दी की संवैधानिक स्थिति

हमारे देश का संविधान 2 वर्ष, 11 माह तथा 18 दिन की अवधि में निर्मित हुआ तथा 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ था। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व देश में स्वतंत्रता आन्दोलन के साथ-साथ हिन्दी को देश की राष्ट्रभाषा बनाए जाने की सर्वाधिक माँग की जाती रही।

संविधान निर्माताओं ने हिन्दी को राष्ट्र हिन्दी बनाए जाने की माँग की दृष्टिगत रखते हुए संविधान सभा ने 14/9/1949 को हिन्दी को संघ की राजभाषा स्वीकार करते हुए राजभाषा हिन्दी के संबंध में प्रावधान किए।

संविधान के भाग 5 एवं 6 के क्रमश: अनुच्छेद 120 तथा 210 में तथा भाग 17 के अनुच्छेद 343, 344, 345, 346, 347, 348, 349, 350 तथा 351 में राजभाषा हिन्दी के संबंध में निम्न प्रावधान किए गए हैं। इन प्रावधानों के साथ ही संप्रति भारत की 22 भाषाओं को संविधान की अनुसूची-8 में मान्यता दी गई है। ये भाषाएँ इस प्रकार हैं-

हिन्दी, पंजाबी, उर्दू, कश्मीरी, संस्कृत, असमिया, ओड़िया, बांगला, गुजराती, मराठी, सिंधी, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़, मणिपुरी, कोंकणी, नेपाली, संथाली, मैथिली, बोड़ो, डोगरी।

सन् 1967 में 21वें संविधान संशोधन द्वारा सिंधी भाषा 8वीं अनुसूची में जोड़ी गई थी। सन् 1992 में 71वें संविधान संशोधन द्वारा कोंकणी, नेपाली तथा मणिपुरी भाषाएँ 8वीं अनुसूची में जोड़ी गई थीं। सन् 2003 में 92वें संविधान संशोधन द्वारा संथाली, मैथिली, बोडो तथा डोगरी भाषाएँ 8वीं अनुसूची में जोड़ी गई थीं।

संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा

संविधान के अनुच्छेद 120 के अन्तर्गत प्रावधान

संविधान के अनुच्छेद 120 के अन्तर्गत संसद में प्रयोग की जाने वाली भाषा के संबंध में प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 120 के खंड (1) के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है कि संविधान के भाग-17 में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए संसद में कार्य हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाएगा, परन्तु यथास्थिति लोक सभा का अध्यक्ष या राज्य सभा का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति सदन में किसी सदस्य को, जो हिन्दी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, तो उसे अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकता है।

अनुच्छेद 120 के खंड (2) के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है कि जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे, तब तक संविधान के प्रारम्भ के समय से पन्द्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद इस प्रकार प्रभावी होगा।

विधान मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा

संविधान के अनुच्छेद 210 के अन्तर्गत प्रावधान

अनुच्छेद 210 के खंड (1) के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है कि संविधान के भाग-17 में किसी बात के होते हुए भी किन्तु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाएगा, किन्तु यथास्थिति, विधानसभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति सदन में किसी भी सदस्य को, जो अपने राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं अथवा हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से किसी भी भाषा में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, तो उसे अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकता है।

अनुच्छेद 210 के खंड (2) के अन्तर्गत प्रावधान किया गया है कि जब तक राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे, तब तक संविधान के लागू होने के समय से पन्द्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के बाद यह अनुच्छेद प्रभावी होगा।

संघ की राजभाषा

संविधान क भाग-17 के अनु. 343 से 351 तक में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान

अनुच्छेद 343 के खंड (1) के अनुसार देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी संघ की राजभाषा है। संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। तथापि संविधान के इसी अनुच्छेद 343 के खंड (2) के अनुसार किसी बात के होते हुए भी इस संविधान के लागू होने के समय से पन्द्रह वर्ष की अवधि (अर्थात् 26 जनवरी, 1965) तक संघ के उन सभी राजकीय प्रयोजनों के लिए वह संविधान के लागू होने के समय से ठीक पहले प्रयोग की जाती थी। (अर्थात् 26 जनवरी, 1965 तक अंग्रेजी उन सभी प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाती रहेगी, जिनके लिए वह संविधान के लागू होने के समय से पूर्व प्रयोग की जाती थी।)

अनुच्छेद 344, राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद की समिति

राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ से पाँच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात् ऐसे प्रारम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा, एक आयोग गठित करेगा, जो एक अध्यक्ष और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलाकर बनेगा, जिनको राष्ट्रपति नियुक्त करे और आदेश में आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित की जाएगी।

एक समिति गठित की जाएगी जो तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी, जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे और दस राज्य सभा के सदस्य होंगे, जो क्रमश: लोक सभा के सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।

अनुच्छेद 345 से 346 तक में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान

अनुच्छेद 345, राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ

अनुच्छेद 345 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान-मंडल विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा।

अनुच्छेद 346. एक राज्य और दूसरे के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा

संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगी-

यदि दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिन्दी भाषा होगी तो ऐसी पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा।

अनुच्छेद 347 से 348 तक में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान

उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

अनुच्छेद 347. किसी राज्य की जनसंख्या के किसी भाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में विशेष उपबंध

यदि इस निमित्त माँग किए जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निर्देश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

अनुच्छेद 348. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा

जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करें तब तक उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियाँ अंग्रेजी भाषा में होंगी।

अनुच्छेद 349 से 350 तक में राजभाषा सम्बन्धी प्रावधान

व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा

अनुच्छेद 349. भाषा से सम्बन्धित कुछ विधियाँ अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया

अनुच्छेद 350, व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा

प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निर्देश दे सकेगा, जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है।

भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

अनुच्छेद 351. हिन्दी भाषा के विकास के लिए निर्देश

संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे, जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहाँ आवश्यक या वांछनीय हो वहाँ उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे। ■

इकाई-5

हिन्दी में कम्प्यूटर सुविधाएँ

प्रश्न 17. हिन्दी के कम्प्यूटर के प्रयोग पर प्रकाश डालिए। अथवा
निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
(1) कम्प्यूटर तकनीक एवं हिन्दी भाषा
(2) हिन्दी में शब्द-संसाधन
(3) हिन्दी में आँकड़ा, संसाधन
(4) हिन्दी वर्तनी शोधक
(5) मशीनी अनुवाद- कम्प्यूटर एवं हिन्दी
(6) कम्प्यूटर तथा हिन्दी भाषा शिक्षण।

उत्तर-

कम्प्यूटर और हिन्दी भाषा

भारतीय भाषाओं में काम करने वाले सॉफ्टवेयरों के विकास से सबसे अधिक क्रान्ति सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आई है। इन भाषाओं में सबसे पहले हिन्दी भाषा में काम करने के लिए सॉफ्टवेयर विकसित किए गए। भारत में पहला व्यक्तिगत हिन्दी कम्प्यूटर 15 दिसम्बर, 1997 को प्रस्तुत किया गया। यह पहली और एकमात्र कम्प्यूटर संचालित हिन्दी प्रणाली है और इसका डाटा विकास का कार्य आई.बी.एम. ने किया है। आई.बी.एम. ने हिन्दी कम्प्यूटर डॉस के रूप में पी.सी. 386 का कम मूल्यों में निर्यात करने का निर्णय लिया। अब ये कम्प्यूटर हिन्दी भाषी लोगों के लिए सस्ते दामों पर उपलब्ध हैं। इनसे बेहतर प्रणाली के कम्प्यूटर जैसे पेन्टीयम-I, II, III और IV उपलब्ध हैं और इस क्षेत्र में अधिकाधिक प्रयोग किए जा रहे हैं।

फरवरी, 1998 में क्षेत्रीय भाषा में कम्प्यूटर प्रणाली विकसित करने का काम भारत की दो सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर कम्पनियों एम.ए.आई. और एन.आई.एस.सी.ओ.एम. ने प्रारम्भ किया। इन्होंने गैर अंग्रेजी भाषी लोगों की आवश्यकता को देखते हुए भारत भाषा नाम से एक परियोजना की शुरूआत की। गोदरेज बायस, एच.सी.एल. सूचना प्रणाली, निट, टाटा. आई.बी.एम. तथा जेनिथ ने इस परियोजना में सहभागिता निभाने पर सहमति जताई। इनके अतिरिक्त सी-डैक, सॉफ्टेक, सोनाटा, साइरस, ए.सी.ई.एस.एस. आर.जी. वी-सॉफ्ट, आर.के. कम्प्यूटर्स नामक कम्पनियों ने आई.एस.एम. अक्षर फॉर विंडोज, प्रकाशक, श्रीलिपि, आकृति, विंकी, ए.पी.एस. सुविंडोज आई.एस.एम. नामक सॉफ्टवेयर तैयार किए हैं, जो अंग्रेजी और हिन्दी के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं में भी काम करते हैं। इन सभी का प्रयोग एम.एस. वर्ड और एक्सल, पॉवर पॉइंट के वातावरण में कार्य करने के लिए किया जाता है। ये सभी विंडोज 95, 98, 2000 के प्लेटफार्म पर कार्य करते हैं। आई.एस.एम. प्रकाशक, श्रीलिपि सभी भारतीय भाषाओं में कार्य कर रहा है। आकृति में हिन्दी और मराठी भाषा उपलब्ध है। इस परियोजना के अन्तर्गत देवनागरी, गुजराती, गुरुमुखी लिपियों के लिए शुशा नाम की एक नई फॉन्ट प्रणाली का विकास कर लिया गया है तथा अब बांग्ला, असमिया और उड़िया लिपियों के लिए भी इसी तरह की फॉन्ट प्रणाली उपलब्ध होने जा रही है।

कम्प्यूटर तकनीक एवं हिन्दी भाषा

कम्प्यूटर एवं भाषा के मध्य द्विदिशात्मक एवं द्विपक्षीय सम्बन्ध भाषा अपने कुछ प्रयोजनों को सिद्ध करने के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग साधन के रूप करती है तथा कम्प्यूटर कुछ प्रयोजनों की सिद्धि के लिए भाषा का प्रयोग साधन के रूप में करता है, यथा- भाषा पर आधारित विभिन्न कार्य, जैसे- मुद्रण, टंकण, कोश-निर्माण, भाषा-शिक्षण सूचना-संचयन तथा सम्पादन आदि के लिए कम्प्यूटर का उपयोग एक उपकरण के रूप में किया जाता है। इसी प्रकार कम्प्यूटर भी भाषा के व्याकरण और शब्द-कोश का प्रयोग कर अपने अनेक ज्ञानात्मक एवं कृत्रिम बुद्धि आधारित कार्य, जैसे- मशीनी अनुवाद, पाठ-बोधन, पाठ-प्रजनन, Text generation प्रणाली, मानव-मशीन, इंटरफेस, स्पीच टू टेक्स्ट आदि सम्पन्न करता है। संक्षेप में कम्प्यूटर भाषा को उपकरण के रूप में प्रयोग करता है तथा भाषिक व्याकरण एकम् नियम आदि के लिए भाषा पर आधारित रहता है। कम्प्यूटर की सबसे बड़ी एवं पहली आवश्यकता है- भाषा में रूपों की विविधता को कम से कम करना। उदाहरण के लिए एक ही भाषा के एक अक्षर को दो रूपों में लिखना या संयुक्त अक्षर के दो-दो रूप व्यवहार में लाना भाषा की व्यावहारिकता में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। ऐसे में कुंजी पटल में प्रत्येक वर्ण के लिए, कुंजियों की संख्या दोगुनी करनी पड़ेगी। अर्थात् जैसे हिन्दी के अक्षर अ के लिए दो रूप और अ रखे जाएँ या झ के लिये झ या फ दोनों रूप माने जाएँ तो एक ही शब्द के लिए दो कुंजी बनानी होंगी। इसी प्रकार संयुक्ताक्षर की भी समस्या आती है, जैसे- 'क्त' और 'क्त' अथवा 'द्य' और 'द्य' आदि यहाँ भी एकरूपता रखनी होगी। इसी प्रकार की अन्य भाषायी एकरूपता की आवश्यकता कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली की सुगमता एवं सरलता के लिए आवश्यक है।

शब्द-संसाधन-शब्द संसाधन कुछ अवयवों से मिलकर बनता है। ये अवयव आपस में मिल-जुलकर एक व्यवस्था का निर्माण करते हैं। शब्द-संसाधनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1. बाह्य उपकरण—बाह्य उपकरण से पाठ को स्मृति तक प्रेषित किया जाता है तथा वहाँ से पाठ को प्राप्त किया जा सकता है। इसे भी दो वर्गों में रखा जा सकता है- (1) इनपुट डिवाइस तथा (2) आउटपुट डिवाइस।

2. इनपुट डिवाइस—इसके अन्तर्गत कुंजीपटल फ्लॉपी डिस्क ड्राइव, स्कैनर तथा माउस आदि आते हैं। इनका वर्णन इस प्रकार है-

(क) कुंजीपटल—यह वह उपकरण है जहाँ अथवा जिसके द्वारा पाठ को शब्द संसाधक में टंकित करके भेजा जाता है तथा स्क्रीन, मॉनीटर अथवा फलक या परदे पर दर्शाया जाता है। एक अच्छा टर्मिनल तथा लगभग 80 अक्षर प्रति पंक्ति वाली लगभग 24 पंक्तियाँ प्रदर्शित कर सकता है। आजकल हिन्दी में कम्प्यूटर पर कार्य करने के लिए विभिन्न प्रकार के कुंजी-पटल उपलब्ध हैं।

(ख) फ्लॉपी डिस्क ड्राइव—यह टेपरिकार्डर से मिलता-जुलता उपकरण है। इसमें फ्लॉपी डिस्क से सूचना प्राप्त करने का काम लिया जाता है। इसकी एक विशेषता यह है कि यह इनपुट डिवाइस होने के साथ-साथ आउटपुट डिवाइस उपकरण भी है। इसकी सहायता से कम्प्यूटर में डाले गए पाठ को इसी के माध्यम से फ्लॉपी डिस्क में डालकर प्राप्त भी किया जा सकता है।

(ग) माउस अथवा प्वाइंटिंग डिवाइस—आधुनिक कम्प्यूटरों में माउस द्वारा भी फ्लापी डिस्क या स्कैनर के पाठ प्राप्त कर स्मृति में भेजने की सुविधा होती है। यद्यपि यह कार्यक्षमता में वृद्धि में सहायक है, फिर भी इसे इनपुट डिवाइस में रखा जाता है।

(घ) स्कैनर—यह फोटोस्टेट करने वाली मशीन जैसा ही उपकरण है। इसमें एक काँच की सतह होती है। जिस पाठ अथवा पृष्ठ को कम्प्यूटर में स्मृति में ले जाना होता है, उसे कांच की सतह पर रखकर स्कैन किया जाता है।

2. आउटपुट डिवाइस—यह केन्द्रीय संसाधक इकाई से पुनः सूचना प्राप्त करती है तथा उन्हें मानव द्वारा पढ़ने योग्य बनाती है। इसमे फ्लापी डिस्क ड्राइव तथा प्रिन्टर आदि आते हैं। कम्प्यूटर को प्रिन्ट का आदेश देकर प्रिन्टर के माध्यम से पाठ को प्राप्त किया जा सकता है।

हिन्दी में शब्द-संसाधन

कम्प्यूटर आधुनिक युग की तकनीकी क्रान्ति का चमत्कार है और यह आया भी पश्चिम से है। हिन्दी भाषा को कम्प्यूटर पर अपनी सामर्थ्य का प्रदर्शन करन के लिए अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा, जिसमें हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के लिए उपयुक्त कुंजीपटल का विकास हार्डवेयर सम्बन्धी सवसे वड़ी और पहली चुनौती थी। आरम्भ में यांत्रित टाइपराइटरों की प्रणाली पर ही देवनागरी लिपि के कुंजी-पटल का विकास किया गया, जो आज भी काम में आ रहा है। भारत वहुभाषी देश है, फिर भी अधिकांश भाषाओं का शब्द-सम्पदा का आधार संस्कृत होने तथा ध्वन्यात्मक लिपि होने से सभी भारतीय भाषाओं की लिपियों के लिए एक समन्वित कोड विकसित करने के लिए देश के विज्ञान-विशेषज्ञ प्रयासरत् रहे, जिससे कि एक ही कुंजीपटल से अधिक से अधिक लिपियों का टंकण हो सके। इस प्रयास में भारत सरकार के तत्कालीन इलेक्ट्रॉनिक विभाग, I.I.T., कानपुर तथा सी-डेक का महत्वपूर्ण योग रहा। संस्कृत का आधार तथा ब्राह्मी लिपि के वैज्ञानिक आधार पर हिन्दी तथा अन्य ग्यारह भाषाओं का एक समन्वित कोड विकसित होने में सफलता मिली। इस कुंजी-पटल को ध्वन्यात्मक कुंजी-पटल की संज्ञा दी जाती है।

हिन्दी में आँकड़ा-संसाधन

हिन्दी में आँकड़ों के संसाधन के लिए द्वि-भाषित संकलन अथवा आँकड़ा संचय प्रबन्ध-तंत्र उपलब्ध है। इनका भी केवल डॉट मैट्रिक्स अथवा लेजर प्रिन्टर के साथ ही प्रयोग किया जाता है। हिदी के लिए कम्प्यूटर की विभिन्न भाषाओं, यथा-सी, बेसिक कंपाइलर, डी-बेस द्विभाषिक आँकड़ा-संचय प्रबन्ध-तंत्र आदि तैयार किए जाते हैं। फ्लॉपी से सुलिपि साफ्टवेयर कम्प्यूटर, पर्सनल कम्प्यूटर को भी द्विभाषिक (हिन्दी तथा अंग्रेजी) रूप में चलाया जा सकता है। यहाँ तक कि डी-बेस, फॉक्स-प्रो, कोबोल, पास्कल, एक्सल, लोट्स, ऑरेकल इत्यादि मानक पैकेजों को भी द्वारा मानकीकृत देवनागरी के कुंजी-पटल तथा हिन्दी के मैनुअल टाइपराइटर के कुंजीपटल दोनों के ही अनुरूप है।

हिन्दी-वर्तनी-शोधक

वर्तनी का अर्थ है 'वर्ण-विन्यास'। किसी शब्द को लिखने में वर्णों का जो अनुक्रम होता है, उसे हिन्दी में उस शब्द की वर्तनी कहते हैं। इसी को अंग्रेजी में स्पेलिंग तथा उर्दू

में हिज्जे कहते हैं। भाषा की शुद्धता के लिए वर्तनी की शुद्धता में उच्चारण एवं लिपि का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी के विरोध में उठने वाले स्वरों में प्रमुखत: कठिन व्याकरण अथवा व्याकरण सम्बन्धी अनिश्चितता एवं लिपि सम्बन्धी चिन्हों की अस्पष्टता, विशेष मुद्दे रहे हैं। कम्प्यूटर के प्रयोग से इन समस्याओं के समाधान में काफी हद तक सुविधा मिली है।

हिन्दी की लिपि देवनागरी लिपि है। इसमें कुछ ध्वनियों के लिपि-चिन्ह मिलते-जुलते हैं। जैसे- व और ब, भ और म, घ और ध, र, व और ख। इसी प्रकार द्ध और ध, क्ष और छ तथा श, ष, स के उच्चारण-भेद पर गंभीरता न रखने से भी अशुद्धि हो जाती है। कम्प्यूटर के प्रयोग से अब हिन्दी की वर्तनी की शुद्धता को सुनिश्चित करने में सहायता प्राप्त हो रही है। हिन्दी में वर्तनी-शोधन के लिए ओशो कम्यून इंटरनेशनल ने एक हिन्दी वर्तनी-जाँच-ओशो-स्पेल बाईंडर तथा हिन्दी शब्द-कोश-हिन्दी शब्द-सागर का विकास किया है। इसका प्रयोग मैकेन्टॉश कम्प्यूटर पर किया जा सकता है। ओशो स्पेल-बाईंडर एक हिन्दी प्रूफरीडर है, जो 1000 शब्द प्रति मिनट की गति से जाँच कार्य कर सकता है और यह इस प्रकार तैयार किया गया है कि इसके द्वारा सामान्य प्रचलन में होने वाली गलतियाँ दूर की जा सकें तथा वर्तनी में भी सुधार किया जा सकें।

मशीनी अनुवाद : कम्प्यूटर और हिन्दी

भारत बहुभाषा-भाषी देश है। राजभाषा हिन्दी स्वीकृत होने के पश्चात् विभिन्न प्रान्तों में जहाँ हिन्दी से भिन्न भाषाएँ राजभाषा हैं, वहाँ सरकारी कामकाज में सुविधा एवं एकरूपता की दृष्टि से संविधान के आरम्भ से ही हिन्दी के प्राधिकृत पाठ के रूप में अंग्रेजी में बने नियम आदि का अनुवाद आवश्यक बताया गया था। आरम्भ में यह कार्य भाषा-विशेषज्ञों की देखरेख में होता रहा है, किन्तु कम्प्यूटर पर पहला अनुवाद 7 जनवरी, 1974 में हुआ था, जिसमें गणित से संबंधित कुल साठ वाक्यों का रूसी से अंग्रेजी में अनुवाद किया गया था। भारत में भी हिन्दी से अंग्रेजी तथा इतर भारतीय भाषाओं के अनुवाद के साथ-साथ विविध भारतीय भाषाओं से हिन्दी एवं अंग्रेजी में अनुवाद की दशा में गम्भीर प्रयास किए गए हैं।

कम्प्यूटर तथा हिन्दी भाषा-शिक्षण

केन्द्रीय राजभाषा विभाग के प्रयासों से कम्प्यूटर पर हिन्दी भाषा के शिक्षण का प्रयास किया जा रहा है। कम्प्यूटर पर टाइपराइटर की अपेक्षा अधिक तीव्र गति से टंकण कार्य किया जाना सम्भव है। अत: दृश्य-पटल के माध्यम से अशुद्धि शोधन भी शीघ्रता से सम्भव है। कम्प्यूटर पर शब्द-कोश की सुविधा भी उपलब्ध है। एक्जीक्यूटिव विकल्प का चयन करने से हिन्दी शब्दों और वाक्यों को अंग्रेजी की रोमन लिपि में टंकित किया जा सकता है, जो दृश्य-पटल पर स्वयमेव देवनागरी वर्गों में परिणत हो जाता है। इस प्रकार हिन्दी लिपि ध्वनि आधारित देवनागरी होने के कारण कोई भी व्यक्ति हिन्दी की वर्णमाला के अक्षरों का तथा भाषा का ज्ञान सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकता है। हिन्दी सीखने वाला व्यक्ति भाषा के स्वभाव को जानकर हिन्दी सीखकर व्यावहारिक प्रवीणता प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार देवनागरी के अंकों को सहजता से सीखा जा सकता है। एच.टी.एल. मद्रास द्वारा विद्यार्थी निदेशित बहुमुखी क्षमता वाला विद्या पैकेज बनाया गया है। इसका कार्य ही प्रमुख रूप से हिन्दी भाषा-शिक्षण का है। यह विदेशी पर्यटकों के लिए अति लाभकारी सिद्ध हुआ है। ■

प्रश्न 18. मशीनी अनुवाद से आप क्या समझते हैं? इसके उद्भव एवं विकास का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

मशीनी अनुवाद का अर्थ

मशीनी अनुवाद वास्तव में अन्तरविद्यावर्ती विषय है। इसका प्रथम और प्रमुख भाग भाषा-विश्लेषण, द्वितीय या बहुभाषी कोश-निर्माण एवं भाषा-आधार पर विश्लेषण और मूल्यांकन करना है। दूसरी ओर कम्प्यूटर विशेषज्ञों द्वारा कम्प्यूटर के आपेक्षिक कार्यक्रमों के द्वारा अनुवाद की विभिन्न प्रक्रियाओं दोनों भाषाओं के व्याकरणिक सांस्कृतिक नियमों के आधार पर अनुवाद कार्य सम्पन्न करने के लिए सॉफ्टवेयर विकसित करना है।

मशीनी अनुवाद का अर्थ है कि अनुवाद का कार्य कम्प्यूटर सम्पन्न करता है। जिस प्रकार अनुवादक क्रमशः विश्लेषण, अन्तरण और समायोजन करता है, उसी प्रकार कम्प्यूटर को भी इन तीनों आधारों से गुजरना होता है। अनुवादक स्त्रोत भाषा के पाठ को पढ़ाता है, उसका विश्लेषण कर तथ्य ग्रहण करता है। कोष-आधार पर लक्ष्य भाषा में अन्तरण करता है। इस प्रक्रिया में लक्ष्य-भाषा की संरचना और सांस्कृतिक आधारों पर समायोजन किया जाता है। कम्प्यूटर में ये प्रक्रिया विशेष सॉफ्टवेयर के माध्यम से की जाती है। विश्लेषण से सम्बन्धित प्रक्रिया सामग्री को पार्सर तथा समायोजन सम्बन्धी प्रक्रिया को जेनेरेटर नाम दिए जाते हैं।

मशीनी अनुवाद का उद्भव और विकास

मशीनी अनुवाद का प्रारम्भ बीसवीं शताब्दी के पाँचवें दशक से मान सकते हैं। वैसे इसका प्रारम्भ सन् 1993 से हो चुका था। इस समय अनुवाद को कोड ब्रेकिंग के रूप में स्वीकार किया गया था। इस समय द्विभाषी शब्दकोशों का महत्व दिया गया है। इससे द्विभाषी कोशों में प्रविष्टियों का अवसर मिला। मशीनी अनुवाद की वास्तविक शुरूआत वारेन टीवर के 1947 के आलेख ऑन ट्रांसलेशन को माना जा सकता है। इसी समय टाउन विश्वविद्यालय में मशीनी अनुवाद की प्रक्रिया शुरू की गई। शुरू में रूसी-अंग्रेजी अनुवाद सिस्ट्रान तंत्र से अपनाया गया। इसके बाद अंतरिक्ष विज्ञान की महत्वपूर्ण जानकारियों को अनुवाद के साथ महत्वपूर्ण गुणवत्ता को अपनाने का प्रयत्न किया गया। इसी समय उच्च गुणवत्ता अनुवाद तंत्र अमेरिका की ALPAC समिति के द्वारा 1964 से दो वर्ष तक मशीनी अनुवाद पर कार्य करते हुए इस कठिन कार्य को सम्पन्न करने के लिए विश्लेषण सिद्धान्त विकसित करने पर बल दिया गया। इसके आधार पर अमेरिका और अन्य देशों में भाषा-विश्लेषकों का विकास किया गया।

मशीनी अनुवाद में क्रान्तिकारी रूप 1976 में आया, जब कनाडा प्रसारण सेवा द्वारा TAUMMETEO अनुवाद तंत्र का विकास किया गया। इसके साथ यूरोपीय भाषाओं के अनुवाद हेतु सिस्ट्रन अनुवाद तंत्र विकसित किया गया। इस प्रकार ARIANE, METAL, SUSY और MU अनुवाद तंत्र विकसित किए गए।

इस समय तक अनुवाद में भाषाविदों को महत्व नहीं दिया जाता था। अनुवादकों का उपयोग केवल इनपुट के पूर्व सम्पादन और आउटपुट के बाद पश्च सम्पादन में किया जाता था।

भाषा-संसाधन के मशीनी अनुवाद हेतु कापलान और ब्रेसनिन का लैक्सीकल फंक्शनल ग्रामर का सिद्धान्त पार्सर निर्माण हेतु 1979 ई. में सामने आया। इसी आधार पर के.बी.एम.टी. अनुवाद तंत्र अमेरिका के कार्नेजी मेलन विश्वविद्यालय द्वारा विकसित किया गया। कम्प्यूटर

भाषा-विश्लेषण सिद्धान्त विकसित हुए। इसी आधार पर पार्सर निर्माण हेतु कम्प्यूटर भाषा-विश्लेषक सिद्धान्तों में 'ट्री एडज्वाइनिंग ग्रामर' (टी.ए.जी.) डेफिनिट क्लाज ग्रामर (डी.सी.जी.) सामने आए हैं।

मशीनी अनुवाद के भेद

मशीनी अनुवाद-मशीनी अनुवाद का प्रारम्भिक रूप शाब्दिक अनुवाद है। इसे WORD EXPERT नाम दिया जाता है। इस प्रक्रिया में स्त्रोतभाषा के वाक्यों में प्रयुक्त शब्दों के लक्ष्यभाषा के भाषानुकूल बदला जाता है। इसके साथ लक्ष्यभाषा के अनुरूप वाक्य को पुनः नियोजित किया जाता है। इसे SYSTRAN तकनीक के अन्तर्गत माना गया है।

संरचनात्मक अन्तरण-इस अनुवाद में सर्वप्रथम स्त्रोत-भाषा के वाक्य का संरचनात्मक विश्लेषण करने के पश्चात् लक्ष्यभाषा के अनुरूप वाक्य संरचनात्मक किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में 1976 में विकसित मशीनी अनुवाद इसी तंत्र पर विकसित किया गया। यूरोपीय समुदाय की भाषाओं का EUROTRA में इसी तकनीक को अपनाया जाता है। इस प्रक्रिया में विश्लेषण, अन्तरण और विश्लेषण-क्रम को अपनाया जाता है।

आर्थी आधारित भाषा-संरचना-इसके अन्तर्गत स्त्रोत-भाषा की संरचना करके विश्लेषण करने के बाद उसमें निहित अर्थ को लक्ष्य-भाषा की संरचना में प्रजनन किया जाता है। जापानी मशीनी अनुवाद तंत्र इसी आधार पर विकसित किया गया है। जापानी तंत्र MU और PIVOT में इसी प्रकार के पार्सर तैयार किए गए हैं। 1989 में अमेरिका में विकसित के.बी.एम.टी. मशीनी अनुवाद तंत्र इसी तकनीक पर आधारित हैं।

भारत में मशीनी अनुवाद भारत वर्ष में कम्प्यूटर आधारित अनुवाद बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक से प्रारम्भ हुआ है। प्रकृति भाषा संसाधन की दिशा में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च TIFR और अब NCST, मुम्बई में आर. चन्द्रशेखर का प्रयास उल्लेखनीय है।

सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के द्वारा भारतीय भाषाओं में प्रौद्योगिक विकास योजना बनाई गई। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर में अक्षर भारती में भारतीय भाषाओं के परस्पर अनुवाद का प्रयास शुरू किया गया। इसी क्रम में हैदराबाद विश्वविद्यालय में प्राकृत भाषा संसाधन में तेलगु, पंजाबी, मराठी आदि भाषाओं से हिन्दी में अनुसारकों के विकास की योजना बनाई गई। अब ये अनुसारक प्रौद्योगिक विभाग के सर्वर पर उपलब्ध हैं।

बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में अंग्रेजी से हिन्दी अनुवाद की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के द्वारा 'आंग्लभारती' और 'अनुभारती प्रविधियों' के द्वारा मशीनी अनुवाद शुरू किया गया। यहीं से 1992 ई. में कारपोर उदाहरण आधारित मशीनी अनुवाद तंत्र विकसित करने की योजना बनी। 1999 ई. में एलिटेक्स प्रदर्शन में इसे स्थान दिया गया। यह प्रयोग तंत्र के रूप में सामने आया।

1995 में मीडिया के उपयोग के लिए नेशनल कौंसिल फॉर साईंस टैक्नोलॉजी द्वारा मात्रा (MATRA) मशीनी अनुवाद तंत्र का विकास किया गया। इसका उद्देश्य था- अंग्रेजी में प्राप्त समाचार को हिन्दी में अनुवाद कर यू.एन.आई. में उपयोग करना। इसका उपयोग आज भी विस्तार के साथ हो रहा है, अभी और भी विस्तार की अपेक्षा है।

भारत सरकार के राजभाषा विभाग के वित्त-पोषण से सी-डेक, पुणे द्वारा अनुवाद तंत्र-मंत्र का आविष्कार किया गया। इसका उद्देश्य था- सरकार द्वारा जारी सूचनाओं का अनुवाद

कर प्रसारित करना। यह कार्य 1996-97 से शुरू हुआ। इस मशीनी तंत्र द्वारा सरल वाक्यों के अनुवाद तक सीमित रखा गया। सी-डेक, पुणे इसे प्रभावी बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

मशीनी अनुवाद में स्त्रोत तथा लक्ष्य दो भाषाओं के रूप में अपनाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि यह कार्य आधुनिक कम्प्यूटर तकनीक पर आधारित है, किन्तु मूलाधार भाषा है। इस प्रकार इसमें भाषिक नियमों के ज्ञाता अर्थात् भाषाविदों की भूमिका विशेष महत्वपूर्ण है। इस कार्य में भाषा की विभिन्न प्रयुक्तियों के अध्ययन-विश्लेषण के आधार पर मशीनी अनुवाद के विकास की आवश्यकता है। इस कार्य को गति देने के लिए विभिन्न भाषा इकाइयों मुख्यत: पद-कोश निर्माण की भी अपेक्षा है। इस दिशा में भारत सरकार का सूचना प्रौद्योगिकी विभाग गम्भीरता से कार्य कर रहा है। ■

प्रश्न 19. देवनागरी लिपि से आप क्या समझते हैं? इसका स्वरूप एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए। अथवा
देवनागरी लिपि के जन्म, विकास, गुण व दोषों का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

देवनागरी लिपि

भाषा और लिपि दोनों में एक-दूसरे से गहरे सम्बन्ध रखते हैं। लिपि के बिना भाषाएँ जीवित हो सकती हैं। लेकिन भाषा के बिना लिपि का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। देवनागरी लिपि हिन्दी भाषा की एक लिपि है, जो अधिकांश हिन्दू धर्म में प्रयोग में लिया जाता है। इसे धर्मीय ग्रंथों के लिए लिखने का प्रयोग किया जाता है। देवनागरी लिपि की उत्पत्ति संस्कृत लिपि से हुई है, जो कि भारतीय संस्कृत और धर्म का मुख्य हिस्सा है।

देवनागरी लिपि में हिन्दी भाषा के वर्ण लिखे जाते हैं, जो संस्कृत वर्णमाला के आधार पर बने हैं। इसमें कुछ अलग-अलग वर्ण हैं, जो संस्कृत में नहीं हैं, लेकिन हिन्दी में हैं। देवनागरी लिपि को संस्कृत लिपि से भिन्न रखने के लिए इसमें विशेष अक्षर बनाए गए हैं।

देवनागरी लिपि का अर्थ—देवनागरी लिपि हिन्दी भाषा की एक लिपि है। इसका अर्थ होता है "देवताओं की भाषा" या "देवताओं की लिपि"। इसे अधिकांश हिन्दू धर्म में प्रयोग में लिया जाता है, जहाँ इसे धर्मीय ग्रंथों के लिए लिखने का प्रयोग किया जाता है। देवनागरी लिपि के अलावा, हिन्दी भाषा में अन्य लिपियाँ भी हैं, जैसे कि हिन्दी लिपि, संस्कृत लिपि आदि।

देवनागरी लिपि का नामकरण

1. देवनागरी लिपि को लोक नागरी और हिन्दी लिपि भी कहा जाता है।

2. देवनागरी का नामकरण विवादास्पद है। ज्यादातर विद्वान गुजरात नागर ब्राह्मणों से इसका सम्बन्ध जोड़ते हैं। मानना है गुजरात सर्वप्रथम प्रचलित होने से वहाँ पण्डित वर्ग के नाम से इसे नागरी कहा गया। अपने अस्तित्व में आने के तुरन्त बाद इसमें देवभाषा संस्कृत को लिपिबद्ध किया, इसलिए नागरी में देव शब्द जुड़ गया और बन गया 'देवनागरी'।

देवनागरी लिपि का शुरुआत (उद्भव)

देवनागरी लिपि का उद्भव लगभग 1200 ई. में हुआ। देवनागरी लिपि का जन्म संस्कृत लिपि से हुआ है। संस्कृत लिपि भारत की विशाल ऐतिहासिक संस्कृति और धर्म का मुख्य हिस्सा है। इसका प्रयोग भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत होता है और इसका उदय कठिन से अनुमानित किया जा सकता है।

कुछ स्थानों पर इसे पूर्वज संस्कार की आधारशिला माना जाता है। लेकिन इसका सम्पूर्णतः समयबद्ध इतिहास नहीं है और इसका विस्तार भारत और आसपास के अन्य देशों में हुआ है। संस्कृत लिपि से ही देवनागरी लिपि का उदय हुआ है, जो कि धर्मीय ग्रंथों के लिए लिखने का प्रयोग करती है।

देवनागरी लिपि का विकास

बोधगया के महानाम शिलालेख में और लेखमंडल की प्रशस्ति में (588 ई.) नागरी के कतिपय लक्षण स्पष्ट होने लगते हैं। सातवीं शताब्दी में ये लक्षण और भी स्पष्ट हो गए थे और आठवीं शताब्दी तक तो देवनागरी पूर्णतया विकसित हो गई थी। सिद्धमातृका से 8-9वीं सदी के आसपास प्राचीन नागरी का विकास हुआ जिसे उत्तर भारत में नागरी और दक्षिण भारत में नन्दी नागरी कहते थे। इन दो लिपि भेदों के अतिरिक्त पश्चिम में अर्धनागरी तथा पूर्व की पूर्वी नागरी भी उल्लेखनीय हैं। गुजरात के राजा जयभट्ट ने अपना हस्ताक्षर देवनागरी में किया है। उसने लिखा है 'स्वहस्तोमम जयभट्टस्य'। देवनागरी में लिखे गए शिलालेखों में सबसे प्राचीन राष्ट्रकूट दंतिवर्ग के समय (724 ई.) का समंगद का शिलालेख माना जाता है। इसके पश्चात् 780 ई. में लिखित गोविन्दराज द्वितीय का धुलिया शिलालेख प्राप्त होता है।

देवनागरी के वर्तमान लिपि चिन्हों का विकास अनेक रूपान्तरों से गुजरने के पश्चात् सुनिश्चित हुआ। ब्राह्मी से देवनागरी तक अक्षरों की बनावट में पर्याप्त परिवर्तन हुए हैं। मौर्यकालीन ब्राह्मी लिपि में अक्षर सीधे तथा कोणाकार हैं। अक्षरों की ऊँचाई को समान रखने की चेष्टा परिलक्षित होती है। अक्षरों के शिरोभाग खुले दिखाई देते हैं। खड़ी, पड़ी रेखाओं, वृत्तों, अर्धवृत्तों, कोण, बिन्दु आदि के आधार पर अक्षरों का निर्माण किया गया है। जैसे-

+ (क), (द) (ट) (ठ) (ग)

कृषाप काल तक ब्राह्मी लिपि में थोड़ा और परिवर्तन हुआ है। अक्षर बौने तथा चौड़े दृष्टिगत होते हैं। अक्षरों की बनावट में कुछ अधिक उतार-चढ़ाव हैं। ह्रस्व स्वरों में थोड़ा-सा परिवर्तन करके दीर्घ रूप बनाया जाने लगा। अनुस्वार और विसर्ग के लिए बिन्दुओं का प्रयोग भी शुरु हो गया। साँची के अभिलेख में ल का पूर्ण रूप प्राप्त होता है। अ की बनावट नागरी के अधिक समीप आ गई थी। आ की मात्रा कुछ नीचे खिसक गई है।

देवनागरी लिपि का स्वरूप

1. यह लिपि बायीं ओर से दायीं ओर लिखी जाती है, जबकि फारसी लिपि (उर्दू, अरबी, फारसी, भाषा की लिपि) दायीं ओर से बायीं ओर लिखी जाती है।

2. यह अक्षरात्मक लिपि है, जबकि रोमन लिपि (अंग्रेजी भाषा की लिपि) वर्णात्मक लिपि है।

3. देवनागरी लिपि भारत की स्थापित होने के साथ ही भारत में ही नहीं, बल्कि विभिन्न अन्य देशों में भी प्रचलित हैं। इसलिए देवनागरी लिपि में ही नहीं, बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को भी लिखा जाता है।

4. देवनागरी लिपि में लिखे जाने वाले शब्द हिन्दी, मराठी, तेलुगू, केन्यम, तमिल, बंगाली, उड़ीसा, गुजराती, मलयालम, कुम्भ आदि भाषाओं में से हो सकते हैं।

5. देवनागरी लिपि में अधिकांश शब्द संस्कृत शब्दों से लिए जाते हैं, लेकिन इसमें अंग्रेजी, फ्रेंच, स्पेनिश आदि अन्य भाषाओं के शब्दों का भी उपयोग होता है।

देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

देवनागरी लिपि एक भारतीय लिपि है, जो विभिन्न भारतीय भाषाओं में लिखी जाती है। इसकी विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. देवनागरी लिपि एक वर्णानुक्रम से है, जो मूलत: संस्कृत भाषा में लिखी जाती है।
2. इसमें अल्फाबेट का उपयोग नहीं होता है, इसलिए इसके अक्षर स्पष्ट और सुन्दर होते हैं।
3. इसमें प्रत्येक अक्षर का अपना स्वतंत्र अक्षर होता है, जो अलग-अलग शब्दों में उपयोग किया जाता है।
4. इसमें विभिन्न वर्ण और वर्णमालाओं का उपयोग होता है, जो संस्कृत में लिखी जाने वाली शब्दों को वर्णनकारी में प्रदान करते हैं।
5. इसमें 11 स्वर और 35 व्यंजन ध्वनियाँ हैं। संयुक्त व्यंजन क्ष, त्र, ज्ञ इनके अतिरिक्त हैं। नई ध्वनियों के लेखन की आवश्यकता तथा विदेशी ध्वनियों के आगमन को ध्यान में रखकर ड, ढ, क, ग, ज, फ को भी देवनागरी में स्थान दिया जाने लगा है।
6. देवनागरी लिपि अक्षरों का नाम ध्वनि के अनुकूल है। जैसे- ग, अंग्रेजी में G (प्रयोग ग के लिए) इसी प्रकार आई (I) का प्रयोग इ ध्वनि के लिए होता है।
7. प्रत्येक ध्वनि का अपना एक निश्चित चिन्ह है। जैसे- अंग्रेजी में S स, ज दोनों है और क के लिए C, K, Q तीन लिपि चिन्हों का प्रयोग किया जाता है।
8. देवनागरी में जितना लिखा जाता है उतना पढ़ा भी जाता है। इसमें कोई ध्वनि साइलेन्ट (मूव) नहीं रखी जाती। इसके विपरीत रोमन में Half, walk, Knife में L और K साइलेन्ट हैं।
9. स्वरों और व्यंजनों का क्रम बड़ा वैज्ञानिक है- पहले ह्रदय स्वर फिर दीर्घ क से म तक स्पर्श व्यंजन य से व तक अन्तस्थ स, ष, श, ह ऊष्म व्यंजन हैं। वर्ग का पहला वर्ण सघोष है। पाँचवें वर्ण (ङ, ब, न, ण, म) अनुनासिक हैं।
10. देवनागरी वर्गों में लिखा गया शब्द अपेक्षाकृत कम जगह घेरता है। जैसे- नार्दर्न (उत्तरी), अम्बरीष, धर्म।
11. देवनागरी के संयुक्त व्यंजन भी स्पष्ट रूप से उच्चरित होते हैं। जैसे- सच्चा, अच्छा, अंग्रेजी के grass, Bate आदि में संयुक्त वर्ण का स्पष्ट उच्चारण नहीं होता।

देवनागरी लिपि के गुण

1. एक ध्वनि के लिए एक ही वर्ण संकेत।
2. एक वर्ण संकेत के अनिवार्यत: एक ही ध्वनि व्यक्त।
3. जो ध्वनि का नाम यही वर्ण का नाम।
4. मूक वर्ण नहीं।
5. जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है।
6. एक वर्ण से दूसरे वर्ण का भ्रम नहीं होता है।
7. उच्चारण के सूक्ष्मतम भेद को भी प्रकट करने की क्षमता।
8. वर्णमाला ध्वनि वैज्ञानिक पद्धति में बिल्कुल अनुरूप
9. प्रयोग बहुत व्यापक (संस्कृत, हिन्दी, मराठी, नेपाली की एकमात्र लिपि)
10. भारत में अनेक लिपियों के निकट है।

देवनागरी लिपि के दोष

1. कुल मिलाकर 403 टाइप होने के कारण टंकन, मुद्रण में कठिनाई।
2. शिरोरेखा का प्रयोग अनावश्यक अलंकरण के लिए।
3. अनावश्यक वर्णों (ऋ, ॠ, ऌ, ॡ, ष) आज इन्हें कोई शुद्ध उच्चारण के साथ उच्चरित नहीं कर पाता)।
4. द्विरूप वर्ण (अ, क्ष, त, 6 छ, झ, रा, ण, श, ल ल इत्यादि का भ्रम होना)।
5. समरूप वर्ण (ख मे र व का, ध में घ का, म में भ का भ्रम होना)।
6. वर्णों के संयुक्त करने की कोई निश्चित व्यवस्था नहीं।
7. अनुस्वार और अनुनासिकता के प्रयोग में एकरूपता का अभाव।
8. त्वरापूर्ण लेखन नहीं, क्योंकि लेखन में हाथ बार-बार उठाना पड़ता है।
9. वर्णों के संयुक्तिकरण में 'रे' के प्रयोग को लेकर भ्रम की स्थिति।
10. इ की मात्रा (ि) का लेखन वर्ण के पहले पर उच्चारण वर्ण के बाद।

निष्कर्ष—देवनागरी लिपि अत्यन्त वैज्ञानिक, उपयोगी सरल और सुन्दर लिपि है, परन्तु इसमें कई दोष हैं। हमें इस लिपि के दोषों को दूर कर इस लिपि को गुणवान बनाने का प्रयास करना चाहिए। तभी यह हमारे लिए उपयोगी सिद्ध होगी। ■

प्रश्न 20. देवनागरी लिपि के मानकीकरण पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

उत्तर-

देवनागरी लिपि का मानकीकरण

भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय के अधीन हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए स्थापित केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने 1967 में परिवर्धित देवनागरी नाम प्रकाशन में मानक हिन्दी वर्णमाला और वर्तनी को अन्तिम रूप दिया। निदेशालय ने साथ ही अन्य भारतीय भाषाओं के हिन्दी में लेखन के लिए नए चिन्ह भी सुझाए हैं। देवनागरी के मानकीकरण के उदाहरण इस प्रकार हैं।

वर्णों का मानक रूप—हिन्दी का क्षेत्र अत्यन्त विशाल होने के कारण इसमें कई वर्ण दो प्रकार से लिखे जाते हैं। लेकिन इससे गुण में कठिनाई आती है। लोगों को सीखने सिखाने में भी कठिनाई आती है। इसी कारण भारत सरकार ने केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय को मानक देवनागरी लिपि निर्धारित करने का कार्य सौंपा जिससे कि भाषा में एकरूपता आये। निदेशालय ने 1966 में नानक देवनागरी लिपि प्रस्तुत की। नानक देवनागरी वर्णमाला नीचे दी गई है-

स्वर- अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ

मात्राएँ- ा ि ी ु ू े ै ो ौ

अनुस्वार- अंद्ध

विसर्ग- अः द्ध

व्यंजन	क	ख	ग	घ	घ
	च	छ	ज	झ	x।
	ट	ठ	ड	ढ	ण
	त	थ	द	ध्	न
	प	फ	ब	भ	म
	य	र	ल	व	
	श	ष	स	ह	
संयुक्त व्यंजन	क्ष	ण	श	श्र	

हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने सन् 1983 में देवनागरी लिपि तथा हिन्दी वर्तनी का मानकीकरण पुस्तिका प्रकाशित की थी। उक्त पुस्तिका में वर्तनी तथा विराम चिन्हों के मानक लेखन के बारे में कुछ नियम दिए गए हैं। ये इस प्रकार हैं-

1. संयुक्त वर्ण

कद्ध-खड़ी पाई वाले व्यंजन—खड़ी पाई वाले व्यंजनों का संयुक्त रूप खड़ी पाई को हटाकर ही बनाया जाना चाहिए, यथा-

ख्याति, लग्न, विघ्न	व्यास
कच्चा, खज्जा	श्लोक
नगण्य	राष्ट्रीय
कुत्ता, पथ्य, ध्वनि, न्यास	स्वीकृति
प्यास, डिब्बा, सभ्य, रम्प	यक्ष्मा
शट्या	त्रायंबक

खद्ध-'क' और 'फ' के संयुक्ताक्षर-

संयुक्त अड्डा, उफ़तर आदि की तरह बनाए जायें न कि संयुक्त, अड्डा, दफ़तर की तरह

गद्ध—ड, छ, ट, इ, उ, द और उ के संयुक्ताक्षर हल चिन्ह लगाकर ही बनाए जाएँ, बांड, मय, यथा लट्टू, बुड्ढा, विद्या, चिन्ह, बह्मा आदि। इन्हें वांग्मय, लट्टू, बुड्ढा, विद्या, चिन्ह, ब्रह्मा आदि के रूप में न लिखा जाए।

घद्ध—संयुक्त 'र' के प्रचलित तीनों रूपों यथावत् रहेंगे। यथा प्रकार धर्म, राष्ट्र।

2. विभक्ति चिन्ह

कद्ध—हिन्दी के विभक्ति चिन्ह सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों से प्रतिपादित से पृथक् लिखे जाएँ, जैसे- राम ने राम को, राम से आदि तथा स्त्री ने, स्त्री का स्त्री से आदि। सर्वनाम शब्दों में ये चिन्ह प्रतिपादिक के साथ मिलाकर लिखे जायें, जैसे- उसने, उसको, उससे, उस पर आदि।

खद्ध—सर्वनामों के साथ यदि वो विभक्ति चिन्ह हो तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा पृथक् लिखा जाए? जैसे- उसके लिए, इसमें से।

गद्ध—सर्वनाम और विभक्ति के बीच 'डी तक' आदि का निवाल हो तो विभक्ति को पृथक् लिया जाए, जैसे आप ही के लिए, मुझ तक का।

3. क्रियापद—संयुक्त क्रियाओं में सभी अंगभूत क्रियाएँ पृथक्-पृथक् लिखी जाएँ, कैसे पढ़ा करता है, आ सकता है, जाया करता है, खाया करता है, जा सकता है, कर सकता है, किया करता है, खेला करेगा, घूमता रहेगा आदि।

4. हाइफन-द्वन्द्व समास में पदों के बीच हाइफन रखा जाए, जैसे- राम-लक्ष्मण, शिव-पार्वती-संवाद, देख-रेख, चाल-चलन, हंसी-मजाक। इसी प्रकार सा जैसा आदि से पूर्व भी हाइफन रखा जाए, जैसे- तुन-सा, राम-जैसा, चाकू- से आदि।

5. अव्यय—'तक, 'साथ', आदि अव्यय सदा पृथक् लिखे जाएँ जैसे आपके साथ यहाँ तक। लेकिन प्रति मात्रा यथा आदि अव्यय पृथक् नहीं लिखे जाएँगे, जैसे- प्रतिदिन, प्रतिशत, मानवमात्र, यथासमय, यथोचित आदि।

6. अनुस्वार तथा अनुनासिका चिन्ह, चंद्र बिंदु ॅ

अनुस्वार; ं और अनुनासिकता चिन्ह, -ँ दोनों प्रचलित रहेंगे। संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचमाक्षर के बाद सवर्गीय शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो तो एकरूपता और मुद्रण/लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का ही प्रयोग करना चाहिए, जैसे-गंगा, कंबल, ठंडा, संध्या, संपादक आदि में पंचमक्षार के बाद उसी वर्ग का वर्ण आगे आते हैं। अतः पंचमाक्षर के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग होगा।

चंद्रविन्दू के बिना प्रायः अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है, जैसे- हंस: हस, अंगना अंगना आदि में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए चंद्रबिन्दू का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। किन्तु जहाँ विशेषकर शिरोरेखा के ऊपर जुड़ने वाली मात्रा के साथ ँ चंद्रबिन्दू के प्रयोग से छपाई आदि से बहुत कठिनाई हो और चंद्रबिन्दू के स्थान पर बिन्दू, अनुस्वार चिन्ह का प्रयोग किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न न करे, वहाँ चंद्रबिन्दू के स्थान पर बिन्दू के प्रयोग की छूट दी जा सकती है, जैसे नहीं, मैं, में।

7. विदेशी ध्वनियाँ—क. अरबी-फारसी या अंग्रेजी मूलक के शब्द जो हिन्दी के अंग बन चुके हैं और जिनकी विदेशी ध्वनियों का हिन्दी ध्वनियों में रूपान्तर हो चुका है, हिन्दी रूप में ही स्वीकार किए जा सकते हैं, जैसे- कलम, किला, दाग आदि। लेकिन जहाँ उनका शुद्ध विदेशी रूप में प्रयोग अभीष्ट हो अथवा उच्चारणगत भेद बताना आवश्यक हो, वहाँ उनके हिन्दी में प्रचलित रूपों में यथास्थान नुक्ते लगाए जाएँ।

ख. 'अंग्रेजी के जिन शब्दों में 'अर्धविवृत' 'ओ' ध्वनि का प्रयोग होता है उनके शुद्ध रूप का हिन्दी में प्रयोग अभीष्ट होने पर आ की मात्रा के ऊपर अर्धचन्द्र का प्रयोग किया जाए, ऑ, हॉ।

ग. हिन्दी में कुछ शब्द ऐसे हैं, जिसके दो-दो रूप बराबर चल रहे हैं। बिन्दुत्व समाज में दोनों रूपों की एक-सी मान्यता है। फिलहाल इनकी एकरूपता आवश्यक नहीं समझी गई है। कुछ उदाहरण हैं- गरदन / गर्दन, गरमी / गर्मी, धरती / धर्ती, बीमारी / बिमारी, बरतन / वर्तन आदि।

8. विसर्ग—संस्कृत के जिन शब्दों में विसर्ग का प्रयोग होता है, वे यदि तत्सम रूप में प्रयुक्त हो, तो विसर्ग का प्रयोग अवश्य किया जाए, जैसे- दु:खानुभूति में यदि उस शब्द के तद्भव रूप में विसर्ग का लोप हो चुका हो तो उस रूप में विसर्ग के बिना भी काम चल जाएगा, जैसे- दुख-सुख के साथी।

9. 'ऐ', 'औ' का प्रयोग—हिन्दी में ऐ, ै, ओ, ै का प्रयोग दो प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए होता है। पहले प्रकार की ध्वनियाँ हैं और आदि में है तथा दूसरे प्रकार की गवैया, कौवा आदि में इन दोनों ही प्रकार की ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए इन्हीं चिन्हों, ऐ, औ, का प्रयोग किया जाए, 'गय्या', 'कव्वा' आदि संशोधनों की आवश्यकता नहीं है।

10. अन्य नियम-

1. शिरोरेखा का प्रयोग प्रचलित रहेगा।

2. फुलस्टाप को छोड़कर शेष विराम आदि चिन्ह वही ग्रहण कर लिए जाएँ जो अंग्रेजी में प्रचलित है, यथा- ;, ,- ?!: =ै

3. पूर्ण विराम के लिए खड़ी पाई का प्रयोग किया जाए।

4. श्रीमति शब्द गलत है- श्रीमती शब्द सही है।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (उत्तर सहित)

प्रश्न- सही विकल्प का चुनाव कीजिए-

1. भारतीय आर्य भाषा को कितने कालों में विभक्त किया गया है?
(अ) 2 (ब) 3
(स) 4 (द) 6। उत्तर-(ब)

2. हिन्दी की आदि जननी है-
(अ) संस्कृत (ब) उड़िया
(स) असमिया (द) सिंधी। उत्तर-(अ)

3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का विकास किससे हुआ है?
(अ) मागधी से (ब) रोमन से
(स) द्रविड़ से (द) अपभ्रंश से। उत्तर-(द)

4. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ हैं-
(अ) शौरसेनी (ब) मागधी
(स) महाराष्ट्री (द) उक्त सभी। उत्तर-(द)

5. मागधी भाषा का विकास क्षेत्र है-
(अ) गुजरात (ब) मध्यप्रदेश
(स) मगध (द) उत्तरप्रदेश। उत्तर-(स)

6. द्रविड़ भाषा परिवार के अन्तर्गत आते हैं-
(अ) तमिल व तेलुगु (ब) कन्नड़
(स) मलयालम और तुलू (द) उपरोक्त सभी। उत्तर-(द)

7. अशोक के अधिकांश अभिलेख किस भाषा में है?
(अ) पालि (ब) प्राकृत
(स) संस्कृत (द) हिन्दी। उत्तर-(ब)

8. बौद्ध काल में शिक्षा का माध्यम कौन-सी भाषा थी? बौद्ध मठों एवं विहारों में शिक्षा का माध्यम कौन-सी भाषा थी?
(अ) पालि (ब) प्राकृत
(स) संस्कृत (द) मगधी। उत्तर-(अ)

9. हिन्दी भाषा में कितनी बोलियाँ हैं?
(अ) 15 (ब) 25
(स) 18 (द) 22। उत्तर-(स)

10. ब्रजभाषा का क्षेत्र कौन-सा नहीं है?
(अ) मथुरा व अलीगढ़ (ब) बरेली व गुड़गाँव
(स) सरगुजा व कोरिया (द) भरतपुर व करौली। उत्तर-(स)

11. पश्चिमी हिन्दी का विकास किससे माना जाता है?
(अ) शौरसैनी अपभ्रंश (ब) बघेली
(स) कन्नौजी (द) अर्ध मागधी। उत्तर-(अ)

12. निम्नलिखित में से कौन मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा है?
(अ) प्राकृत (ब) संस्कृत
(स) फारसी (द) तमिल। उत्तर-(अ)

13. छत्तीसगढ़ी भाषा के विकास क्रम में भाषा का सर्वप्रथम स्वरूप क्या था-
(अ) वैदिक संस्कृत (ब) पालि
(स) अवहट्ट (द) पश्चिमी हिन्दी। उत्तर-(अ)

14. संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता कब मिली?
(अ) 15 अगस्त, 1947 (ब) 14 सितम्बर, 1949
(स) 20 जनवरी, 1950 (द) 14 नवम्बर, 1949। उत्तर-(ब)

15. कौन-सी भाषा भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल नहीं है?
(अ) नेपाली (ब) बोड़ो
(स) सिंहली (द) संथाली। उत्तर-(स)

16. किस कारण से हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहा जाता है?
(अ) भारत में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है।
(ब) हिन्दी सम्पर्क भाषा है।
(स) हिन्दी एकता व अखंडता की प्रतीक है।
(द) हिन्दी भारत की सांस्कृतिक विरासत का वाहक है। उत्तर-(ब)

17. देवनागरी लिपि में 'अ' की बारहखड़ी स्वर ध्वनियों के स्थान पर प्रयुक्त करने का सुझाव किसने दिया था?
(अ) काका कालेलकर (ब) महात्मा गाँधी
(स) विनोबा भावे (द) पण्डित नेहरू। उत्तर-(अ)

18. हिन्दी किस परिवार की भाषा है?
(अ) कावेरी (ब) पापुई
(स) भारोपीय (द) सामी हामी। उत्तर-(स)

19. 'इरखा' को खड़ी बोली में क्या कहते हैं?
(अ) देखो (ब) देखना
(स) ये देखो (द) ईर्ष्या। उत्तर-(द)

20. वर्तमान हिन्दी किस लिपि में लिखी जाती है?
(अ) खरोष्ठी (ब) मंडारिन
(स) पालि (द) देवनागरी। उत्तर-(द)

■

राजा शंकरशाह विश्वविद्यालय, छिन्दवाड़ा

एम. ए. हिन्दी साहित्य

चतुर्थ सेमेस्टर : प्रश्न-पत्र (द्वितीय)

भाषा विज्ञान एवं हिन्दी भाषा

इकाई-1 : हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- प्राचीन भारतीय आर्य भाषाएँ- वैदिक तथा लौकिक संस्कृति और उनकी विशेषताएँ। मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाएँ- पालि, प्राकृत- शौरसेनी अर्ध मागधी, अपभ्रंश और उनकी विशेषताएँ। आधुनिक आर्य भाषाएँ और उनका वर्गीकरण।

इकाई-2 : हिन्दी का भौगोलिक विस्तार- हिन्दी की उपभाषाएँ, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी, बिहारी तथा पहाड़ी और उनकी बोलियाँ। खड़ी बोली, ब्रज और अवधी की विशेषताएँ।

इकाई-3 : हिन्दी का भाषिक स्वरूप- हिन्दी की स्वनिम व्यवस्था- खंड्य, खंड्येत्तर। हिन्दी शब्द-रचना, उपसर्ग, प्रत्यय, समास। रूप रचना- लिंग, वचन और कारक- व्यवस्था के सन्दर्भ में, हिन्दी की संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया रूप। हिन्दी वाक्य, पदक्रम और अन्विति।

इकाई-4 : हिन्दी के विविध रूप- सम्पर्क भाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा के रूप में हिन्दी, माध्यम-भाषा, संचार-भाषा, हिन्दी की संवैधानिक स्थिति।

इकाई-5 : हिन्दी में कम्प्यूटर सुविधाएँ- आंकड़ा-संसाधन और शब्द संसाधन, वर्तनी, मशीनी अनुवाद, हिन्दी भाषा-शिक्षण, देवनागरी लिपि- विशेषताएं और मानकीकरण।

इकाई-1

हिन्दी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

प्रश्न 1. प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं से आप क्या समझते हैं? वैदिक एवं लौकिक संस्कृत एवं उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर–

प्राचीन भारतीय आर्य भाषाएँ

प्राचीन भारतीय आर्य भाषा की अनुमानित कालअवधि 2500 ई.पू. से 500 ई.पू. तक मानी गयी है। इन भाषाओं का स्वरूप हमें चार मुख्य रूप से वैदिक साहित्य (संहिता, आरण्यक, ब्राह्मण और उपनिषद्) से प्राप्त होता है। यह मुख्य रूप से ऋग्वेद मे देखने को मिलती है। जिसका समय अत्यन्त प्राचीन और अनिश्चित है। उस समय कई अन्य लोक भाषाएँ रही होंगी जिनके लिखित रूप के अभाव के कारण उनके बारे में जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। प्राचीन भारतीय आर्य-भाषाएँ वैदिक तथा लौकिक संस्कृत नाम से जानी जाती हैं।

वैदिक संस्कृत–वैदिक संस्कृत, प्राचीनतम भारतीय आर्यभाषा है। इसे 'वैदिकी', 'वैदिक' तथा 'छांदस्य' भी बुलाते हैं। इसकी क्लिष्टता से यह ज्ञात होता है कि यह बोलचाल की भाषा न होकर उस समय की परिनिष्ठित, साहित्य की भाषा ही रही होगी। प्राचीन काल के अनेकों साहित्यिक तथा सांस्कृतिक लेख-अभिलेख इसी भाषा में मिलते हैं। प्राचीन संहिताएँ, वेद, आरण्यक, ब्राह्मण तथा उपनिषद् सभी वैदिक संस्कृत में लिखे गए हैं। इसके साथ ही इसकी अन्य बोलियाँ भी रही होंगी, जो की लोकभाषाओं के रूप में प्रचलित थीं। वैदिक संस्कृति के ये विभिन्न रूप आगे चलकर प्राकृतों तथा अपभ्रंशों में विकसित हुए और वे आज की हिन्दी तथा अन्य प्रान्तीय भाषाओं का स्वरूप लिए हुए है।

ऋग्वेद की ऋचाओं को देखकर ऐसा आभास होता है कि इनकी रचना न एक समय और न ही एक स्थान में रह कर हुई है। ऋग्वेद मे कुल 10 मण्डल हैं, जिसमें मण्डल 2 से लेकर 9 तक अधिक प्राचीन हैं तथा मण्डल 1 और 10 बाद में लिखे गए हैं। इसमें जो भाषा-भेद हैं, वे देश और काल की भिन्नता के कारण हैं। इन पुस्तकों में ईश्वर की आराधना, देवताओं के आह्वान, नक्षत्र तथा दान दक्षिणा का ज्ञान निहित है।

वेदों की ऋचाएँ छंदोबद्ध हैं इसीलिए वैदिक संस्कृत को 'छांदस्य' भी बुलाया जाता है।

वैदिक संस्कृत की विशेषताएँ-

- वैदिक संस्कृत में कुल 52 ध्वनियाँ हैं, जिनमें 14 स्वर तथा 48 व्यंजन हैं।
- वैदिक संस्कृत में लिंग तीन थे, पुंल्लिग, स्त्रीलिंग एवं नपुंसकलिंग। वचन भी तीन थे- एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन। कारक विभक्तियाँ आठ थीं- कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण एवं सम्बोधन।
- विशेषणों के रूप में संज्ञा की तरह ही पाये जाते थे।
- इसकी पद रचना श्लिष्ट योगात्मक होती है। वैदिक संस्कृत की पदरचना में विविधता तथा अनेकरूपता पायी गयी है, जो की लौकिक संस्कृत में नहीं मिलती।
- वैदिक संस्कृत में क्रिया के रूप तीन पुरुषों, प्रथम, माध्यम तथा उत्तम पुरुष में, तीन वचनों एकवचन, द्विवचन तथा बहुवचन, 11 प्रकार के रूप में मिलते थे।
- वैदिक संस्कृत के धातुरूप में लट् लकार का प्रयोग है, जो की लौकिक संस्कृत में नहीं मिलता है।

- वेदों में संगीतात्मक स्वर मुख्यरूप से पाये जाते हैं, अत: ये वैदिक संस्कृत की एक विशेषता ही है। वहीं लौकिक संस्कृत में स्वर बलाघात्मक हो गया।
- वैदिक संस्कृत में समास रचना भी देखी जाती है। इसमें मुख्य रूप से तत्पुरुष, कर्मधारय, बहुब्रीहि एवं द्वंद्व समास मिलते हैं।

लौकिक संस्कृत

वैदिक संस्कृत का ही सरल और स्वाभाविक रूप लौकिक संस्कृत कहलाता है। इसे संस्कृत भी कहा जाता है। यह भी बोलचाल की भाषा नहीं है। लौकिक संस्कृत या संस्कृत का प्रथम प्रयोग हमें वाल्मीकि जी की रामायण में देखने को मिलता है। ऐसा माना जाता है की वैदिक काल में भाषा के तीन भौगोलिक रूप हुआ करते थे, उत्तरी, मध्यदेशी तथा पूर्वी। उत्तरी बोली मुख्य रूप से अफगानिस्तान से लेकर पंजाब तक में बोली जाती थी, मध्यदेशी उत्तर प्रदेश में तथा पूर्वी उसके और पूरब में। इनमें से उत्तरी बोली लौकिक संस्कृत का मूल आधार थी। लेकिन उत्तरी बोली केवल मूल आधार थी, लौकिक संस्कृत बोलचाल भाषा नहीं थी। यह साहित्य की भाषा ही थी।

संस्कृत को देववाणी भी कहा गया है, क्योंकि इसी भाषा में रामायण तथा महाभारत जैसे विश्वप्रसिद्ध ग्रंथ भी लिखे गए हैं, जिनमें आचार, धर्मशास्त्र, कामशास्त्र, दर्शन, गणित, ज्योतिष आदि का अनमोल ज्ञान संचित है।

संस्कृत (लौकिक संस्कृत) वैदिक (वैदिक संस्कृत) का ही एक सरल रूप है। दोनों लगभग एक से ही हैं। वैदिक की विशेषताएँ ही संस्कृत पर भी लागू होती हैं, परन्तु इनके बीच कुछ भिन्नताएँ भी हैं, जो इन्हें एक-दूसरे से अलग करती हैं।

वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत में अन्तर

वैदिक संस्कृत	लौकिक संस्कृत
इस दौरान की रचनाएँ पूर्णत: धार्मिक हैं।	इस दौरान की रचनाओं में लौकिकता देखने को मिलती है।
वैदिक संस्कृत में पर्याप्त शब्दों का उपयोग किया गया है। जैसे- देवास:, जनाम:।	कुछ वैदिक शब्द विलुप्त हो गये। जैसे- देव:, जन:।
वैदिक संस्कृत में स्वरों की संख्या अधिक है।	स्वरों की संख्या कम है अर्थात् जैसे लृ स्वर का लोप हो गया है।
वैदिक संस्कृत में उपसर्ग धातुओं से पृथक् हैं। इनका स्वतंत्र प्रयोग किया जा सकता था।	लौकिक संस्कृत में उपसर्ग धातु से जुड़े हैं। उपसर्गों के स्वतंत्र प्रयोग पर प्रतिबद्धता लग गयी।
वैदिक संस्कृत में कुछ स्थानों में सप्तमी एकवचन विलुप्त हो जाता है।	लौकिक संस्कृति में सप्तमी एकवचन विलुप्त नहीं होता है।
व्याकरण की दृष्टि से वैदिक संस्कृत में कुछ अव्यवस्था देखने को मिलती हैं।	लौकिक संस्कृति में व्याकरण के नियमों का अनुसरण करना अनिवार्य है।
लोट् लकार की उपलब्धता।	लोट् लकार का अभाव।

शब्दों के अर्थ में अन्तर-	शब्दों के अर्थ में अन्तर-
पत् - उडना	पत् - गिरना
सह - जीतना	सह - सहना
असुर - शक्तिशाली	असुर - दैत्य
अराति - कृपण	अराति - शत्रु
वध - घातक शस्त्र	वध - हत्या
क्षिति - गृह	क्षिति - पृथ्वी
भाषा में स्वरों का उपयोग किया जाता था।	भाषा में स्वरों का उपयोग विलुप्त हो गया।
संगीतात्मक शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है।	संगीतात्मक शब्दों के स्थान पर बलात्मक शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ हो गया।

लौकिक संस्कृत एवं उसकी विशेषताएँ

वैदिक संस्कृत का ही विकसित रूप लौकिक संस्कृत है। वैदिक संस्कृत में जो विविधता और अनेकरूपता पायी जाती थी, वह संस्कृत में न्यून हो गई। पाणिनी के व्याकरण का प्रभाव बहुत बढ़ गया। फलस्वरूप पाणिनी व्याकरण से असिद्ध रूपों का प्रचलन कम हो गया। अपवाद नियमों की संख्या कम हो गई। लौकिक संस्कृत की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. वैदिक भाषा में प्रयुक्त ळ्, ळ्ह्, जिव्हामूलीय तथा उपध्मानीय ध्वनियों का संस्कृत में लोप हो गया है।

2. पाणिनिकृत नियमों (अष्टाध्यायी-सूत्रों) के द्वारा उसमें शब्द-रूपों तथा क्रियारूपों में एकरूपता आ गयी है।

3. 'लट्' लकार का प्रयोग समाप्त हो गया है।

4. एक ही अर्थ में प्रयुक्त अनेक प्रत्ययों के स्थान पर केवल एक ही प्रत्यय का प्रयोग रूढ़ हो गया। जैसे- 'तुमुन्', 'क्तवा' आदि।

5. अनेक वैदिक शब्दों का प्रयोग हो गया। जैसे- 'दर्शत्' (=सुन्दर), 'द शीक' (=सुन्दर), 'रपस्' (=चोट, दुर्बलता, रोग), 'अमूर' (=बुद्धिमान्) 'मूर' (=ढ़), 'ऋदूद र' (=दयालु), 'अक्तु' (=रात्रि), 'अमीबा' (=व्याधि) आदि।

6. अनेक वैदिक शब्दों का प्रयोग संस्कृत में भिन्न अर्थों में होने लगा। जैसे-

	शब्द	वैदिक-अर्थ	संस्कृत-अर्थ
1.	अराति	शत्रुता	शत्रु
2.	अरि	ईश्वर, धार्मिक शत्रु	केवल शत्रु
3.	न	उपमावाचक (जैसा), निषेधवाचक (नहीं)	निषेधवाचक (नहीं)
4.	मलीक	कृपा	शिव का एक नाम
5.	क्षिति	ग ह, निवासस्थान बस्ती, मनुष्य	पथ्वी
6.	वध	भयंकर शस्त्र	हत्या करना आदि-आदि

7. संधि-कार्य अनिवार्य-सा हो गया।
8. उपसर्गों का स्वतन्त्र प्रयोग बन्द हो गया।

9. स्वरों में 'ल' प्राय: लुप्त-सा हो गया। स्वरों का उदत्त-अनुदत्त और स्वरित उच्चारण समाप्त हो गया।
10. स्वरभक्ति अप्रचलित हो गयी।

इस प्रकार वैदिक भाषा की अपेक्षा संस्कृत भाषा अधिक नियमित एवं व्यवस्थित हो गयी तथा वैदिक भाषा की अपेक्षा संस्कृत के रूप में पर्याप्त परिवर्तन हो गया। इस परिवर्तन को जानने के लिए यहाँ दोनों की तुलना प्रस्तुत करना आवश्यक है। ■

प्रश्न 2. मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं का सविस्तार परिचय देते हुए, उनकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

उत्तर- मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा में 500 ई.पू. से 1000 ई. तक

लौकिक संस्कृत को पाणिनि ने अपने व्याकरण में जकड़ कर उसे सदा सर्वदा के लिए स्थायी रूप दे दिया, किन्तु जन भाषा भला इस बंधन को कहां मानती ? वह अबाध गति से परिवर्तित होती रही। इस जनभाषा के मध्यकालीन रूप को ही 'मध्यकालीन आर्य भाषा' की संज्ञा दी गई है। इसका काल मोटे रूप से 500 ई.पू. से 1000 ई. तक का अर्थात् डेढ़ हजार वर्षों का है। भारतीय आर्य भाषा को 'प्राकृत' भी कहा गया है।

प्राकृत—प्राकृत भाषा को मध्यकालीन युग की प्रारम्भिक भाषा ही कहा जाता है। इसी का प्रथम रूप पालि (500 ई.पू. से 100 ई. तक) कहलाता है। मध्यकाल में इसे प्राकृत (100 ई. से 500 ई. तक) ही कहते हैं, तथा बाद में इसे परकालीन प्राकृत या अपभ्रंश (500 ई. से 1000 ई. तक) नाम से जाना गया है। तो प्राकृत शब्द से दो अर्थ निकलते हैं, पहला 500 ई.पू. से 1000 ई. तक की अवधि में आई सभी भाषाएँ, या फिर मध्यकाल के मध्यकाल में बोली गयी भाषा, प्राकृत। प्राकृत को साहित्यिक प्राकृत भी कहा जाता है, क्योंकि इस काल में प्राकृत में साहित्य का विकास अत्यधिक हुआ। प्राकृत भाषा का उल्लेख सर्वप्रथम भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में देखने को मिलता है। भरत मुनि के अनुसार प्राकृत की 7 मुख्य तथा 7 गौण प्रकार हैं। मुख्य प्रकार में आते हैं- मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या, सूरसेनी (शोरसेनी), अर्धमागधी, बाह्लीक, दाक्षिणात्य (महाराष्ट्री), तथा गौण प्रकार हैं- शाबारी, आभीरी, चाण्डाली, सचरी, द्राविड़ी, उदरजा तथा वेनचरी। प्राचीन वैयाकरण वररूचि में प्राचीन व्याकरण को ध्यान में रखते हुए पाँच प्राकृत ही माने हैं- शौरसेनी, महराष्ट्री, अर्धमागधी, मागधी तथा पैशाची।

भारतीय आर्य भाषा का विभाजन

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा को तीन कालों में विभाजित किया गया है-

(क) प्रथम प्राकृत (500 ई.पू. से 1 ई. तक)

इसमें पाली तथा अभिलेखी प्राकृत आती हैं।

(I) पाली—यह प्राकृत का प्रारम्भिक रूप है जिसका समय 500 ई.पू. के प्रथम शताब्दी के प्रारम्भ तक माना गया है। इसकी उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि संस्कृत की उत्पत्ति प्राकृत से हुई है। एक अन्य मत के अनुसार संस्कृत के समानान्तर, लोकभाषा से इसका उद्भव हुआ है। इसमें प्रथम मन्तव्य अधिक उपयुक्त लगता है।

पाली-व्युत्पत्ति—इसकी व्युत्पत्ति के विषय में विभिन्न विद्वानों द्वारा अपने ढंग से विचार प्रस्तुत किए गए हैं-

1. भिक्षु सिद्धार्थ के अनुसार पाठ > पालि।
2. भिक्षु जगदीश काश्यप के अनुसार परियाय (बुद्ध उपदेश) > पलियाय > पालियाय > पालि।
3. आचार्य विधु शेखर के अनुसार पंक्ति > पंति > पंति > पल्लि > पालि।
4. डॉ. मेक्स वेलसन के अनुसार पाटिल (पटना) > पाडलि > पालि।

विशेषताएँ-

- इसमें से ऋ, ल, ऐ, औ, श, ष, तथा विसर्ग आदि वैदिक ध्वनियाँ लुप्त हो गई हैं।
- पालि में वैदिक संस्कृत के पाँच व्यंजनों, श, ष, विसर्ग (:), जिह्वामूलीय, उपधमनीय का भी लोप हो गया।
- पालि में दो नए स्वर भी देखने को मिलते हैं। ह्रस्व ए तथा ह्रस्व ऑ।
- वैदिक संस्कृत के ऐ और औ पालि में ए और ओ हो गए।
- पालि में अघोष वर्ण घोष हो जाते हैं। क झ ग (प्रतिकृत > पटिगच्च) इत्यादि।
- पालि में केवल तीन संधि मिलती है। स्वर-संधि, व्यंजन-संधि तथा अनुस्वार-संधि। विसर्ग-संधि नहीं मिलती।
- पालि में हलंत शब्द वर्जित है तथा केवल अजंत शब्द मिलते हैं।
- पालि में द्विवचन नहीं होते।
- पालि में लगभग 500 धातुएँ हैं।
- पालि में आत्मनेपद का प्रयोग नहीं होता है, केवल परस्मैपद ही प्रयोग में आते हैं।
- पालि में तद्भव शब्द अधिक है। इनके मुकाबले देशज या तत्सम् शब्द कम हैं।

(II) अभिलेखी प्राकृत—इसके अधिकांश लेख शिला पर हैं, अत: इसकी एक संज्ञा शिलालेखी प्राकृत भी हैं। इसकी सामग्री हैं-

- अशोकी अभिलेख
- अशोकेतर अभिलेख।

अशोक के अनेक लेख लाटों पर मिलते हैं इसलिए कुछ लोगों ने इसे 'लाट प्राकृत' या 'लाटबोली' भी कहा है।

सम्राट अशोक ने अपने राज्य काल में अनेक शिलालेख खुदवाए थे। ये लेख शासन तथा धर्म सम्बन्धी हैं। ये लेख प्रमुखत: स्तंभों और चट्टानों पर हैं, जिनकी संख्या 20 से ऊपर है। इन लेखों का उद्देश्य जनता में धार्मिक विचारों एवं शासनादेशों को फैलाना है। इसलिए ये शिलालेख अलग-अलग स्थानों पर वहाँ की स्थानीय बोली में खुदवाए गए हैं। अत: कहा जा सकता है कि अशोकी अभिलेख कोई एक व्यवस्थित या संगठित भाषा नहीं है, बल्कि ई.पू. तीसरी शती की अनेक स्थानीय बोलियों का समूह है।

विशेषताएँ—अभिलेखी या शिलालेखी प्राकृत की कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- ध्वनियाँ प्राय: पालि के समान ही हैं। प्रमुख अन्तर उष्म व्यंजनों के सम्बन्ध में हैं। पालि में केवल 'स' का प्रयोग मिलता है, किन्तु शिलालेखी प्राकृतों में इस दृष्टि से एक्य नहीं है। शहबाजगढ़ी के अभिलेख में श, स, ष् तीनों का प्रयोग हुआ है।

- द्विवचन नहीं है। लिंग तीन हैं।
- प्रातिपादिक अधिकांशत: स्वरांत हैं।
- आत्मनेपद समाप्त प्राय: है।
- सादृश्य के कारण पालि की तुलना में भी इसमें रूप कम मिलते हैं।
- इसमें ध्वनियों में विकास हो गया है और यह विकास आगम, लोप, समीकरण, विषमीकरण, विपर्यय, तालव्यीकरण, मूर्द्धव्यीकरण, ह्रस्वी-करण, दीर्घीकरण तथा घोषीकरण आदि अनेक दिशाओं में हुआ है।
- अन्य भी अधिकांश बातों में भाषा पालि के समान है।

(ख) द्वितीय प्राकृत (1 ई. से 500 ई. तक)

इसे साहित्यिक प्राकृत भी कहते हैं। इसका काल प्रथम शताब्दी से 5वीं शताब्दी तक है। विभिन्न क्षेत्रों में इसके भिन्न-भिन्न रूप विकसित हो गये थे।

1. मागधी—इसका विकास मगध के निकटवर्ती क्षेत्र में हुआ। इसमें कोई साहित्यिक कृति उपलब्ध नहीं है।

विशेषताएँ-

- इसमें -, स का - रूप हो जाता है, यथा- सप्त > -त्त, पुरू- > पुलिस।
- इसमें र का ल हो जाता है, यथा- पुरुष > पुलिश।
- ज के स्थान पर य हो जाता है, यथा- जानाति > याणदि।

2. अर्ध-मागधी—यह मागधी तथा शौरसेनी के मध्य बोली जाने वाली भाषा थी। यह जैन साहित्य की भाषा थी। भगवान महावीर के उपदेश इसी में हैं।

विशेषताएँ-

- इसमें श, ष, स के लिए केवल स का प्रयोग होता है। यथा- श्रावक > सावग।
- इसमें दन्त्य ध्वनियाँ मुर्धन्य हो जाती है। यथा- स्थिर > ठिय।
- स्पर्श ध्वनि के लोप पर य श्रुति मिलती है। यथा- सागर > सायर, गगन > गयन।

3. महाराष्ट्री—इसका मँल स्थान महाराष्ट्र है। इसमें प्रचुर साहित्य मिलता है। गाहा सत्तसई (गाथा सप्तशती), गडवहो (गौडवध:) आदि काव्य ग्रंथ इसी भाषा में हैं।

विशेषताएँ-

- स्वर बाहुल्य और संगीतात्मकता है।
- श, ष, स, का ह हो जाता है, यथा- दश > दह, दिवस > दिवह।
- दो स्वरों के मध्य व्यंजन लोप हो जाता है। यथा- रिपु > रिन्न, नुपँर > णेउर।
- क्ष का च्छ हो जाता है। यथा- इक्षु > इच्छु।
- कुछ महाप्राण ध्वनियाँ ह में परिवर्तित हो जाती है। यथा- शाखा > शाहा, अथ > अह।

4. पैशाची—इसका क्षेत्र कश्मीर माना गया है। गियर्सन ने इसे दरद से प्रभावित माना है। साहित्यिक रचना की दृष्टि से यह भाषा शून्य है।

विशेषताएँ-

- सघोष ध्वनियाँ अघोष हो जाती हैं। यथा- नगर > नकर।
- र और ल का विपयर्य हो जाता है। यथा- कुमार > कुमाल, रूधिर > लुधिर।

- ष का स या श हो जाता है। यथा- तिष्ठति > तिश्तदि, विषम > विसम।

5. शौरसेनी—यह मध्य की भाषा थी। इसका केन्द्र मथुरा था। नाटकों में स्त्री-पात्रों के संवाद इसी भाषा में होते थे। दिगम्बर जैन से सम्बन्धित धर्मग्रन्थ इसी में रचे गए हैं।

विशेषताएँ-

- इसमें क्ष का खख हो जाता है। यथा- चक्षु > चक्खु।
- इसमें न ध्वनि ण हो जाती है। यथा- नाथ > णाथ।
- इसमें आत्मनेपद लगभग समाप्त हो जाता है, केवल परस्मैपद मिलता है।

(ग) तृतीय प्राकृत (500 ई. से 1000 ई. तक)

अपभ्रंश

अपभ्रंश का मतलब है, किसी चीज का 'बिगड़ा हुआ' स्वरूप। यह मध्यकालीन युग के तीसरे भाग में बोली जाने वाली भाषा है। इसे प्राकृत कालीन बोलचाल की भाषा के स्वाभाविक विकास के रूप में देखा जाता है। ऐसा मानना है कि प्राकृत का बिगड़ा हुआ रूप अपभ्रंश है। इसका काल 500 ई. से 1000 ई. तक माना गया है। अपभ्रंश की उत्पत्ति प्राकृत से होती है और इसे प्राकृत तथा आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के बीच की कड़ी के रूप में भी देखा जाता है।

'अपभ्रंश' शब्द का सबसे प्राचीनतम प्रयोग हमें भरतमुनि के नाट्य शास्त्र में देखने को मिलता है। आचार्य व्यडी (पतंजलि से कुछ पूर्व) तथा पतंजलि के महाभाष्य में अपभ्रंश का प्रयोग मिलता है, जहाँ इसका अर्थ भाषा से नहीं, परन्तु संस्कृत के एक बिगड़े हुए रूप के अर्थ में मिलता है। इनके बाद भर्तृहरि, भामह आदि अनेक विद्वानों ने भी इस शब्द का प्रयोग किया। कालिदास की रचना विक्रमोवर्षीयम में अपभ्रंश के कुछ लेख मिलते हैं।

अपभ्रंश भाषा में साहित्य की भरमार है। इसमें रविषेणाचार्य-कृत पउमचरिउ, पुष्पदंत-कृत महापुराण और जसहर-चरिउ, विद्यापति-कृत कीर्तिलता, अद्दहमाण (अब्दुल रहमान)-कृत संदेश-रासक इत्यादि मुख्य रचनाएँ हैं।

मार्कण्डेय ने अपनी कृति प्राकृतसर्वस्व में अपभ्रंश के तीन रूप माने हैं। नागर उपनागर तथा ब्राचड। नागर गुजरात की अपभ्रंश है। ब्राचड सिंध की तथा उपनागर दोनों के मध्य की भाषा है। इससे यह ज्ञात होता है कि यह मुख्य रूप से पश्चिमी प्राकृतों का ही विभाजन है। इसी प्रकार विद्वान मानते हैं की पाँच प्राकृतों से पाँच अपभ्रंशों का विकास हुआ और उन्हीं से आगे चलकर आधुनिक आर्य भाषाएँ विकसित हुईं।

अपभ्रंश की विशेषताएँ-

1. अपभ्रंश अपने मूल रूप यानि प्राकृत का सरल रूप थी।
2. यह श्लिष्ट योगात्मक ने रह कर वियोगात्मक हो गयी।
3. अपभ्रंश में ध्वनियाँ प्राकृत से ज्यों की त्यों ले ली गयी थीं।
4. यह संगीतात्मक न रहकर पूर्णत: बलाघात्मक हो गयी।
5. अपभ्रंश में सभी स्वरों का अनुनासिक रूप मिलता है।
6. शब्दों के अन्त में उ लगाने की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। जैसे- अंगु, जगु, पुत्तु।
7. संयुक्त व्यंजनों में एक व्यंजन का लोप हुआ तथा पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो गया। जैसे- कस्य > कासु, तस्य > तासु।

8. शब्दरूप तथा धातुरूप में आत्मनेपद नहीं मिलते हैं।
9. विभक्तियों के स्थान पर कारक चिन्ह मिलते हैं।

प्रश्न 3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के संक्षिप्त विकास का वर्णन करते हुए उनके वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए। अथवा
आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के उदय एवं विकास पर प्रकाश डालिए।

उत्तर- आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का उदय एवं विकास

डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा का मत है, "वर्तमान भारतीय आर्य भाषाओं का साहित्य में प्रयोग कम-से-कम तेरहवीं शताब्दी ईस्वी के आदि में अवश्य प्रारम्भ हो गया था तथा अपभ्रंश का व्यवहार चौदहवीं शताब्दी तक साहित्य में होता रहा था। किसी भाषा को साहित्य में व्यवहृत होने के योग्य बनने में कुछ समय लगता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए, यह कहना अनुचित न होगा कि मध्यकालीन आर्य भाषाओं के अन्तिम रूप अपभ्रंशों से तृतीय काल की आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का आविर्भाव दसवीं शताब्दी ईस्वी के लगभग हुआ। ...इन आधुनिक आर्य भाषाओं में हमारी हिन्दी भी सम्मिलित है। इसका जन्मकाल भी दसवीं शताब्दी ईस्वी के लगभग मानना होगा।"

वस्तुत: इस विकास या परिवर्तन को हमें सही शब्दों में इस प्रकार कहना चाहिए कि बोलचाल की भाषा के बढ़ते हुए प्रभाव ने अपभ्रंश को साहित्य के क्षेत्र में अपदस्थ कर स्वयं उनका स्थान उसी प्रकार ग्रहण कर लिया होगा, जैसे आधुनिक युग में खड़ी बोली ने ब्रजभाषा को अपदस्थ कर सम्पूर्ण साहित्य पर अधिकार कर लिया था।

डॉ. श्यामसन्दर दास अपभ्रंश और वर्तमान हिन्दी के मध्य एक तीसरी भाषा का रूप मानते हैं, जिसे कुछ विद्वानों ने 'अवहट्ट' कहा है तथा कुछ ने 'पुरानी हिन्दी'। उनका कथन है- "यद्यपि इसका ठीक-ठीक निर्णय करना कठिन है कि अपभ्रंश का कब अन्त होता है और पुरानी हिन्दी का कहाँ से आरम्भ होता है, तथापि बारहवीं शताब्दी का मध्य भाग अपभ्रंश के अस्त और आधुनिक भावनाओं के उदय का काल यथाकथंचित् माना जा सकता है।" वस्तुत: यह 'अवहट्ट' अथवा 'पुरानी हिन्दी' अपभ्रंश और नई उभरती लोक भाषा का ही मिश्रित रूप था। डॉक्टर सक्सेना भारतीय आर्य शाखा की भाषाओं के वर्तमान युग का प्रारम्भ प्राय: 1000 ई. से ही मानते हैं।

आधुनिक आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

1880 ई. में आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के अध्ययन के आधार पर डॉ. ए.एफ.आर हार्नले ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि भारत में आर्यों का आगमन पंजाब में हुआ और दूसरा आगमन उत्तर हिमालय, दक्षिण में विंध्य प्रदेश, पश्चिम में सरहिंद तथा पूरब में गंगा, यमुना के संगम तक था। डॉ. हार्नले के इस सिद्धान्त को डॉ. ग्रियर्सन ने स्वीकार किया। भाषा तत्व के आधार पर ग्रियर्सन के आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को तीन उप-शाखाओं में विभक्त किया गया। इसमें वे छह भाषा समुदाय को स्वीकार करते हैं। उन्होंने लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया में आधुनिक आर्य भाषाओं का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है-

(अ) बाहरी उपशाखा (बहिरंग)

1. **पश्चिमोत्तरी समुदाय**—(i) लहँदा, (ii) सिन्धी
2. **दक्षिणी समुदाय**—(iii) मराठी

3. पूर्वी समुदाय—(iv) उड़िया, (v) बँगला, (vi) आसामी (जिसे अब 'असमी' कहा जाता है) (vii) बिहारी

(ब) बीच की उपशाखा (मध्यवर्ती)

4. बीच का समुदाय—(viii) पूर्वी हिन्दी

(स) भीतरी उपशाखा (अन्तरंग)

5. अन्दर का समुदाय—(ix) पश्चिमी हिन्दी, (x) पंजाबी, (xi) गुजराती, (xii) भीली, (xiii) खानदेशी, (xiv) राजस्थानी

6. पहाड़ी समुदाय—(xv) पूर्वी या नेपाली, (xvi) बीच की पहाड़ी, (xvii) पश्चिमी पहाड़ी।

उपर्युक्त वर्गीकरण में बाहरी, भीतरी और बीच की तीन उपशाखाओं का नाम आता है। इन्हें विद्वानों ने क्रमश: बहिरंग, अन्तरंग और मध्यवर्ती नाम दिया है। बहिरंग और अन्तरंग का विभाजन भारत में आर्यों के दो बार आने की कल्पना पर किया गया है। पूर्वागत आर्यों की भाषाएँ बहिरंग कहलाईं और परागत अर्थात् बाद में आने वाले आर्यों की अन्तरंग। इन दोनों के मध्यवर्ती प्रदेश की भाषाएँ मध्यवर्ती कहलाईं।

डॉ. ग्रियर्सन ने इन अंतरंग और बहिरंग भाषाओं में कुछ ऐसे भेद बताये हैं, जिनके कारण इनमें भिन्नता आ गई है। ये भेद निम्नलिखित हैं-

1. उच्चारण सम्बन्धी भेद—अन्तरंग भाषाओं में दन्त्य 'स' का उच्चारण प्राय: शुद्ध होता है, जबकि बहिरंग भाषाओं में इसका अनुप्रभाव है। बहिरंग उपशाखा की पश्चिमोत्तर वर्ग की सिंधी भाषा में 'स' का 'ह' हो जाता है, जैसे- 'कोस' का 'कोह'। दूसरी ओर बंगला आदि पूर्वी वर्ग की भाषाओं में यही 'स', 'श' तथा 'ष' हो जाता है। साथ ही महाप्राण तथा अल्पप्राण परिवर्तित हो जाते हैं। 'म्व' का 'म' अथवा 'व' तथा 'इ' और 'उ' परस्पर बदल जाते हैं।

2. रचनात्मक तथा व्याकरणिक भाषा—विज्ञान का यह सिद्धान्त है कि भाषाएँ वियोगावस्था से क्रमश: विकसित होते-होते संयोगावस्था में आती हैं। जो भाषा जितनी संयोगात्मक होगी वह उतनी ही प्राचीन होगी। प्राय: सभी अंतरंग भाषाएँ उस समय तक वियोगावस्था में दिखाई पड़ती हैं, जबकि बहिरंग भाषाएँ संयोगावस्था तक पहुँच चुकी होती हैं। इसका कारण यह है कि अंतरंग भाषाओं के प्राय: सभी मूल प्रत्यय नष्ट हो गये हैं जिनका काम प्राय: विभक्तियों से लिया जाता है, जो संज्ञा से पृथक् समझी जाती हैं, किन्तु बहिरंग भाषा कुछ अधिक विकसित होने के कारण उनमें प्रत्यय शब्द में ही समाकर रह जाते हैं। जैसे- हिन्दी सम्बन्ध कारक 'का', 'के', 'की' लगाकर बनाया जाता है। इन्हें संज्ञा से पृथक् ही समझा जाता है, जैसे- 'घोड़े का' में 'का' प्रत्यय अलग है। यही कारक बंगला में, जो बहिरंग भाषा है, संज्ञा में 'एर' लगाकर बनता है और यह चिन्ह संज्ञा का एक भाग हो जाता है। जैसे- 'घोड़ार, इसमें सम्बन्ध कारक 'र' संज्ञा 'घोड़ा' के साथ मिला हुआ है।

3. बहिरंग भाषाओं में भूतकालीन क्रियाओं के साधारण रूपों से ही अनेक कर्ताओं का पुरुष और वचन जाना जा सकता है, क्योंकि भूतकालीन क्रिया का रूप कर्ता पुरुष के अनुसार ही परिवर्तित होता रहता है। जैसे- मराठी में 'गेलों' (मैं गया) और 'मेला' (वह गया), बँगला में 'मारिलाम' शब्द भी उसके कर्ता के उत्तम पुरुष होने की सूचना देता है। किन्तु अंतरंग भाषाओं में भूतकालीन क्रियाएँ सभी पुरुषों में एक-सी रहती हैं। जैसे- हिन्दी में 'मैं गया', 'तू गया', 'वह गया'। सभी में 'गया' समान है।

4. बहिरंग भाषाओं की भूतकालिक क्रियाओं में सर्वनाम भी उनकी क्रियाओं में ही अन्तर्भूत रहता है, जबकि अंतरंग, भाषाओं में सर्वनाम अपना पृथक् रूप संभाले रहा है।

5. बहिरंग शाखा की भाषाओं के शब्द तथा धातुओं में साम्य है।

6. श्री रामप्रसाद चन्द ने तो अंतरंग और बहिरंग 'भाषा- भेद' की वंशात्मक कारणों से भी पुष्टि की है। उसका मत है कि अंतरंग आर्य डालिको सिफैलिक जाति के और बहिरंग आर्य ब्रेकी सिफैलिक जाति के थे, अत: उनकी भाषाओं में भेद होना स्वाभाविक है।

डॉ. ग्रियर्सन ने उपर्युक्त भेदों के आधार पर ही अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया था, परन्तु प्रसिद्ध भारतीय भाषाशास्त्री डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या भारतीय आर्य भाषाओं का सूक्ष्म विवेचन कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हार्नले और ग्रियर्सन द्वारा बताए गए भेद तर्कसंगत नहीं हैं, अत: उपर्युक्त विभाजन साधारण नहीं माना जा सकता। ग्रियर्सन के सभी तर्कों का तर्कसंगत खण्डन करते हुए डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने जो आधार दिए हैं, वे निम्नलिखित हैं-

1. 'स' सम्बन्धी परिवर्तन सभी बहिरंग भाषाओं में नहीं पाया जाता। सिन्धी तथा लहँदा भाषाओं में 'स' का 'ह' अथवा 'श' होना अंतरंग भाषाओं में भी पाया जाता है। जैसे-

तस्य कोस = कोह, पश्चिमी हिन्दी में केसरी का केहरी। एकादश का ग्यारह, क्षदश का बाहर हो जाता है। तस्स, ताह H ता (ताको, तहि)

2. महाप्राण व अल्प्राण का अभेद—गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी आदि अंतरंग भाषाओं में भी महाप्राण और अल्पप्राण का अभेद पाया जाता है, जैसे- भगिनी से बहिन, वेश से भेस, विभूति से भभूत, वाष्प से भाप आदि।

3. 'म्ब' का 'म' तथा 'ब' हो जाना अंतरंग में भी पाया जाता है। जैसे पश्चिमी हिन्दी में जम्बु का जामुन, अम्बी का अमियाँ, निम्बु का नींबू आदि। इसी प्रकार 'इ' तथा का परस्पर बदल जाना अंतरंग में भी पाया जाता है। जैसे पश्चिमी हिन्दी में खुलना, बुनना तथा बिन्दु, बूँद आदि।

4. सप्रत्यय तथा विभक्ति-प्रधान शब्द बहिरंग में ही नहीं, अपितु अंतरंग में भी पाये जाते हैं, जैसे- ब्रज में मैं (मैंने), तैं, (तूने), घोड़ेहि (घोड़े को)। पश्चिमी हिन्दी में माथे (माथे पर), भूखों (भूख से) आदि।

5. कर्त्ता में पुरुष तथा वचन का बोध सभी भूतकालिक क्रियाओं के रूपों से नहीं होता, केवल अकर्मक क्रियाओं के भूतकाल से होता है। सकर्मक क्रियाओं के भूतकालिक रूपों में से पूर्वी तथा पश्चिमी बहिरंग तथा अंतरंग भाषाओं में बहुत अन्तर है। सभी पूर्वी और सभी पश्चिमी कर्मणिप्रधान है, अत: सकर्मक भूतकालिक क्रियाओं से कर्त्ता के पुरुष तथा वचन का बोध केवल पूर्वी बहिरंग भाषाओं में हो सकता है, पश्चिमी भाषाओं में नहीं। उधर पूर्वी हिन्दी में भी ऐसा ही होता है।

6. भूतकालिक क्रियाओं में सर्वनाम का अन्तर्भुक्त होगा, अब बहिरंग भाषाओं तथा क्रियाओं में नहीं पाया जाता।

7. न तो सब धातु बहिरंग में ही समान हैं और न अन्तरंग में ही। जैसे बँगला तथा बिहारी भाषाओं के शब्द मराठी से नितान्त भिन्न हैं। इसके अतिरिक्त जो शब्द बहिरंग में भी पाये जाते हैं, वे अन्तरंग में भी मिलते हैं। जैसे- बिहारी, बंगला, सन्धी, लहँदा तथा मराठी में पाये जाने वाले शब्द गुजराती तथा पश्चिमी में भी पाये जाते हैं।

8. यदि श्री रामप्रसाद चन्द्र के अनुसार अन्तरंग और बहिरंग जाति के आर्य भिन्न जातियों के थे, तो उत्तरप्रदेश के कनौजिया (कान्यकुब्ज) ब्राह्मण तथा लहँदा और पश्चिमी पंजाबी भाषा बोलने वाले आर्य भिन्न जातियों के हुए, परन्तु ऐतिहासिक वंशावली के आधार पर वे एक ही जाति के ठहरते हैं। दूसरी ओर बंगाली अपने को मध्यदेशीय में आर्यों के वंशज मानते हैं, न कि पश्चिमी भारत तथा महाराष्ट्र से आकर बंगाल और बिहार में बने बहिरंग आर्यों के। अत: वंश और जाति के अनुसार अन्तरंग और बहिरंग भेद शून्य और भ्रामक है।

9. आर्यों का भारत में दो बार आना भी मान्य नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि इसके विपरीत आर्यों का पहले ही सप्तसिन्धु में निवास करना एक प्रकार से प्रमाणित हो चला है। इस प्रकार अन्तरंग और बहिरंग का प्रश्न ही नहीं उठता।

(दृष्टव्य—अभी तक यह प्रमाणित नहीं हो सका है कि आर्य भारत के ही मूल निवासी थे। मोहन जोदड़ों और हड़प्पा की सभ्यता आर्यों की न मानी जाकर, द्रविड़ों की या उनसे भी प्राचीन किसी जाति की मानी गई है, परन्तु कुछ विद्वान उसे आर्य-सभ्यता ही मानते हैं। वस्तुत: अन्तरंग-बहिरंग का यह भेद और उलझन आर्यों के दो बार भिन्न-भिन्न कालों में भारत-प्रदेश की कल्पना के कारण उत्पन्न हुई है। इस कल्पना का अभी तक कोई तर्कसंगत ऐतिहासिक आधार नहीं मिल सका है और इसी कल्पना के कारण भाषा-शास्त्री उत्तर भारतीय भाषाओं का मनमाना वर्गीकरण करते रहे हैं।

10. उपर्युक्त तर्कों के साथ ही डॉक्टर सुनीति कुमार चटर्जी का यह भी कहना है कि भारत में मध्यप्रदेश की भाषा पश्चिमी हिन्दी है। अत: उसे अन्य भाषाओं के साथ न रखकर केन्द्रीय भाषा मानना चाहिए। दूसरी बात यह है कि सुदूरपूर्व को ओर सुदूर पश्चिमी को एक साथ नहीं रखा जा सकता। इस सबका सम्बन्ध पश्चिमी हिन्दी से है, अत: उसे ही केन्द्रीय भाषा मानना चाहिए। उन्होंने इसी कारण पश्चिमी हिन्दी को केन्द्रीय भाषा मानकर भारतीय आर्य भाषाओं का निम्नलिखित वर्गीकरण किया है-

(1) उदीक (उत्तरीं वर्ग- हिन्दी, लहँदा, पंजाबी)।
(2) प्रतीच्य (पश्चिमी), वर्ग- गुजराती, राजस्थानी।
(3) मध्यदेशीय वर्ग- पश्चिमी हिंदी।
(4) प्राच्य (पूर्वी वर्ग)- पूवी हिन्दी, बिहारी, उड़िया, बँगला, असमी
(5) दक्षिझात्य (दक्षिणी) वर्ग-मराठी।

सुनीति बाबू पहाड़ी भाषाओं का मूलाधार पैशाची, दरद या खस भाषा को मानते हैं। उनका कहना है कि बाद में ये पहाड़ी भाषाएँ राजस्थान की प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं से विशेष प्रभावित हो गई थीं।

ग्रियर्सन का दूसरा वर्गीकरण—डॉक्टर चटर्जी के नवीन वर्गीकरण को देखकर ग्रियर्सन महोदय को अपनी भूल मालूम पड़ी और उन्होंने पश्चिमी हिन्दी को केन्द्र मानकर पुन: निम्नलिखित वर्गीकरण किया-

(क) मध्यदेशीय भाषा-

1. पश्चिमी हिन्दी।

(ख) अन्तर्वर्ती अथवा मध्य भाषाएँ-

(अ) मध्यदेशीय भाषा से विशेष घनिष्ठता वाली-2. पंजाबी, 3. राजस्थानी, 4. गुजराती, 5. पूर्वी पहाड़ी, खसकुरा अथवा नेपाली, 6. केन्द्रस्थ पहाड़ी, 7. पश्चिमी पहाड़ी।

(आ) बहिरंग भाषाओं से अधिक सम्बन्ध–8. पूर्वी हिन्दी।

(ग) बहिरंग भाषाएँ

(अ) पश्चिमोत्तर वर्ग–9. लहँदा, 10. सिन्धी।

(आ) दक्षिणी वर्ग–11. मराठी।

(इ) पूर्वी वर्ग–12. बिहारी, 13. उड़िया, 14. बँगला, 15. असमी।

ग्रियर्सन ने भीली को गुजराती और खानदेशी को राजस्थानी में अन्तर्भुक्त माना है। चटर्जी और ग्रियर्सन ने उपर्युक्त वर्गीकरण से डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा चटर्जी महोदय के वर्गीकरण को ही अधिक तर्कसंगत मानते हैं। उसी को आधार बनाकर उन्होंने अपना "स्वाभाविक वर्गीकरण" प्रस्तुत किया है। परन्तु उन्होंने पश्चिमी हिन्दी को केन्द्रीय भाग नहीं माना है। उसे मध्यदेशीय भाषाओं में स्थान देकर इस प्रकार अपना नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया है–

(क) उदीच्य (उत्तरी)–1. सिन्धी, 2. लहँदा, 3. पंजाबी।

(ख) प्रतीच्य (पश्चिमी)–4. गुजराती।

(ग) मध्यदेशीय (बीच का)–5. राजस्थानी, 6. पश्चिमी हिन्दी, 7. पूर्वी हिन्दी, 8. बिहारी।

(घ) प्राच्य (पूर्वी)–9. उड़िया, 10. बंगला, 11. असमी।

(ङ) दाक्षिणात्य (दक्षिणी)–12. मराठी।

डॉक्टर धीरेन्द्र वर्मा के उपर्युक्त वर्गीकरण में और ग्रियर्सन महोदय के वर्गीकरण में बहुत साम्य है। पहाड़ी भाषाओं के विषय में इनका मत चटर्जी महोदय के मत के ही संमान वेबर ने अपने वर्गीकरण में इन भाषाओं को उत्तरी, दक्षिणी, पूर्वी, पश्चिमी, मध्यदेशीय आदि अनेक वर्गों में विभाजित किया है।

आर्य भाषाओं का उपर्युक्त वर्गीकरण उनकी मूल जननी विभिन्न अपभ्रंशों को मानकर उनके आधार पर ही किया गया प्रतीत होता है। वस्तुत: अपभ्रंशों को इन भाषाओं से विशेष कर हिन्दी, अधिक सम्बन्ध नहीं था। अपभ्रंश प्राकृतों से प्रभावित थीं। उनका रूप संयोगात्मक था, जबकि अधिकांश आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ वियोगात्मक हैं। इसलिए इनका विकास अपभ्रंशों से न माना जाकर विभिन्न क्षेत्रीय बोलचाल की भाषाओं से ही माना जाना चाहिए। केवल हिन्दी ही नहीं, समस्त आधुनिक उत्तर भारतीय भाषाएँ अपना वर्तमान 'साहित्यिक' रूप प्राप्त करने से पूर्व निश्चित रूप से बोलचाल की भाषाएँ थीं। ■

प्रश्न 4. भाषा सर्वे के आधार पर मुख्य आधुनिक आर्य-भाषाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

उत्तर–

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का परिचय

हिन्दी वह आधुनिक भारतीय आर्य भाषा है, जो आज विश्व भाषा बनाने की दिशा में जोर-शोर से अग्रसर है। यह सारी दुनिया में फैले चार करोड़ भारतीयों की स्वाभाविक भाषा है। इसे वैश्विक संदर्भ प्रदान किया जाता है तथा साहित्य, पत्र-पत्रिकाओं, प्रकाशन, फिल्मों, उपग्रह-चैनलों तथा बहुराष्ट्रीय निगमों इत्यादि में हिन्दी की उपस्थिति को प्रोत्साहित किया जाता है। बस हिन्दी ही नहीं कई अन्य भारतीय भाषाएँ हैं, जिन्हें प्रकाश में लाया जा रहा है। इन भाषाओं के बारे में हम संक्षेप में जानेंगे।

पश्चिमी हिन्दी–पश्चिमी हिन्दी में पाँच प्रकार की हिन्दी आती हैं, खड़ी बोली,

ब्रजभाषा, बांगरु, कन्नौज और बुन्देली। इन सभी भाषाओं का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है।

खड़ी बोली—हिन्दी उत्तरप्रदेश के पश्चिमी जिलों में बोली जाती है। यह मेरठ, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, रामपुर, देहरादून आदि में बोली जाती है। यह भाषा अंबाला और पटियाला के पूर्वी भागों में भी बोली जाती है। इसमें कौरवी, पंजाबी, बांगरू, ब्रज इत्यादि के तत्व मिलते हैं, भले ही वे अपने मूल रूप में हों या परिवर्तित रूप में। खड़ी बोली के दो साहित्यिक रूप है, हिन्दी और उर्दू। हिन्दी संस्कृत से विकसित शाखा है, वहीं उर्दू अरबी-फारसी की देन है। हिन्दी में साहित्य की मात्र भरपूर है।

ब्रजभाषा—मथुरा, आगरा, अलीगढ़, धौलपुर तथा राजस्थान के पश्चिमोत्तर भाग में बोली जाने वाली भाषा है। यह साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण भाषा है। सूर, नन्ददास, मीरा, बिहारी, देव, भूषण रसखान आदि महान् कवि हुए है, जो ब्रजभाषा में अपने लेख लिख गए।

बांगरू—दिल्ली, करनाल, रोहतक, हिसार, पटियाला, जींद तथा नाभा में बोली जाती है। इसे हरियाणवी या जाटू भी कहते हैं और यह बहुत हद तक पंजाबी से मेल खाती है। यह खड़ी बोली हिन्दी की विभाषा है।

कन्नौजी—इटावा, कानपुर, फर्रूखाबाद, शाहजहाँपुर, हरदोई आदि जिलों में बोली जाती है। यह अवधि और ब्रज के बीच की भाषा है। यह ब्रजभाषा की विभाषा है। चिंतामणि, मतिराम, भूषण इत्यादि महान् कन्नौजी कवि रहे हैं।

बुन्देली—झाँसी, जालौन, हमीरपुर, बाँदा, ग्वालियर, ओरछा, सागर, दमोह आदि में बोली जाती है। यह भी ब्रजभाषा की विभाषा है।

राजस्थानी—राजस्थानी कोई भाषा नहीं है, बल्कि भाषाओं का एक समूह है, जो की राजस्थान में बोली जाती है। यह भाषाएँ शोरसैनी के नागर अपभ्रंश का विकसित रूप है, और इन्हें नागरी और महाजनी लिपि में लिखा जाता है। इसके अन्तर्गत चार मुख्य बोलियाँ- मारवाड़ी, जयपुरी, मालवी तथा मेवाती आती हैं।

मारवाड़ी—मुख्य रूप से जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, जैसलमेर इत्यादि क्षेत्रों में बोली जाती है। वहीं जयपुरी जयपुर, कोटा और बूंदी की भाषा है। मालवी दक्षिण पूर्वी राजस्थान की भाषा है, वहीं मेवाती अलवर, हरियाणा, गुड़गाँव के कुछ भागों में बोली जाती है।

गुजराती—गुजराती भाषा, जैसे की नाम से स्पष्ट है, गुजरात में बोली जाती है। यह भी शौरसेनी की नागरी अपभ्रंश से निकली है। यह राजस्थानी भाषाओं से बहुत मेल खाती है। गुजराती को लाट भी बुलाया जाता था।

मराठी—महाराष्ट्री अपभ्रंश से निकली मराठी, महाराष्ट्र में बोली जाती है। इसकी चार मुख्य बोलियाँ हैं, देशी, कोंकणी, नागपुरी तथा बरारी।

बिहारी—मागधी अपभ्रंश से निकली बिहारी, बिहार प्रांत में बोली जाने वाली भाषाओं का एक समूह है। इसमें मुख्य रूप से तीन भाषाएँ आती हैं। भोजपुरी, मैथिली तथा मगही।

भोजपुरी—इसका नाम भोजपुर गाँव के नाम पर पड़ा। यह भाषा मुख्य रूप से पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा बिहार में बोली जाती है। वाराणसी, गाजीपुर, जौनपुर, बलिया, मिर्जापुर, गोरखपुर, देवरिया, बस्ती, आजमगढ़, रांची, सारण, चंपारण इत्यादि इसके क्षेत्र हैं। भोजपुरी में कोई स्वतंत्र साहित्य नहीं मिलता, परन्तु कबीर, धर्मदास, भीखा आदि की कृतियों में भोजपुरी का प्रयोग मिलता है।

मैथिली—इसका नाम मिथिला के नाम पर पड़ा। दरभंगा, पूर्णिया, सहरसा और मुजफ्फरपुर आदि इसके क्षेत्र हैं। अंगिका इसी की एक भाषा है, जो मुंगेर और भागलपुर में बोली जाती है। बिहारी भाषाओं में सबसे अधिक साहित्य मैथिली भाषा में है। विद्यापति, हर्षनाथ, लखिमा ठकुरानी, मनबोझ झा, चंदा आदि मैथिली भाषा के कलाकार हैं।

मगही—यह पटना, हजारीबाग एवं भागलपुर में बोली जाती है।

बंगाली (बँगला)—बँगला मागधी अपभ्रंश से निकली भाषा है। यह बंगाल प्रांत में बोली जाती है। बंगाली साहित्यिक दृष्टि से अति सम्पन्न भाषा है, इसके साहित्यिक रूप को 'साधु भाषा' भी कहते हैं। बंगाली में उच्चारण की विशेषता है, जो कि इसके लिखित रूप को इसके उच्चरित रूप से भिन्न कर देती है। बंगला में लक्ष्मी को लॉक्खी, परमानंद को पोरमानन्द बोलते हैं। रवीन्द्रनाथ ठाकुर, चंडीदास, कृतिवास, शरत्चंद्र, बंकिमचन्द्र इत्यादि बंगला के महान् कवि रहे हैं, जिन्होंने इस भाषा को इसकी पहचान दी।

उड़िया—उड़ीया प्रांत मे बोली जाने वाली उड़िया भाषा औड्र जाति की भाषा से प्रभावित होने के कारण 'ओड्री' भी कहलाती है। मागधी अपभ्रंश से उत्पन्न इस भाषा पर तेलुगू तथा बंगाली का प्रभाव भी देखने को मिलता है।

आसामी—आसामी आसाम प्रांत में बोली जाने वाली यह भाषा आसामी, असमी, असमिया आदि नामों से जानी जाती है। यह मागधी अपभ्रंश से विकसित भाषा है। इस पर तिब्बती-बर्मी तथा नागा भाषाओं का प्रभाव भी देखने को मिलता है। माधवकंदली, शंकरदेव, माधवराम इत्यादि इसके प्रसिद्ध कवि हैं।

लहँदा—इसका विकास पैशाची अपभ्रंश से हुआ। लहँदा का अर्थ है- पश्चिमी। इसके और कई नाम भी है, जैसे जटकी, मुलतानी, डीलाही इत्यादि। यह भाषा पंजाब के पश्चिमी भाग में बोली जाती है। यह भाषा गुरूमुखी और उर्दू में लिखी जाती है तथा इसमें सिक्खों का लोकगीत, साहित्य और जनमसाखी मिलती है। इसकी चार मुख्य बोलियाँ हैं, केन्द्रीय बोली, मुलतानी (दक्षिण), पोठवारी (उत्तर) और धन्नी (उत्तर पश्चिम)।

सिंधी—ब्राचड अपभ्रंश से आती है, सिंधी। यह सिंध प्रांत की भाषा थी, जो की भारत-पाकिस्तान विभाजन के साथ दोनों ही देशों में फैल गयीं। यह भाषा बोलने वाले मुख्य रूप से पंजाब, दिल्ली, बम्बई, आदि स्थानों में बस गए हैं। इसी लड़ा लिपि में लिखा जाता है। इसकी पाँच मुख्य बोलियाँ हैं, बिचौली, सिरैकी, लाड़ी, थरेली और कच्छी।

पंजाबी—पैशाची अपभ्रंश से विकसित पंजाबी, पंजाब प्रान्त में बोली जाती है। इसकी एक बोली डोंगरी जम्मू में बोली जाती है। पंजाब में मुख्य रूप से सिक्ख धर्म का साहित्य संचित है। इसे गुरूमुखी लिपी में लिखा जाता है।

पहाड़ी—पहाड़ी भाषा का विकास खस अपभ्रंश से होता है। कुछ विद्वान मानते हैं की यह शौरसेनी के नागरी अपभ्रंश से विकसित भाषा है। इसे नागरी लिपि में ही लिखा जाता है। यह बोली हिमाचल के निचले भाग में बोली जाती है। पहाड़ी भाषा के तीन वर्ग है, पश्चिमी, मध्य तथा पूर्वी। गढ़वाली, कुमायूँनी इत्यादि इसी शाखा का भाषाएँ हैं। ■

प्रश्न 4. (अ) आधुनिक आर्य भाषाओं की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

आधुनिक आर्य भाषाओं की विशेषताएँ

अपभ्रंश के विभिन्न स्थानीय रूप 1000 ई. के आसपास अवहट्ठ रूपों से होते आधुनिक

भाषाओं के रूप में विकसित हो गए। आधुनिक भारतीय भाषाओं की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में प्रमुखत: वही ध्वनियाँ हैं, जो प्राकृत, अपभ्रंश आदि में थीं, किन्तु कुछ विशेषताएँ भी हैं-

(क) पंजाबी आदि में उदासीन स्वर 'अ' भी प्रयुक्त होने लगा है। अवधी आदि में जपित या अघोष स्वरों का प्रयोग होता है। गुजराती में मर्मर स्वर का विकास हो गया है। प्राकृत अपभ्रंश में केवल मूल स्वर थे, किन्तु अवहट्ट में ऐ, औ विकसित हो गए थे। कई आधुनिक भाषाओं में इनका प्रयोग होता है, यद्यपि कुछ बोलियों में केवल मूल स्वरों का प्रयोग हो रहा है, संयुक्त स्वरों का नहीं।

(ख) 'ऋ' का प्रयोग तत्सम शब्दों में लिखने में चल रहा है, किन्तु बोलने में यह स्वर न रहकर 'ट' के साथ इ या उ स्वर का योग रह गया है। उत्तरी भारत में इसका उच्चारण 'रि' और गुजराती आदि में 'ह'।

(ग) व्यंजनों में, जहाँ तक ऊष्मों का प्रश्न है, लिखने में तो प्रयोग स, ष, श तीनों का हो रहा है, किन्तु उच्चारण में स, श, दो ही हैं। 'ष' भी 'श' रूप में उच्चरित होता है। चवर्ग के उच्चारण में आधुनिक काल में एकरूपता नहीं है। हिन्दी में ये ध्वनियाँ स्पर्श संघर्षी हैं, किन्तु मराठी में इनका एक उच्चारण त्स (च), दूज (ज) जैसा भी है। सच पूछा जाए तो मराठी में दो चवर्ग हो गया है। संयुक्त व्यंजन 'ज्ञ' के शुद्ध उच्चारण (ज्ञ) का लोप हो चुका है, उसके स्थान परज्य, ग्यँ और ग्याँ, दन आदि कई उच्चारण चल रहे हैं।

(घ) विदेशी भाषाओं के प्रभाव स्वरूप आधुनिक भाषाओं में कई नवीन ध्वनियाँ आ गई हैं, क, ख, ग, ज, फ, ऑ आदि। इन ध्वनियों का लोकभाषाओं में तो क, ख, ग, ज, फ, आ के रूप में उच्चारण हो रहा है, किन्तु पढ़े-लिखे लोग इन्हें प्राय: मूल रूप में बोलने का प्रयास करते हैं। संगम तथा अनुनासिकता प्राय: सभी में स्वनिमिक हैं।

2. जिन शब्दों के उपधा स्वर या अंतिम को छोड़कर किसी ओर पर बलात्मक स्वराघात था, (क) उनके अन्तिम दीर्घ स्वर प्राय: ह्रस्व हो गए हैं तथा (ख) अन्तिम 'अ' स्वर कुछ अपवादों (संयुक्त व्यंजनादि) को छोड़कर प्राय: लुप्त हो गया है (राम, अबू, आदि)

3. प्राकृत आदि में जहाँ समीकरण के कारण व्यंजनद्वित या दीर्घ व्यंजन (कर्म-कम्म) हो गए थे, आधुनिक काल में 'द्वित्व' में केवल एक रह गया और पूर्ववर्ती स्तर में क्षतिपूरक दीर्घता आ गई (कम्म - काम, अट्ठ-आठ) पंजाबी, सिन्धी अपवाद हैं, उनमें प्राय: प्राकृत से मिलते-जुलते रूप ही चलते हैं (अट्ठ कम्म)।

4. बलात्मक स्वराघात है। वाक्य के स्तर पर संगीतात्मक भी है।

5. अपभ्रंश के प्रसंग में कहा जा चुका है कि संस्कृत, पालि आदि की तुलना में रूप कम हो गए थे। आधुनिक भाषाओं में अपभ्रंश की तुलना में भी रूप कम हो गए हैं, इस प्रकार भाषा सरल हो गई है।

संस्कृत आदि में कारक के तीनों वचनों में लगभग 24 रूप चलते थे। प्राकृत में लगभग 12 ही गए थे अपभ्रंश में 6 और आधुनिक भाषाओं में केवल दो, तीन या चार रूप हैं। क्रिया के रूपों में भी पर्याप्त कमी हो गई है। क्रियार्थ या काल आदि तो सभी, बल्कि संस्कृत आदि से अधिक व्यक्त कर लिए जाते हैं, किन्तु सबके रूप अलग नहीं है। सहायक शब्दों से काम चल जाता है। मूल रूप थोड़े हैं।

6. रचना की दृष्टि से संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि की भाषा योगात्मक थी। अयोगात्मकता अपभ्रंशों से आरम्भ हुई और अब, आधुनिक भाषाएँ (नाम और धातु दोनों दृष्टियों से) पूर्णत: अयोगात्मक या वियोगात्मक हो गई हैं। कुछ रूप योगात्मक हैं भी तो अपवादस्वरूप। नाम रूपों के लिए परसर्गों का प्रयोग होता है और धातु-रूपों के लिए कृदंत और सहायक क्रिया के आधार पर संयुक्त क्रिया का।

7. संस्कृत में वचन 3 थे। मध्यकालीन आर्य भाषाओं में ही द्विवचन समाप्त हो गया था और आधुनिक काल में भी केवल दो वचन हैं। अब प्रवृत्ति एकवचन की है। लगता है कि आगे चलकर रूप केवल एकवचन के रह जायेंगे और दो, तीन या अधिक का भाव सहायक शब्दों से प्रकट किया जाएगा। उदाहरणार्थ, हिन्दी में 'में' के प्रयोग की प्रवृत्ति कम हो रही है। उसके स्थान पर 'हम' चल रहा है, जिसके बहुवचन का कोई अलग रूप नहीं होता, केवल 'लोग' या 'सब' जोड़कर काम चला लेते हैं।

8. संस्कृत में लिंग 3 थे। मध्ययुगीन भाषाओं में भी स्थिति यही थी। आधुनिक काल में सिन्धी, पंजाबी, राजस्थानी तथा हिन्दी में 2 लिंग है (पुल्लिग, स्त्रीलिंग) संभवत: तिब्बत-वर्मी मुंडा आदि भाषाओं के प्रभाव के कारण बंगाली, उड़िया, असमी में लिंगभेद कम सा है। बिहारी, नेपाली में भी समाप्त होता-सा दिखाई दे रहा है। तीन लिंग केवल गुजराती, मराठी और कुछ सिंहली में है।

9. आधुनिक भाषाओं में प्राचीन तथा मध्ययुगीन से शब्द भण्डार की दृष्टि से सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पश्तो, तुर्की, अरबी, फारसी, पुर्तगाली तथा अंग्रेजी आदि से लगभग 8-9 हजार नये विदेशी शब्द आ गए हैं। इनके पूर्व भाषाओं का प्रमुख शब्द भंडार तत्सम तद्भव और देशज का ही था। मध्ययुगीन भाषाओं की तुलना में आज तत्सम शब्दों का प्रयोग अधिक हो रहा है और तद्भव का अपेक्षाकृत कम। इधर पारिभाषिक शब्दावली की कमी दूर करने के लिए नए शब्द बनाए और अपनाए जा रहे हैं। अनुकरणात्मक एवं प्रतिध्वन्यात्मक शब्द बहुत प्रयुक्त होने लगे हैं।

इकाई-2

हिन्दी का भौगोलिक विस्तार

प्रश्न 5. हिन्दी की उपभाषाओं के बारे में संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

उत्तर-

हिन्दी की उपभाषाएँ

ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दी प्रदेश में पाँच प्राकृतें थीं- अपभ्रंश, शौरसेनी, अर्द्धमागधी, मागधी और खस। अपभ्रंश से राजस्थानी हिन्दी, शौरसेनी से पश्चिमी हिन्दी, अर्द्धमागधी से पूर्वी हिन्दी, मागधी से बिहारी हिन्दी और खश से पहाड़ी हिन्दी का विकास हुआ और आज जिसे हम हिन्दी भाषा के नाम से जानते हैं, वह इन्हीं पाँच प्राकृतों की उत्तराधिकारिणी विभाषाओं का संघ है। हिन्दी भाषा में पाँच वर्ग बनाने के मुख्य आधार हैं- इनके प्रत्येक वर्ग की बोलियों की सामान्य विशेषताएँ, जिनके सहारे इनका वैज्ञानिक अध्ययन करने में सुविधा होती है और प्रत्येक उपभाषा की सामान्य विशेषताएँ हैं, जो अपनी एक अलग पहचान बनाती हैं। इन्हें उपभाषाएँ इसलिए कहा गया है कि प्रत्येक उपभाषा की अपनी बोलियाँ तथा उपबोलियाँ हैं। इसके अतिरिक्त पहाड़ी हिन्दी को छोड़कर शेष सभी उपभाषाओं का किसी

न किसी बोली में अपना साहित्य भी प्राप्त होता है। राजस्थानी की मारवाड़ी और जयपुरी बोली में, पश्चिमी हिन्दी की ब्रजभाषा और कौरवी (खड़ी बोली) बोलियों में, पूर्वी हिन्दी की अवधी बोली में और बिहारी की मैथिल बोली में उच्चकोटि का साहित्य प्राप्त होता है। मध्यदेश की यदि कोई बोली आगे बढ़कर भाषा की पदवी प्राप्त करती है तो वह है हिन्दी। यहाँ पहले राजस्थानी डिंगल को साहित्यिक भाषा का रूप प्राप्त हुआ, उसके बाद ब्रज भाषा को और अब खड़ी बोली (कौरवी) को यह मान्यता प्राप्त हुई है। कुछ समय के लिए अवधी की सम्भावनाएँ भी बहुत अधिक लगी, किन्तु तुलसी के बाद अवधी भाषा में कोई बड़ा साहित्यकार नहीं हुआ। ब्रजभाषा और खड़ी बोली को छोड़कर और किसी भी बोली को अपने क्षेत्र की सीमा से बाहर साहित्य का माध्यम नहीं बनाया गया। ब्रज भाषा करीब 300 वर्षों तक मध्यदेश की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित रही है। खड़ी बोली का अस्तित्व हमें संत कवियों की वाणी में और अमीर खुसरो के लोकप्रिय चुटकुलों में दिखलाई पड़ता है, किन्तु तब यह सिर्फ बोली मात्र थी। आज वर्तमान युग में इसकी जैसी व्यापकता किसी दूसरी भाषा या बोली को प्राप्त नहीं हो सकी। वास्तव में देखा जाये तो उस जमाने की जो भाषा थी वह बोली बनकर रह गई और जो बोली थी वह भाषा के पद पर आसीन हो गईं। हिन्दी एक विस्तृत क्षेत्र की भाषा है। विभिन्न विद्वानों ने इसके क्षेत्र की चर्चा इस प्रकार की है-

डॉ. त्रिभुवन सिंह की मान्यता है, "यथार्थत: हिन्दी की व्याप्ति अखण्ड भारत में हो, इसकी स्पृहा भारतीय संविधान में व्यक्त हो गई, तथापि सत्ता लोलुपता एवं राजनैतिक स्वार्थपरता के कारण संविधान का यह स्वप्न साकार नहीं हो सकता।

पुन: **डॉ. त्रिभुवन सिंह** के अनुसार, "हिन्दी भारत वर्ष के एक बहुत विशाल प्रदेश की भाषा है। इसका प्रचार राजस्थान और पंजाब की पश्चिमी सीमा से लेकर बिहार के पूर्वी सीमान्त तथा उत्तर प्रदेश की उत्तरी सीमा से मध्यदेश के मध्य तक है। इस विशाल क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले अनेक राज्यों की साहित्यिक भाषा को 'हिन्दी' के नाम से जाना जाता है। हिन्दी के नाम से जितना साहित्य उपलब्ध है, यद्यपि सबका भाषा शास्त्रीय ढाँचा एक जैसा नहीं है, क्योंकि इतने विशाल क्षेत्र में अनेकता के अनेक कारण विद्यमान है, फिर भी अनेकता में एकता स्थापित करने वाले साहित्यिक प्रयत्नों के लिए व्यवहृत भाषा को विद्वानों ने हिन्दी की संज्ञा दी है।"

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा का मत है, "शब्दार्थ की दृष्टि से हिन्दी शब्द का प्रयोग हिन्दी या भारत में बोली जाने वाली किसी भी आर्य, द्रविड़ अथवा अन्य कुल की भाषा के लिए हो सकता है, किन्तु आजकल वास्तव में इसका प्रयोग उत्तरभारत के मध्यदेश के हिन्दुओं की साहित्यिक भाषा के अर्थ में होता है। इस भूमि भाग की सीमाएँ पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर-पश्चिम में अंबाला, उत्तर में शिमला, नेपाल के पूर्वी छोर के पहाड़ी प्रदेश का दक्षिण भाग, पूर्व में भागलपुर, दक्षिण में रायपुर तथा दक्षिण-पश्चिम में खंडाला तक पहुँचती है।" सन् 1812 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज के कैप्टेन टेलर ने स्पष्ट कहा है- "मैं केवल हिन्दुस्तानी या रेखता का जिक्र कर रहा हूँ, जो फारसी लिपि में भी लिखी जाती है, मैं हिन्दी का जिक्र नहीं कर रहा हूँ, जिसकी अपनी लिपि है। जिसमें अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग नहीं होता और मुसलमानी आक्रमण से पहले जो भारत के समस्त उत्तर-पश्चिम प्रान्त की भाषा थी।" इस कथन से हिन्दी और उसके क्षेत्र का और भी अधिक स्पष्टीकरण हो जाता है। इस प्रकार 'उर्दू' को छोड़कर बिहार, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान, दिल्ली,

पंजाब, हिमाचल प्रदेश के कुछ भागों की सम्पूर्ण बोलियाँ एवं भाषाएँ हिन्दी के अन्तर्गत आ जाती हैं। इस दृष्टि से विचार करने पर ज्ञात होता है कि हिन्दी के अन्तर्गत पाँच उपभाषाएँ और अठारह बोलियाँ आती हैं, जिनका उल्लेख डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने निम्न प्रकार से किया है-

1. **पूर्व हिन्दी की तीन बोलियाँ हैं-**
   (1) अवधी (2) बघेली (3) छत्तीसगढ़ी।
2. **पश्चिमी हिन्दी**- इसकी छ: बोलियाँ हैं-
   (1) बाँगर (2) कौरवी (3) ब्रज (4) कनौजी
   (5) बुन्देली (6) निमाड़ी
3. **राजस्थानी उपभाषा**- इसकी चार बोलियाँ हैं-
   (1) मेवाती- अहीरवाटी (2) मालवी (3) जयपुरी-हाड़ौती
   (4) मारवाड़ी-मेवाड़
4. **बिहारी उपभाषा**- इसकी तीन बोलियाँ हैं-
   (1) भोजपुरी (2) मगही (3) मैथिली
5. **पहाड़ी उपभाषा**- इसकी दो बोलियाँ हैं-
   (1) पश्चिमी पहाड़ी (2) मध्य पहाड़ी।

प्रश्न 5. (अ) पूर्वी हिन्दी से आप क्या समझते हैं? उनकी बोलियाँ एवं विशेषताओं का वर्णन करें।

उत्तर-

पूर्वी हिन्दी एवं उनकी बोलियाँ

पूर्वी हिन्दी का उद्भव अर्धमागधी अपभ्रंश से हुआ है। पश्चिमी हिन्दी के पूर्व में स्थित होने के कारण इसे पूर्वी हिन्दी नाम दिया गया है। इसका प्रयोग प्राचीन कौशल राज्य के उत्तरी-दक्षिणी क्षेत्र में होता है। वर्तमान समय में इसे उत्तरप्रदेश के कानपुर, लखनऊ, गौंडा, बहराइच, फैजाबाद, जौनपुर, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, मिर्जापुर, इलाहाबाद, मध्यप्रदेश के जबलपुर, रीवाँ आदि जिलों से सम्बन्धित मान सकते हैं। यह इकार, उकार बहुल रूपी वाली उपभाषा है। इसमें तीन बोलियाँ हैं- अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी।

(क) अवधी—'अवध' क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण इसे 'अवधी' नाम से अभिहित किया गया है। इसका प्रयोग गौंडा, फैजाबाद, सुल्तानपुर, रायबरेली, बाराबंकी, इलाहाबाद, लखनऊ, जौनपुर आदि जिलों में होता है।

इसकी कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं-

1. इसमें 'श' के स्थान पर 'स' का प्रयोग होता है- शंकर > संकर, शाम > साम आदि।
2. इसमें 'व' ध्वनि प्राय: 'ब' के रूप मे प्रयुक्त होती है, जैसे- वन > बन, वाहन > बाहन आदि।
3. 'इ' और 'उ' स्वरों का बहुल प्रयोग होता है।
   इ आगम-स्कूल > इस्कूल, स्त्री > इस्त्री
   उ आगम-सूर्य > सूरज झ सूरूजु
4. 'ण' ध्वनि के स्थान पर प्राय: 'न' का प्रयोग होता है।
5. ऋ के स्थान पर 'रि' का उच्चारण प्रयोग होता है।

भक्तिकाल में समृद्ध साहित्य की रचना हुई है। तुलसीदास कृत 'रामचरित मानस' और जायसी कृत 'पद्मावत' महाकाव्यों की रचना अवधी में हुई है। सूफी काव्य-धारा के सभी कवियों ने अवधी भाषा को ही अपनाया। समृद्ध लोक साहित्य मिलता है।

(ख) बघेली—इस बोली का केन्द्र रीवा हैं। मध्यप्रदेश के दमोह, जबलपुर, बालाघाट में और उत्तरप्रदेश के मिर्जापुर में कुछ अंश तक बघेली का प्रयोग होता है। इस क्षेत्र पर अवधी का विशेष प्रभाव दिखाई देता है। कुछ विद्वानों ने बघेली को स्वतंत्र बोली न कहकर अवधी का दक्षिणी रूप कहा है। इसमें अवधी की भाँति 'व' ध्वनि 'ब' के रूप में प्रयुक्त होती है।

(ग) छत्तीसगढ़—'छत्तीसग' क्षेत्र से सम्बन्धित होने के कारण इसे छत्तीसगढ़ी बोली नाम दिया गया है। वर्तमान समय में छत्तीसगढ़ प्रदेश के रायपुर, बिलासपुर क्षेत्र में इसका प्रयोग होता है।

इसमें कहीं-कहीं पर 'स' ध्वनि 'छ' हो जाती है।

अल्पप्राण ध्वनियों के महाप्राणीकरण की प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलती है।

समृद्ध लोक-साहित्य मिलता है।

प्रश्न 6. पश्चिमी हिन्दी से आप क्या समझते हैं? पश्चिमी हिन्दी की प्रमुख बोलियाँ एवं उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए। अथवा
पश्चिमी हिन्दी क्या है? पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी की तुलना करें।

उत्तर-

पश्चिमी हिन्दी एवं उनकी बोलियाँ

पश्चिमी उपभाषा को ग्रियर्सन और चटर्जी पश्चिमी हिन्दी कहते हैं। इस दृष्टि से ये हिन्दी के क्षेत्र को सीमित करते हैं। इसकी बोलियाँ दिल्ली के आसपास के क्षेत्र में व्यवहृत होती हैं। दिल्ली, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिलों में इस उपभाषा को बोलियाँ बोली जाती हैं। इसीलिए इसे पूरब की बोलियों की तुलना में पश्चिमी हिन्दी कहा जाता है।

इस उपभाषा का क्षेत्र प्राचीन काल से मध्य देश कहलाता था। मध्य देश की भाषा होने के कारण यहाँ की भाषाएँ हमेशा पूरे देश में व्याप्त हुईं। संस्कृत पूरे देश की साहित्यिक अभिव्यक्ति का माध्यम रही, ब्रजभाषा का व्यापक प्रसार हुआ, हिन्दी भाषा अमीर खुसरो के समय से ही पूरे देश में दकनी, उर्दू आदि रूपों में फैली। इस दृष्टि से पश्चिमी हिन्दी हिन्दी क्षेत्र की बहुत महत्वपूर्ण उपभाषा है।

पश्चिमी हिन्दी की पाँच बोलियाँ हैं- बाँगरू (हरियाणवी), खड़ी बोली, ब्रज, बुंदेली और कन्नौजी। यहाँ हम पाँचों बोलियों के बारे में विचार करेंगे।

बाँगरू (हरियाणवी)—जैसे कि नाम से ही स्पष्ट है यह बोली मुख्यत: हरियाणा की बोली है। यह बोली दिल्ली और उत्तर में करनाल, रोहतक, अंबाला आदि जिलों में बोली जाती है। रचना में यह खड़ी बोली के बहुत निकट है। संज्ञा शब्द और क्रिया रूप आकारांत होते हैं- घोड़ा गया आदि। बाँगरू मे 'को' के लिए 'ने' का प्रयोग होता है, जिसके कारण दिल्ली में कई लोग मैंने जाना है (मुझे जाना है के लिए) का प्रयोग करते हैं। उच्चारण की दृष्टि से मूर्धन्य ध्वनियों की अधिकता है। करणा, मरणा आदि क्रियार्थक संज्ञाएँ हैं, काल (काल), चाल्लणा (चलना) आदि उदाहरण दृष्टव्य हैं।

खड़ी बोली—खड़ी बोली हिन्दी भाषा का स्त्रोत है। भाषा के रूप में हिन्दी का स्वरूप

इस बोली की रचना से मिलता है, लेकिन विकास के कारण हिन्दी भाषा का वर्तमान रूप बोली से भिन्न है। यहाँ हम सिर्फ बोली का ही विवरण दे रहे हैं।

खड़ी बोली का क्षेत्र दिल्ली के उत्तर में मेरठ, बिजनौर, मुजफ्फरपुर, सहारनपुर, मुरादाबाद, रामपुर आदि जिले हैं। रचना की दृष्टि से यह मानक हिन्दी से अधिक भिन्न नहीं है। उच्चारण की दृष्टि से कुछ अन्तर दिखायी पड़ते हैं। खड़ी बोली में ण, ल का व्यापक उच्चारण होता है। करणा, जाणा आदि क्रिया रूप हैं, बाल (बाल), जंगल (जंगल) आदि उदाहरण दृष्टव्य हैं। व्यंजन द्वित्व रूप में आते हैं। गाड्डी, भेज्जा, बेट्टा, जात्ता (जाता), छोट्टा आदि रूप दृष्टव्य हैं। वर्तमान का रूप भिन्न है- मारे हैं (मार रहा है), सामान्य भूतकाल अलग है- मारे था (मारता था)। ऐसी विशेषताओं को छोड़ खड़ी बोली की रचना हिन्दी से बहुत भिन्न नहीं है।

ब्रज—ब्रज याने ब्रजभूमि की भाषा ब्रज है। ब्रजमंडल मथुरा, वृंदावन के आसपास का क्षेत्र है, लेकिन इस बोली का स्थान इससे कहीं विस्तृत है। आगरा, मथुरा, एटा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद, बुलंदशहर, बदायूँ आदि जिलों में ब्रज भाषा बोली जाती है।

इस बोली का साहित्यिक महत्व है। अधिकतर भक्ति साहित्य और लगभग समस्त रीतिकालीन साहित्य की रचना ब्रज में ही हुई। इसी साहित्यिक महत्व के कारण इसे ब्रजभाषा की संज्ञा दी जाती है। आधुनिक युग तक साहित्यकार ब्रजभाषा में साहित्य सृजन करते रहे।

ब्रज भाषा संरचना की दृष्टि से खड़ी बोली से मेल खाती है। मुख्य अन्तर यह है कि पुल्लिग एकवचन संज्ञा शब्द भूतकाल के रूप तथा विशेषण 'ओ' कारांत। (किन्हीं क्षेत्रों में 'औ'कारांत) होते हैं। घोड़ो (घोड़ा), गयो (गया), भलो (भला) आदि उदाहरण दृष्टव्य हैं। इन शब्दों के रूप में ब्रज, राजस्थानी और गुजराती भाषाओं में समानता है।

कन्नौजी—इसका नाम कन्नौज नगर पर पड़ा है। यह नगर फर्रुखाबाद जिले में है। 'कन्नौज' संस्कृत 'कान्यकुब्ज' का तद्भव रूप है। इसका क्षेत्र पश्चिमी उत्तर प्रदेश के इटावा, फर्रूखाबाद, शाहजहाँपुर आदि जिले हैं। यह कानपुर, हरदोई आदि जिलों में भी बोली जाती है, लेकिन यहाँ की भाषा में पूर्वी हिन्दी (अवधी) की छाप दिखायी पड़ती है। इसके पश्चिम में ब्रजभाषा का क्षेत्र है, दक्षिण में बुंदेली का। कन्नौजी ब्रज की तरह 'ओ' कारांत भाषा है, याने कन्नौजी के सभी विशेषण और क्रिया रूप ओकारांत होते हैं- खोटो, छोटो, मेरो, भयो (हुआ), बइठो (बैठो) आदि उदाहरण दृष्टव्य हैं। भविष्यत् काल के दोनों रूप मिलते हैं- पश्चिमी वर्ग का रूप जो 'ग' से बनता है और पूर्वी रूप जो 'ह' से बनता है। उदाहरण के लिए, मारिहौं/मारेगो (मारूँगा), मारिहैं/मारेंगे (मारेंगे) आदि।

बुंदेली—यह बुंदेलखंड की बोली है। इस क्षेत्र में बुंदेल राजवंशों का अविस्मरणीय इतिहास रहा है। इसका क्षेत्र झाँसी, जालौन, भोपाल, सागर, होशंगाबाद आदि जिले में हैं, जो मुख्यत: मध्यप्रदेश के जिले हैं। इसके उत्तर में कन्नौजी हैं, दक्षिण-पश्चिम की राजस्थानी की मालवी है, दक्षिण में मराठी भाषा का क्षेत्र है और पूर्व में पूर्वी हिन्दी की बघेली है। इस तरह यह बोली चारों तरफ भिन्न भाषाओं या उपभाषाओं से घिरी है। इस कारण इसकी कई उपबोलियाँ हैं, जो पड़ोस की उपभाषा या भाषा से प्रभावित रूप हैं। बुंदेली में अधिक साहित्य नहीं है।

यह मूलत: 'ओ' कारांत भाषा है। उदाहरण के लिए, देखें- धोरो (घोड़ा), तेरो (तेरा), मारो (मारा) आदि। भविष्यत् काल दोनों तरह से बनते हैं- हुहों या होऊँगो।

पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी की तुलना

हिन्दी भाषा के विभिन्न छः भागों-पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, पहाड़ी हिन्दी और दक्खिनी हिन्दी में पूर्वी और पश्चिमी हिन्दी का विशेष महत्व है। हिन्दी भाषा के मध्य युग में इन्हीं दो वर्गों की अवधी और ब्रज दो बोलियों को हिन्दी के रूप में मान्यता मिली थीं। इसी में काव्य-रचना होती रही है। भक्तिकाल में अवधि और ब्रज दोनों भाषाओं को काव्य-सृजन में अपनाई जाती रही है और रीतिकाल में ब्रजभाषा प्रयुक्त होती थी। तुलसीदास ने 'रामचरित मानस' महाकाव्य की रचना अवधी में की है। जायसी ने 'पद्मावत्' की रचना ठेठ अवधि में की है। 'प्रेमाश्रयी काव्य' अवधी में ही लिखा गया है। भक्ति काल के समस्त अष्टछाप कवियों ने ब्रजभाषा को अपनाया है, तो रीतिकाल के केशव, घनानन्द, बिहारी आदि कवियों ने ब्रजभाषा को ही अपनाया है।

तुलनात्मक अध्ययन

1. पश्चिमी हिन्दी की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से हुई, तो पूर्वी हिन्दी का उद्भव अद्‌र्ध-मागधी से हुआ।

2. पश्चिमी हिन्दी की पाँच प्रमुख बोलियाँ हैं- कौरवी, हरियाणवी, ब्रज, कन्नौजी, बुंदेली। पूर्वी हिन्दी की तीन प्रमुख बोलियाँ हैं- अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी।

3. पश्चिमी हिन्दी निकटवर्ती भाषा पंजाबी से यत्र-तत्र प्रभावित लगती है और पूर्वी हिन्दी में बिहारी हिन्दी से पर्याप्त समानता मिलती है।

4. पूर्वी हिन्दी में 'इ' और 'उ' का बहुल रूप में प्रयुक्त पश्चिमी हिन्दी में 'ई' और 'ऊ' के प्रयोग की प्रमुखता है।

5. पश्चिमी हिन्दी में संयुक्त स्वरों का स्वतंत्र रूप में उच्चारण होता है, यथा- बालक > बालक किन्तु पूर्वी हिन्दी में पूर्ववत् रहती है।

6. पूर्वी हिन्दी में संयुक्त स्वरों का स्वतंत्र रूप में उच्चारण होता है, यथा- और > क अउर ऐनक > अइनक। पश्चिमी हिन्दी में संयुक्त स्वर का बहुल रूप में प्रयोग होता है।

7. पूर्वी हिन्दी में 'ल' के स्थान पर यदा-कदा 'र' का प्रयोग होता है, यथा- केला > केरा, फर > फल आदि। पश्चिमी हिन्दी में 'ल' का प्रयोग होता है।

8. पूर्वी हिन्दी में 'श' ध्वनि प्रायः 'स' के रूप में प्रयुक्त होती है, यथा- शंकर > संकर, शेर > सेर। पश्चिमी हिन्दी में प्रायः मूल रूप प्रयुक्त होता है।

9. पूर्वी हिन्दी में 'व' ध्वनि प्रायः 'ब' के रूप में प्रयुक्त होता है, यथा- वन > वन, आशार्वाद > आसीर्वाद आदि। पश्चिमी हिन्दी में प्रायः मूल रूप प्रयुक्त होता है।

10. पूर्वी हिन्दी में कारक-चिन्ह 'ने' का प्रयोग विरल रूप में होता है, जबकि पश्चिमी हिन्दी का मुख्य चिन्ह है।

11. पूर्वी हिन्दी में उत्तम पुरुष सर्वनाम में एकवचन के लिए 'हम' और बहुवचन के लिए 'हम' या 'हम सब' प्रयुक्त होते हैं, जबकि पश्चिमी हिन्दी में प्रायः एकवचन के लिए 'मैं' और बहुवचन के लिए 'हम' का प्रयोग होता है।

12. पूर्वी हिन्दी में क्रिया के साथ यत्र-तत्र 'ब' का प्रयोग होता है- चलब, करब आदि तो पश्चिमी हिन्दी (ब्रज) में ओकार रूप सामने आता है- चलना > चलनों, करना > करनो।

13. क्रिया के भविष्यत् काल के रूप निर्धारण में ग, गी, गे के प्रयोग पश्चिमी हिन्दी में मिलते हैं, किन्तु पूर्वी हिन्दी में रूप विविधता है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि हिन्दी की प्रमुख उपभाषाओं-पूर्वी हिन्दी और पश्चिमी हिन्दी की बोलियों की शब्द-संपदा में बहुत कुछ समानता है, वहीं उनकी ध्वन्यात्मक, शब्द-संरचनागत और व्याकरण आधार पर पर्याप्त भिन्नता है। यह भिन्नता ही संबंधित बोलियों की अपनी विशेषताएँ हैं। हिन्दी की इन दोनों उप-भाषाओं और उनकी बोलियों का महत्व स्वत: सिद्ध है।

प्रश्न 6. (अ) राजस्थानी हिन्दी एवं उनकी बोलियों का वर्णन करते हुए राजस्थानी हिन्दी की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

राजस्थानी हिन्दी एवं उनकी बोलियाँ

राजस्थान प्रदेश की भाषा राजस्थानी है। वर्तमान में यह हिन्दी की उपभाषा के रूप में जान जाती है। मध्यदेश के अधिक निकट होने के कारण शौरसेनी भाषा का प्रभाव इस पर पड़ा है। ब्रजभाषा के साहित्य में प्रतिष्ठित होने से पूर्व हिन्दी प्रदेश में डिंगल (प्राचीन राजस्थानी) साहित्य का बोलबाला था। राजस्थानी की मुख्य चार बोलियाँ हैं- मेवाती, जयपुरी, मारवाड़ी और मालवी। मेवाती को ही मेवाड़ी कहते हैं। यह बोली उत्तरपूर्वी राजस्थान की है। इसके बोलने वालों की संख्या लगभग 15 लाख है। जयपुरी बोली पूर्वी मध्य राजस्थान की है। इसकी अन्य बोलियाँ अजमेरी एवं हाड़ौती हैं। इसके बोलने वालों की संख्या लगभग 30 लाख है। मारवाड़ी पश्चिमी राजस्थानी की बोली है। यह मुख्य रूप से जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर तथा उदयपुर में बोली जाती है। इसके बोलने वालों की संख्या लगभग 60 लाख है। मालवा प्रदेश के चारों ओर मालवी बोली का प्रचार है। इसका मुख्य केन्द्र इन्दौर है। इसके बोलने वालों की संख्या लगभग 43 लाख है। कुल मिलाकर राजस्थानी भाषा को बोलने वाले लगभग दो करोड़ पंद्रह लाख हैं।

उपर्युक्त बोलियों के अतिरिक्त 'भीली' उपभाषा जो करीब बीस लाख लोगों के विचारों के आदान-प्रदान की बोली है। यह राजस्थानी की उपभाषा है। तमिल प्रदेश में प्रचलित सौराष्ट्री तथा पंजाव और कश्मीर के प्रदेश में व्यवहृत होने वाली गूजरी भी राजस्थानी सीमा के अन्तर्गत आती है। व्यक्तिगत व्यवहार में राजस्थानी की महाजनी लिपि प्रचलित है। मारवाड़ी लोगों में व्यापार-विस्तार के कारण मारवाड़ी लिपि सम्पूर्ण उत्तर भारत में फैली हुई है। राजस्थानी साहित्य में बड़े-बड़े प्रतिभाशाली कवि हुए हैं। जिनमें 'चंदबरदाई, दुरसाजी, बांकी दास, मुरारीदान, सूर्यमल्ल प्रमुख हैं। बीसलदेव रासो, ढोलामारूरादूहा और बेलि क्रिसन रुकमिणी री आदि श्रृंगाररस के प्रसिद्ध ग्रंथ हैं। मीरा, दादू, चरणदास, हरिदास आदि संत कवियों की वोलियाँ भी महत्वपूर्ण हैं। गद्य साहित्य में बचनिकाओं, आख्यातों और बातों की अपनी विशाल परम्परा है। अधिकतर साहित्य मारवाड़ी में लिखा गया है। थोड़ा साहित्य जयपुरी में भी प्राप्त होता है। इसकी बोलियों और उपवोलियों की कुल संख्या तीस है। भीली (अनार्य) गुजराती और राजस्थानी का सम्मिलित रूप है। भीली बोलने वालों की संख्या 22 लाख अलग है। रानस्थानी की सामान्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. राजस्थानी उपभाषा। ड। वर्ग वर्ग बहुला है,। ल। ण। ड। अधिक प्रयुक्त होते हैं।
2. मालवी में। ड़। की अपेक्षा। ड। अधिक प्रयुक्त होता है।
3. अल्पप्राणीकरण के उदाहरण वहुत मिल जाते हैं।
4. । य। और ।व। का उच्चारण होता है।

5. उत्तर-पश्चिमी और दक्षिणी बोलियों में।च। का।स।,।ज। का।ञ और।झ। का। ज्ह। उच्चारण उल्लेखनीय है।

6. इन्हीं बोलियों में।स। का।ह। हो जाता है, जैसे- सेठ क हेट, सौ का हौं है।

7. पश्चिमी हिन्दी की तुलना में राजस्थानी व्याकरण में ओकारान्त पुल्लिग एकवचन का बहुवचन और तिर्यक एकवचन आकारान्त होता है। शेष सब प्रकार के शब्द बहुवचन और तिर्यक एकवचन में बदलते नहीं है। जैसे- तारों से तारा, किन्तु बादल, घोड़ी आदि का रूप यही बना रहता है। बहुवचन के अन्त में- आँ आता है, जैसे- ताराँ, बादलाँ, राताँ आदि।

8. कर्म-सम्प्रदान के कारक- नै, नई, रे। करण-अपादान- का, सूँ। सम्बन्ध- से, रा, री, मारवाड़ी में तथा शेष बोलियों में को, का, की, व्यापक परसर्ग हैं।

9. सर्वनामों और क्रियाओं के रूप ब्रजभाषा से मिलते-जुलते हैं। अन्तर यही है कि बहुवचन में।ए।एँ।या।ऐ। नहीं बल्कि।आँ। आता है, जैसे- म्हें हाँ (हम हैं), इणाँ (इन्हें) था, थे, थी के लिए हो, हा, ही बिल्कुल ब्रजभाषा की तरह है।

संज्ञार्थक क्रिया, आज्ञार्थ भाव, प्रेरणार्थक, क्रिया, कृदन्त आदि ब्रजभाषा के समान है, अन्तर केवल उच्चारण का है। ■

प्रश्न 7. बिहारी हिन्दी एवं उनकी बोलियों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।

उत्तर-

बिहारी हिन्दी

बिहारी, बिहार प्रदेश की भाषा है। बिहार का राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक, साहित्यिक सम्बन्ध उत्तरप्रदेश के साथ रहा है और अब भी है, बल्कि उत्तरप्रदेश के लोग अब भी बिहार के अनेक जिलों में जाकर रहते हैं, परन्तु यहाँ की भाषा बंगला भाषा के अधिक निकट है। इसका आविर्भाव मागधी अपभ्रंश से हुआ है। इसकी तीन प्रमुख बोलियाँ हैं- मैथिली, मगही और भोजपुरी। डॉ. ग्रियर्सन ने पश्चिमी मागधी बोलियों का बिहारी नामकरण किया। बिहारी से डॉ. ग्रियर्सन का तात्पर्य उस एक भाषा से है जिसकी मगही, मैथिली और भोजपुरी तीन बोलियाँ हैं। बिहारी नामकरण के निम्नलिखित कारण हैं-

1. पूर्वी हिन्दी तथा बंगला के बीच में बिहारी की अपनी विशेषताएँ हैं, जो मैथिली, मागधी और भोजपुरी तीनों बोलियों में समान रूप से वर्तमान हैं।

2. भाषा के अर्थ में है।ई। प्रत्ययान्त, बिहारी नाम की गुजराती, पंजाबी, मराठी आदि की श्रेणी में आ जाता है।

3. ऐतिहासिक दृष्टि से भी यह नाम उपयुक्त है। बौद्ध-बिहारों के नाम पर ही इस प्रदेश का नाम बिहार पड़ा। प्राचीन बिहारी भाषा ही वस्तुत: बौद्धों तथा जैनों की भाषा थी।

4. बिहार में साहित्य का सर्वथा अभाव है, ऐसी बात नहीं है। उत्तरी बिहार की भाषा मैथिली में प्राचीन साहित्य उपलब्ध है। मैथिली बोली की अपनी अलग लिपि है, जो बंगला के निकट है। भोजपुरी और मागधी कैथी लिपि में लिखा जाती है। बिहारी भाषा बनारस, मिर्जापुर, गाजीपुर, बलिया, जौनपुर, गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़ तथा बस्ती जिलों की जनता द्वारा प्रयुक्त होती है।

बिहारी हिन्दी की बोलियाँ

1. भोजपुरी—शाहाबाद जिले (बिहार प्रान्त) के भोजपुर कस्बे में (प्रमुख रूप से) व्यवहृत होने के कारण इसका नाम भोजपुरी पड़ा। इस सन्दर्भ में एक ऐतिहासिक प्रमाण भी

मिलता है। कहा जाता है कि राजा भोज के वंशज मल्ल जनपद में आकर बस गये तथा उन्होंने वहाँ नया राज्य कायम किया। इस वंश की राजधानी का नाम भोजपुर था। अतः भोजपुर में बोली जाने वाली भाषा भोजपुरी कहलाई।

भोजपुरी का क्षेत्र बिहार का पश्चिमी तथा उत्तरप्रदेश का पूर्वी भाग है, यह बिहार के चम्पारन, सारन और शाहाबाद जिलों तथा उत्तरप्रदेश के गोरखपुर, बस्ती, देवरिया, आजमगढ़, जौनपुर, बलिया, गाजीपुर तथा बनारस आदि जिलों में खूब प्रचलित है।

भोजपुरी की लिपि देवनागरी है। पुराने पढ़े-लिखे जन कैथीलिपि का भी प्रयोग करते हैं। भोजपुरी में पुराना साहित्य तो कम है, किन्तु इधर दो दशक से अच्छे साहित्य का यह प्रतिमान रही है। आकाशवाणी और दूरदर्शन ने इसे अधिक प्रश्रय दिया है। लोक साहित्य की दृष्टि से भोजपुरी को निजी भाषिक शक्ति अर्जित है। पूर्वांचल के लोकगीत जैसे- कजरी, बिरहा, फगुआ, सोहर आदि इस भाषा की समृद्धि के धरोहर हैं। इस क्षेत्र की रामलीलाओं एवं नौटंकियों में भोजपुरी में अच्छे और अर्थवान शब्द प्रयोग मिलते हैं। भोजपुरी की लोकोक्तियाँ एवं कहावतें कम चटक नहीं हैं।

2. मगही—'मगही' का परिष्कृत शब्द है, मागधी। अर्थात् मगध प्रान्तीय मगही के नाम से ख्यात है। इस बोली का क्षेत्र विस्तार पटना और गया जनपदों से संबद्ध है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से भोजपुरी और मगही में कम अन्तर है। साहित्य-सृजन की दृष्टि से यह भाषा निर्धन है। इसमें लोक साहित्य के नमूने अवश्य मन जाँगे।

3. मैथिली—इसका केन्द्र दरभंगा है। बिहार प्रान्त की चम्पारन और सारन जिलों को छोड़कर अन्य जिलों में मैथिली के प्रयोग मिलती है। जैसे- विशुद्ध मैथिली का प्रचलन दरभंगा, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, उत्तरी मुंगेर तथा उत्तरी भागलपुर जिलों में है। मैथिला का एक नाम 'तिरहुतिया' भी है। मैथिली की अन्य बोलियाँ हैं- उत्तरी मैथिली, दक्षिणी मैथिली, पूर्वी मैथिली एवं छिकाछिकी आदि। मैथिली के प्रमुख कवि हैं- विद्यापति।

बिहारी तथा हिन्दी के उच्चारण में समानताएँ एवं विषमताएँ

हिन्दी तथा बिहारी की उत्पत्ति दो पृथक् प्राकृतों से हुई है। बिहार की बोलियों का वस्तुतः- बंगला से तथा हिन्दी का राजस्थानी एवं पंजाबी से अति निकट का सम्बन्ध है। व्यावहारिक दृष्टि से आज बिहार में शिक्षा का माध्यम हिन्दी है। साहित्यिक भाषा के रूप में भी बिहार भाषा-भाषी क्षेत्र में आज हिन्दी की ही प्रतिष्ठा है, तथापि बिहारी-मैथिली, मगही एवं भोजपुरी बोलने वालों की अपनी-अपनी बोलियों के प्रति अत्यधिक स्नेह है, और यह आशा करना कि आने वाले समय में बोलचाल के रूप में हिन्दी इसका स्थान ले लेगी, दुराशमात्र है। इन बोलियों के अनेक शब्द आज समर्थ बिहारी लेखकों द्वारा हिन्दी में प्रयुक्त होकर हिन्दी भाषा के शब्द भंडार को सशक्त बना रहे हैं। आज बिहारी भाषा की ये बोलियाँ वस्तुतः हिन्दी की पूरक ही हैं। बिहारी तथा हिन्दी के उच्चारण में निम्नलिखित समानताएँ तथा विषमताएँ हैं-

1. हिन्दी मूर्धन्य। ड़। तथा। ढ़। का उच्चारण बिहारी में। र। तथा। रह। हो जाता है। जैसे- पड़ता का परल तथा परव।

इसी प्रकार हिन्दी का। ल। बिहारी में। र। तथा। न्। में परिणत हो जाता है, जैसे फल का फर, गाली का गारी, लंगौट का नंगोट, लंगोटी का नंगोटी आदि।

2. हिन्दी के स्वर मध्यम 'ह' का लोप हो जाता है, किन्तु बिहारी, भोजपुरी में यह सन्ध्यक्षर के रूप में मौजूद है, जैसे- दिया का दिहलग्।

3. बिहारी तथा बंगला में विस्मयादि बोधक को छोड़कर शब्द के आदि में 'य' तथा व नहीं आते, किन्तु पश्चिमी हिन्दी की ब्रजभाषा में 'य' तथा व आते हैं। खड़ी बोली में तो 'इ' तथा 'उ' में परिणत हो जाते हैं। जैसे- बिहारी भोजपुरी में यमे, ओमे का ब्रजभाषा में यामे, वामे तथा हिन्दी इसमें, उसमें आदि।

4. बिहारी तथा बंगाल में ह्रस्व एँ, ऐं, ओं तथा ऑ का प्रयोग होता है, किन्तु हिन्दी में इनका अभाव है। जैसे बिहारी में बेंटिया, बोलावत् का हिन्दी में बिटिया, बुलाना आदि।

5. बिहारी में दो स्वर।अइ। तथा।अ उ। एक साथ आते हैं, किन्तु हिन्दी में ये। ते ।ऐ।औ। में परिणत हो जाते हैं, जैसे- बिहारी बइसे तथा अउर का हिन्दी में।बैठे। तथा और होगा।

शब्द रूप-

1. बिहारी के आकारान्त।घोड़ा। भला। बड़ा आदि शब्द हिन्दी से ही लिए गए हैं। हिन्दी भाषा में भी ये शब्द पंजाबी से आए हैं। बिहारी के वास्तविक शब्द हैं- घोड़ भल आदि। ब्रज भाषा में इनके ओकारान्त तथा औकारान्त रूप हो जाते हैं, जैसे-

।घोड़ो। घोड़ो। भलो। भलौ। आदि।

2. हिन्दी के 'जो' सर्वनाम का रूप ब्रजभाषा में 'जो' और बिहारी में 'जे' हो जाता है।

3. बिहारी में व्यक्तिवाचक सर्वनाम के सम्बन्ध कारक के एक वचन के रूप के मध्य में 'ओ' आता है, किन्तु खड़ी बोली ब्रजभाषा में यह 'ए' परिणत हो जाता है। जैसे- बिहारी में ।मोर।, हिन्दी में ।मेरा, ब्रजभाषा में ।मेरी।

4. हिन्दी में केवल कर्ता तथा तिर्यक के रूप ही मिलते हैं, किन्तु बिहारी में करण तथा अधिकरण के रूप भी मिलते हैं।

5. बिहारी में कर्ता कारक के संज्ञापदों के साथ 'ने' प्रयुक्त नहीं होता। पूर्वी हिन्दी में भी इस अनुसर्ग का अभाव है, किन्तु हिन्दी की सभी बोलियों में यह वर्तमान है, जैसे- बिहारी में ।कइलसि ।ब्रजभाषा में। वाते कियौ। हिन्दी में। उसने किया आदि।

6. बिहारी में आकारान्त तिर्यक एकवचन का रूप आकारान्त ही रहता है, किन्तु हिन्दी में यह एकारान्त हो जाता है, जैसे- बिहारी- कर्त्ता, घोड़ा, तिर्यक- घोड़ा, हिन्दी, तिर्यक घोड़े।

7. बिहारी तथा हिन्दी अनुसर्गों में पर्याप्त अन्तर है।

8. बिहारी और हिन्दी के क्रिया रूपों में भी पर्याप्त अन्तर है।

क्रिया रूप-

1. बिहारी की कतिपय बोलियों में वर्तमान के रूप, प्राचीन संस्कृत के वर्तमान रूप में नहीं होता।

2. हिन्दी में वर्तमान कृदन्तीय के रूपों में ही सहायक क्रिया संयुक्त करके मिश्र अथवा यौगिक वर्तमान की रचना होती है, किन्तु बिहारी की कुछ बोलियों में क्रिया पदों में सहायक क्रिया जोड़कर यह काल सम्पन्न होता है, जैसे- मगही बोली में- हम देखिहि। हिन्दी में। मैं देखता हूँ।

3. क्रिया रूपों के सम्बन्ध में केवल सम्भाव्य वर्तमान में एक-दो रूपों को छोड़कर बिहारी तथा हिन्दी के क्रिया पदों में किसी प्रकार की समानता नहीं है।

4. बिहारी में वर्तमान कृदन्तीय के रूप। एत्। तथा। अत्। से सम्पन्न होते हैं, किन्तु खड़ी बोली में ये। ता। प्रत्यय जोड़कर बनाए जाते हैं, जैसे- मैथिली में- देखैत, भोजपुरी में- देखत, खड़ी बोली में- देखता।

5. बिहारी तथा हिन्दी में एक तात्विक अन्तर यह भी है कि हिन्दी की सकर्मक क्रियाओं में जहाँ कर्मणि प्रयोग चलता है वहीं बिहारी-मैथिली, मगही तथा भोजपुरी कर्ता में कर्तरि प्रयोग प्रचलित है। मागधी प्रसूत बंगला औड़िआ आदि भाषाओं में भी कर्तरि प्रयोग प्रचलित है, जैसे- हिन्दी में- मैंने घोड़ा देखा, भोजपुरी में हम घोड़ा देखाली, आदि।

6. बिहारी तथा हिन्दी के कतिपय साधारण शब्द एवं प्रयोग भी एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं। उदाहरण स्वरूप भोजपुरी में अन्य पुरुष, एकवचन वर्तमान की सहायक क्रिया। बाटे।। भोजपुरी में। उ बाटे। तथा हिन्दी में। वह है। तथा भूतकाल की क्रिया। रहल। भोजपुरी में। उ रहल। तथा हिन्दी में। वह था। है। किन्तु हिन्दी में यह। है। तथा। था। हैं। भोजपुरी की भाँति बंगला में भी 'बोटे' (वह है) का प्रयोग होता है।

7. नकारात्मक रूप में बिहारी में। जिन। जनि। मति। शब्द व्यवहार में लाए जाते हैं, किन्तु हिन्दी में केवल। मत। का प्रयोग होता है।

इसी प्रकार बिहारी में सम्प्रदान के अनुसर्ग रूप में। बदे खातिर। लागि। लेल। एवं। ले। का व्यवहार होता है, किन्तु हिन्दी में इनके स्थान पर केवल। लिए। प्रयुक्त होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि बिहारी एवं पश्चिमी हिन्दी में तात्विक अन्तर है। इन दोनों की उत्पत्ति विभिन्न प्राकृतों से हुई है, तथा उच्चारण, व्याकरण, वाक्य गठन एवं शब्दों के प्रयोग में इनमें पर्याप्त अन्तर है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बिहारी-मैथिली-मगही एवं भोजपुरी का- जिन बातों से पश्चिमी हिन्दी से पार्थक्य है उन्हीं बातों से इसका बंगला से साम्य है। बिहारी बोलियों की पारस्परिक एकता इस बात को स्पष्ट रूप से प्रमाणित करती है कि इनकी उत्पत्ति मागधी अपभ्रंश से हुई है।

प्रश्न 7. (अ) पहाड़ी हिन्दी और उनकी बोलियों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

पहाड़ी हिन्दी और उनकी बोलियाँ

नेपाल से शिमला तक के प्रदेश में पहाड़ी भाषाओं का प्रचलन है। यह क्षेत्र हिमालय के दक्षिणवर्ती है। इस उपवर्ग की बोलियों को डॉ. ग्रियर्सन ने मध्य पहाड़ी कहा और जिसके अन्तर्गत गढ़वाली और कुमाऊनी बोलियाँ आती हैं। पहाड़ी भाषाओं की भाषागत विशेषता के कारण इन्हें तीन भागों में विभाजित किया गया है-

1. पश्चिमी पहाड़ी, 2. मध्य पहाड़ी, 3. पूर्वी पहाड़ी।

इन पर राजस्थानी भाषा का अच्छा प्रभाव था। मध्य पहाड़ी भाषा जयपुरी बोली से तथा पश्चिमी पहाड़ी मारवाड़ी बोली से अधिक प्रभावित है। इसका मुख्य कारण गूजर जाति एवं राजपूतों का इस प्रदेश में अपना प्रभुत्व स्थापित करना था। मध्य पहाड़ी कुमायूँनी और गढ़वाली इन दो शाखाओं में विभक्त है। पश्चिमी पहाड़ी बोलियाँ शिमला के निकटवर्ती प्रदेश में बोली जाती है। इनमें। चंवाली। जौनसारी। सिरमैरी। बोलियाँ प्रमुख हैं। गढ़वाल और कुमाऊँनी में मूल रूप से अनार्य जातियाँ बसी थीं। बाद में इन पर तिब्बत-चीनी परिवार की भाषाओं का प्रभाव पड़ा। धीरे-धीरे इन भाषाओं पर भारतीय आर्य भाषाओं का प्रभाव बढ़ता रहा। अत्यन्त प्राचीन काल से ही इस भू-भाग में वैदिक संस्कृति के केन्द्र स्थापित होने लगे।

यह स्थान एक तपोभूमि के रूप में परिवर्तित होने लगा। बाद में खस जातियों का आधिपत्य स्थापित हुआ। वर्तमान में भी खसिया लोग अधिक संख्या में हैं और कुमाऊँनी की मुख्य उपबोली खसपराजिया कहलाती है। तीर्थ देश होने के कारण यहाँ अखिल भारतीय भाषाओं का समागम भी बढ़ता गया।

मध्यकाल में राजपूत ठाकुरों के व्यापक प्रभाव के फलस्वरूप अनार्य तत्व क्षीण होने लगे, और अब इस वर्ग की उपभाषाएँ हिन्दी में ढल गई हैं। उत्तरप्रदेश के अन्तर्गत होने के कारण इन पर हिन्दी का प्रभाव निरन्तर पड़ता रहा है।

पहाड़ी हिन्दी की कोई साहित्यिक परम्परा नहीं है, किन्तु वर्तमान में पहाड़ी भाषाओं में आधुनिक साहित्य मिलने लगे हैं, टर्नर की 'नेपाली डिक्सनरी' भाषा विज्ञान की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। इनमें भाषाओं के बोलने वाले लगभग 28 लाख हैं। इनका अपना लोक साहित्य भी है। भाषा वैज्ञानिकों ने इसी पीली को गुजराती की ही एक शाखा बताया है, जो निकटवर्ती जंगलों में बोली जाती है।

इस उपवर्ग की हिन्दी में सानुनासिक स्वरों की अधिकता है। ग्रामीण बोलियों में।य ।व। श्रुति सुनाई देती है। शेष ध्वनियाँ राजस्थानी से मिलती-जुलती हैं।

पुल्लिग संज्ञाएँ प्राय: ओकारान्त होती हैं। पुल्लिग एकवचन में तिर्यक, आकारान्त और बहुवचन में कुमाऊनी में।न। गढ़वाली में। ऊँ। होता है। स्त्रीलिंग का तिर्यक रूप प्राय: नहीं बदलता। परसर्ग दोनों बोलियों में भिन्न है। क्रिया रूपों में साम्य अधिक है। भूतकालिक रूप ब्रजभाषा की तरह चल्यो, छियो (था) और भविष्यत् काल में।ल। रूप (चलला, हिटला) सामान्य है। वर्तमान काल में भिन्नता है। ■

प्रश्न 8. खड़ी बोली के उद्भव एवं विकास का वर्णन कीजिए। अथवा
खड़ी बोली एवं उसके प्रयोग क्षेत्र पर प्रकाश डालिए। अथवा
खड़ी बोली की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

उत्तर-

खड़ी बोली- नामकरण, उद्भव एवं विकास

खड़ी बोली के अन्य नाम है- हिन्दुस्तानी, नागरी हिन्दी, सर हिन्दी और कौरवी किन्तु वर्मतान इसका खड़ी बोली नाम ही अधिक प्रचलित है। खड़ी का अर्थ है स्टैंडर्ड जैसे- जयपुर की खड़ी बोली राजस्थानी, पूना की खड़ी बोली मराठी। आधुनिक काल में साहित्य, शासन तथा शिक्षा आदि के क्षेत्र में अभिव्यक्ति का माध्यम खड़ी बोली वन गई है। खड़ी बोली शब्द का प्रयोग सामान्यत: दो अर्थों में मिलता है- (1) मेरठ के आसपास बोली जाने वाली ब्रजभाषा, (2) हिन्दू उर्दू के शब्दों से युक्त होने पर हिन्दुस्तानी, संस्कृत के शब्दों से युक्त होने पर हिन्दी एवं अरबी-फारसी के शब्दों से युक्त होने पर उर्दू कहलाने वाली भाषा। साहित्य में प्राय: दूसरा अर्थ ही प्रयुक्त होता है। हिन्दी का खड़ी बोली नाम वहुत पुरानी नहीं है। इस नाम का सवसे पहले स्वीकार करने वालों में लल्लूलाल, गिलक्रिस्ट तथा सदल मिश्र के नाम प्रमुख हैं। इसके नामकरण के सम्वन्ध में विभिन्न आचार्यों ने अपने अलग-अलग मत प्रस्तुत किए हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. **लल्लूलाल-सदल मिश्र** के शब्दों में, "खड़ी वोली का अर्थ खरी अथवा विशुद्ध अर्थात् अरवी-फारसी शब्दों से सर्वथा रहित भाषा है।"

2. **चन्द्रधर शर्मा गुलेरी** के अनुसार, "पुरानी कविता जो मिलती है वह व्रज भाषा

या पूर्वी बैसवाड़ी, अवधी, राजस्थानी और गुजराती में मिलती है अर्थात् पड़ी बोली में पायी जाती है। मेरठ ने पड़ी बोली को खड़ी बोली बनाकर लश्कर (सना) और समाज के लिए उपयोगी बनाया।' डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी भी इस मत के समर्थक हैं। वे ब्रज और अवधि को पड़ी बोली मानते हैं।

3. किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार, "इस खड़ी पाई (।) के कारण इसका नाम खड़ी बोली बहुत ही सार्थक है।"

4. अब्दुल हक के अनुसार, "खड़ी बोली के माने हिन्दुस्तान में आमतौर पर गँवारू बोली के है, जिसे हिन्दुस्तान का बच्चा-बच्चा जानता है।"

5. टी. ग्राहम बेल ने इस मत का विरोध करते हुए कहा है, "खड़ी बोली व्यवस्थित एवं प्रचलित भाषा है।"

6. डॉ. विश्वनाथ प्रसाद के अनुसार, "खड़ी बोली का अर्थ टकसाली की अर्थात् स्टेंडर्ड भाषा है।

खड़ी बोली के नामकरण के समान ही इसके आधार के सम्बन्ध में भी विभिन्न मत हैं। डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. चटर्जी, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ. श्यामसुन्दर दास आदि इसे कौरवों पर आधारित मानते हैं। इस्टविक इसे ब्रज पर आधारित मानते हैं। एच.टी. कोलबुक इसे कन्नौजी पर आधारित मानते हैं। डॉ. हसन खाँ इसे बाँगरू पर आधारित मानते हैं।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, वस्तुत: खड़ी बोली पूर्वी, पंजाबी, दिल्ली और पश्चिमी उत्तरप्रदेश की बोलियों के मिश्रण का एक परिनिष्ठित रूप है। दूसरे कुछ विद्वान इसे पंजाबी पर आधारित मानते हैं। वस्तुत: खड़ी बोली नाम अवश्य नया है, किन्तु भाषा नयी नहीं है। साहित्यिक दृष्टि से खड़ी बोली के पाँच विभिन्न रूप है- हिन्दी, उर्दू, रेखना, अथवा रेख्ती, हिन्दुस्तानी तथा दक्खिनी।

खड़ी बोली : क्षेत्र

खड़ी बोली का क्षेत्र मुजफ्फर नगर और दिल्ली के आसपास माना गया है। सर्वेक्षण के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि खड़ी बोली के रूप में प्रयुक्त हिन्दी भाषा का रूप उक्त क्षेत्र के किसी भी गाँव में प्रयुक्त नहीं होता। गंभीर चिंतन करने से यह तथ्य सामने आता है कि हिन्दी भाषा के विस्तृत क्षेत्र और उसकी विविधता देखकर जो एकरूपता देने का प्रयास किया गया, उसमें इस क्षेत्र की बोली को आधार बनाया गया है। खड़ी बोली का उक्त क्षेत्र वास्तव में पश्चिमी हिन्दी की कौरवी बोली का क्षेत्र है। इस प्रकार खड़ी बोली के विषय में कहा जा सकता है- "कौरवी बोली के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों के लोगों की बोधगम्यता के लिए जो संकल्पनात्मक रूप विकसित हुआ, उसे खड़ी बोली नाम दिया गया है।

खड़ी बोली का प्रभाव धीरे-धीरे विस्तृत होता जा रहा है। वर्तमान में मेरठ, मुजफ्फर नगर, बिजनौर, सहारनपुर, हरिद्वार, गाजियाबाद, मुरादाबाद और दिल्ली तक देख सकते हैं। हरियाणा के करनाल, यमुना नगर, पानीपत, सोनीपत के कुछ भागों में खड़ी बोली का स्पष्ट प्रभाव मिलता है।

खड़ी बोली : उद्भव

हिन्दी में गद्य-रचना के विकास-काल से खड़ी बोली का प्रभावी रूप में विकास हुआ है। आदि काल में डिंगल-पिंगल में रचना होती थी, तो मध्यकाल में अवधी और ब्रजभाषा काव्य-रचना की आधार भाषा थी। आधुनिक युग में हिन्दी का यही रूप साहित्य-सृजन का

आधार बना है। हिन्दी भाषा में एकरूपता और बोधगम्यता बढ़ाने का प्रयास एक लम्बे समय से चल रहा था। जैन, सिद्ध और नाथ साहित्य में खड़ी बोली का प्रारम्भिक रूप देख सकते हैं। संत कवियों की भाषा में खड़ी बोली का प्रभाव सामने आता है।

"पीछे लागा जाइ था,लोक वेद के साथ।
आगे ते सतगुरू मिला, दीपक दीया हाथ।"

इस दोहे में शब्दों का तद्भव रूप और कारक-चिन्हों का प्रयोग खड़ी बोली के प्रभाव को प्रदर्शित करता है। अमीर खुसरो के काव्य में खड़ी बोली का प्रभावी रूप सामने आते है। डॉ. भोलानाथ तिवारी, अमीर खुसरो को खड़ी बोली का प्रारम्भिक और श्रेष्ठ कवि मानते हैं। आचार्य रामचनन्द्र शुक्ल ने अमीर खुसरो को खड़ी बोली में रचना करने वाले सहृद शुरुआती साहित्यकार की मान्यता दी है।

अकबर के दरबार के दरबारी कवियों में भी खड़ी बोली की झलक रूप में दिखाई देती है। इन कवियों में 'रहीम' का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

"एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाय।
रहिम सींचहि मूलहिं, फूलहिं फलहिं अधाय।।"

सत्रहवीं शताब्दी में रचित जटमल कृत गोरा-बादल की कथा खड़ी बोली की पहली रचना मानी गई है। भक्तिकाल के गद्य में ब्रज, अवधी और राज़स्थानी का प्रभाव दिखाई देता है। रीतिकाल के गद्य पर ब्रज और फारसी का प्रभाव अवश्यमेव पड़ा है।

राम प्रसाद निंरजनी कृत अट्ठारहवीं शताब्दी की भाषायोग वशिष्ट खड़ी बोली की प्रथम प्रमाणिक रचना मानी गई है। आचार्य शुक्ल ने रामप्रसाद निरंजनी को खड़ी बोली का प्रौढ़ रचनाकार घोषित किया है। इनकी भाषा योग व शिष्य का एक गद्यांश अवलोकनीय है-

"जो पुरुष अभिमानी नहीं है, वह शरीर के इष्ट-अनिष्ठ में राग-द्वेष नहीं करता, क्योंकि इसकी शुद्ध वासना है।" इसी समय से खड़ी बोली के प्रयोग की एक परम्परा बनी और साहित्य-सृजन की आधार बनी।

खड़ी बोली : विकास

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही खड़ी बोली का प्रभाव रूप विकसित हुआ। मुंशी सदासुखलाल और इंशा अल्लाह खाँ ने खड़ी बोली को साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की अनुप्रेरक भूमिका निभाई।

सदासुखलाल की हिन्दी सरल तथा वाक्य-रचना छोटी-छोटी होने को कारंण विशेष लोकप्रिय हुई। इनकी भाषा में सुन्दर संप्रेषणीयता है।

इंशा अल्लाह खाँ की रानी केतकी की कहानी ने अपनी लोकप्रियता के आधार पर खड़ी बोली के स्वरूप को जनसमान्य तक पहुँचाया। ये अपनी भाषा को सरल तथा शुद्ध रूप देना चाहते थे, किन्तु उनका चमत्कारिक और सौन्दर्य प्रिय मन ऐसा न कर सका। इनकी भाषा में यत्र-तत्र मुहावरों के साथ हास्य-व्यंग्य के पुट मिल जाते हैं।

सन् 1803 में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना कोलकाता में हुई। इस कॉलेज में जीन गिलक्रीस्ट हिन्दी और ऊर्दू पढ़ाने के लिए नियुक्त किए गए। इस कॉलेज में अंग्रेजी के साथ भारतीय भाषाओं के अध्यापन की भी व्यवस्था की गई। लल्लूलाल ने जान गिलक्रीस्ट की प्रेरणा से वर्षों तक इस कॉलेज से जुड़कर शकुंतला, प्रेमसागर, बैताल-पचीसी और सिंहासन बत्तीसी आदि कृतियों की रचना की है। इनकी रचनाएँ शुद्ध खड़ी बोली में न होकर ब्रज अथवा ऊर्दू

प्रभावित हैं। इनकी भाषा में संस्कृत के साथ अरबी, फारसी, ब्रज का प्रभाव है। इनके गद्य में काव्यात्मकता भी दिखाई देती है। लोकोक्ति और मुहावरों का यत्र-तत्र प्रयोग है। हिन्दी के लगभग सभी कारक-चिन्हों- ने, से, को, का, के, की, में और पर आदि के प्रयोग मिलते हैं।

हिन्दी गद्य के विकास-आधार पर खड़ी बोली को दिशा देने में 19वीं शताब्दी के इन लेखकों की महत्वपूर्ण भूमिका के विषय में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

"गद्य की एक साथ परम्परा चलाने वाले उपयुक्त, चार लेखकों में से आधुनिक हिन्दी का पूरा-पूरा आभास मुंशी सदासुख लाल और सदल मिश्र की ही भाषा में मिलते हैं। व्यवहारोपयोगी इन्हीं की भाषा ठहरती है। इन दो में भी मुंशी सदासुखलाल की साधु भाषा अधिक महत्व की है। मुंशी सदासुख लाल ने लेखनी भी चारों से पहले उठाई। अतः गद्य का प्रवर्तन करने वालों में उनका विशेष स्थान समझना चाहिए।"

ईसाईयों का खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार में विशेष योगदान रहा है। अंग्रेजी शासन में ईसाई धर्म-प्रसार जोरों पर था। उनके द्वारा जन-जन तक ईसाई धर्म-साहित्य को पहुँचाने के लिए उसे खड़ी बोली में अनुवाद किया गया। राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना क वेदांत-सूत्रों का खड़ी बोली में हिन्दी भाष्य प्रस्तुत किया। ये राष्ट्रीय आन्दोलन और हिन्दी के प्रबल प्रेमी थे। इन्हों सन् 1829 में 'बंगदूत' समाचार-पत्र का प्रकाशन कर हिन्दी प्रचार-प्रसार की दिशा प्रदान की है।

सामाजिक और राष्ट्रीय आन्दोलनों से जुड़े सितारे हिन्द राजा शिव प्रसाद और राजा लक्ष्मण सिंह का नाम खड़ी बोली प्रयोग-संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

महर्षि दयानन्द ने अपना व्याख्यान हिन्दी में देकर खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार को बल दिया है। उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश की रचना हिन्दी में करके एक ओर समाज-सुधार आन्दोलन को जनसामान्य से जोड़ा है, तो दूसरी ओर खड़ी बोली के प्रयोग के सुदृढ़ आधार प्रदान किया है। सन् 1875 में, मुम्बई में आर्य समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द के द्वारा हुई। आर्य समाज से खड़ी बोली प्रयोग को उत्तम आधारभूमि मिली है।

आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु हरिशचन्द्र हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने मुक्त कंठ से कहा है-

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूला
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिअे न हिय को सूल।।"

इनकी कविता में जनभाषा का स्वरूप अवश्य दिखाई देता है, किन्तु उनके द्वारा रचित गद्य खड़ी बोली के आधार पर सामने आता है। उनके समकालीन साहित्यकारों ने खड़ी बोली को गंभीरता से अपनाया है। भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने हिन्दी प्रयोग में गति लाते हुए हिन्दी को दिशा प्रदान की है। उन्होंने 1868 में 'कविवचन सुधा' नामक पत्रिका, 1873 में हरिशचन्द्र मैगजीन नामक मासिक पत्रिका निकाली। उसका नाम बाद में हरिशचन्द्र चन्द्रिका हो गया। इसके बाद भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने खड़ी बोली में अनेक नाटकों की रचना की ओर निबन्ध लिखे।

खड़ी बोली में अनेक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होनी शुरु हुई। पं. प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, पं. राधाकृष्ण गोस्वामी आदि ने साहित्य और पत्रकारिता में खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया।

सन् 1893 में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की स्थापना से खड़ी बोली के प्रचारार्थ

इसे सुदृढ़ आधार मिला। बाबू श्याम सुन्दर दास और मदन मोहन मालवीय आदि हिन्दी प्रेमियों से इस संस्था की भूमिका विशेष उल्लेखनीय रही है। इसके पश्चात् खड़ी बोली प्रयोग में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद, प्रार्थना सभा, मुम्बई आदि साहित्यिक संस्थाओं के साथ ब्रह्म समाज, आर्य समाज, सनातन धर्म सभा आदि सामाजिक संस्थाओं का हिन्दी-प्रेम विशेष महत्वपूर्ण रहा है।

हिन्दी प्रचार-प्रसार में समय-समय पर प्रकाशित होने वाले पत्र और पत्रिकाओं की विशेष भूमिका रही है। इनमें कुछ प्रमुख हैं- 'उदन्त मार्तण्ड, बंगदूत, बनारस अखबार', 'प्रजा-हितैषी', 'कविवचन सुधा', प्रदीप सुधाकर आदि।

खड़ी बोली के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान मुद्रण-व्यवस्था का रहा है। जैसे-जैसे हिन्दी-प्रेम बढ़ा, मुद्रण का आधार मिला, वैसे-वैसे हिन्दी प्रसार को गति मिलती गई है। खड़ी बोली के माध्यम से सम्प्रेषणीयता का विकसित रूप सामने आया है। द्विवेदी युग से हिन्दी साहित्य सृजन मुख्यत: खड़ी बोली में होने लगा।

"मानस भवन में आर्य जन जिसकी उतारें आरती।।
भगवान भारत वर्ष में गूंजे हमारी भारती।।" -गुप्त

छायावाद में प्रवेश कर खड़ी बोली को आकर्षक रूप मिला।

"ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है,
इच्छा क्यों पूरी हो मन की।
एक-दूसरे से न मिल सकें,
यह विडम्बना है जीवन की।।" -प्रसाद

इसके पश्चात् खड़ी बोली हिन्दी साहित्य-सृजन का आधार बन गई। वर्तमान समय में खड़ी बोली को हिन्दी के पर्याय रूप में ग्रहण किया जाने लगा है। संविधान में हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार करने हेतु हिन्दुस्तानी (उर्दू मिश्रित हिन्दी) और हिन्दी (संस्कृत विकसित-परिनिष्ठित हिन्दी) का विवाद चलता रहा है, किन्तु इसका भी निश्चय अन्त में- संविधान में हिन्दी राजभाषा और देवनागरी उसकी लिपि बनी।"

वर्तमान समय में खड़ी बोली की पर्याय बनी हिन्दी (मानक हिन्दी) न केवल भारत में प्रयुक्त हो रही है, वरन् गयाना, सूरीनाम, मॉरीशस, टिनीडाड, टुबैगो, फिजी, कनाडा और अमेरिका आदि देशों में प्रयुक्त हो रही है।

खड़ी बोली की ध्वन्यात्मक विशेषताएँ-

1. विशिष्टता या पहचान की दृष्टि से अवधी अकारान्त या व्यंजनान्त है, जैसे- करन, होत, होव, घोर या घोड़, नीक, बड़, खाटे, ब्रजभाषा ओकारान्त प्रधान है, जैसे- नीको, बड़ो, खोटो, छोरो, आयो, लिनो, होवो, करेगा, करनो, करिवो, घोरो। और खड़ी बोली आकारान्त प्रधान है, जैसे- करता, किया, करना, करेगा, बड़ा, छोटा, खोटा, घोड़ा आदि।

2.। ए। औ। का उच्चारण इतना संवृत होता है कि क्रमश:। ए। ओ। सुनाई देते हैं। जैसे- बेठ, पेर, ओर, होर, दोरा (बैठ, पैर, और, दौरा)।

3.। ह। के पहले। अ। का उच्चारण। ए। की तरह सुनाई पड़ता है, जैसे- केह्या (कह्या), रेह (रह) आदि।

4. ठेठ बोली में।ड़। के स्थान पर।ड। जैसे- गाडी (गाड़ी), बडा (बड़ा)। स्वर मध्यम।ल। के स्थान पर।ळ। जैसे- माल, नीला, (नीळा, माळ और स्वर ळ = ल

(उच्चारण) मध्यम।न। के स्थान पर।ण। जैसे- जाणा (जाना), जाण्या (जाना-समझा) लेण - देण (लेन-देन) आदि।

5. खड़ी बोली की एक बड़ी विशेषता है स्वर मध्यम द्वित्वव्यंजन जो दीर्घ स्वर के बाद भी उच्चारित होता है, किन्तु उस स्वर की दीर्घता कुछ कम हो जाती है, जैसे- बाप्पू, बेट्टा, रान्नी, या राण्णी, लोट्टा, पूच्छा, पुच्छा। बाँगड़ और खड़ी बोली में अन्य हिन्दी बोलियों की अपेक्षा बलाघात कुछ जोर से पड़ता है। जिसके कारण पूर्ववर्ती दीर्घ अक्षर तो ह्रस्व हो ही जाती है, कभी-कभी ह्रस्व स्वर का लोप भी हो जाता है। जैसे- मठाई (मिठाई), कट्ठा (इकट्ठा) आदि।

व्याकरण सम्बन्धी विशेषताएँ-

1. संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण कृदन्त आदि रूपों में शब्दांत में।आ। ध्वनि का प्रयोग होता है, जैसे- भला, मेरा, गया आदि।

2. संज्ञा शब्दों के रूप प्राय: वही है, जो साहित्यिक हिन्दी में है, किन्तु बहुवचन तिर्यक रूप।ऊँ। जैसे- मरदूँ, मरदूँ का, बेट्यूँ को, एवं वैकल्पिक स्त्रीलिंग बहुवचन लड़कियाँ, लड़की, लड़कियों उल्लेखनीय है। कारकों के अर्थ में निम्नलिखित परसर्ग प्रयुक्त होते हैं।

कर्ता- ने, नें

कर्म तथा सम्प्रदान- को, कूँ, नूँ, ने, के।

करण तथा अपादान- लें, सेती, सों।

सम्बन्ध- का, के, की।

अधिकरण- में, पे, प।

3. सर्वनाम और उनके विशिष्ट रूप निम्नलिखित हैं-

में, मुझ, मेरा, हम, हमें, हमारा या म्हारा; तू, तिर्यक-ते, तुझ, तेरा, तम, तमें, तुम्हारा या थारा; यू, यो (स्त्रीलिंग या) तिर्यक इस; आ, वोह (स्त्रीलिंग वा:) जो। जोण; के।कोण; के (क्या) आप, अपणा; को (कोई)।

4. कुछ क्रिया विशेषण हैं- कै (कितने), असे (ऐसे), जसे (जैसे), इस (अब), इमी (अभी), जिव-लिव (जब-तब), हाँ (वहाँ, जाँ (जहाँ), कीकर (कैसे) क्यूँ (क्यों), नूँ (यों), जूँ (ज्यों)।

5. खड़ी बोली के क्रियात्मक रूप साहित्यिक हिन्दी के समान हैं, किन्तु।है। का उच्चारण।हे। और विकल्प से।है। के स्थान पर।सै। का प्रयोग भी होता है, जैसे- लाया करे सै (लावा करता है)।

दूसरी विशेषता यह है कि वर्तमान कृदन्त का जो रूप साहित्यिक अथवा सामान्य हिन्दी में काल और अर्थ बनाने में प्रयुक्त होता है, उसकी जगह खड़ी बोली में क्रिया रूप के विकसित अकृदन्तीय प्रयोग चलते हैं।

6. भूत अपूर्ण निश्चयार्थ के।मारुँ था। मारे था। आदि रूप भी इसी से बने हैं। भविष्यत् काल के रूप इनमें।ग। गे।गी। जोड़कर सामान्य हिन्दी की तरह होते हैं। इनका उच्चारण भी ही मारूँगा।जाएँगे। करके होता है। पश्चिमी में पंजाबी प्रभाव के कारण खाँगा।जाँगे। आदि रूप भी पाए जाते हैं।

7. भूतकालिक कृदन्तीय रूप एकवचन में (रिह्या। उठ्या। आदि और बहुवचन में सामान्य हिन्दी के समान।रहे। उठे। बनते हैं, यद्यपि उच्चारण में।ह। की अल्पप्राणता और

व्यंजन के द्वित्व के कारण अन्तर अवश्य पाया जाता है। करणा से कर्‌या, जाणा से जिआ बनता है।

8. आज्ञार्थ में सुन, सुनो, सुनिए, सुनियो साधारणत: सम्पन्न होते हैं। पूर्वकालिक क्रिया में।कर। की अपेक्षा।के। का प्रयोग अधिक व्यापक है। जैसे- सुन के, उठ के। ■

प्रश्न 8. (अ) ब्रजभाषा के विकास, क्षेत्र एवं बोलियों का वर्णन कीजिए। ब्रजभाषा की विशेषताएँ बताइए।

उत्तर- ब्रजभाषा का उद्‌भव एवं विकास व क्षेत्र

ब्रजभाषा का उद्‌भव सन् 1000 ई. के आसपास माना जाता है। इस भाषा के प्रमुख केन्द्र में मथुरा, आगरा, अलीगढ़, धौलपुर, एटा, बदायूँ, बरेली आदि के आसपास के क्षेत्र आते हैं। इसके अतिरिक्त हरियाणा का पलवल के आसपास का क्षेत्र, राजस्थान के भरतपुर, धौलपुर आदि जिलों का कुछ भाग तथा मध्यप्रदेश के ग्वालियर जिले का पश्चिमी भाग भी ब्रजभाषा के क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। वस्तुत: ब्रज शब्द का प्रयोग वेदों में पशुओं या गौओं का समूह, चरागाह, या बाड़े के रूप में हुआ है। इस क्षेत्र में पशुपालन के व्यवसाय का प्राधान्य होने के कारण ही यह प्रदेश ब्रज कहलाया और यहाँ की भाषा ब्रजभाषा कहलायी। यद्यपि डॉ. ग्रियर्सन ने अपनी पुस्तक लिंग्विस्टिक सर्वे में इसे 'अन्तर्वेदी भाषा' का भी नाम दिया है, जो कि गंगा व यमुना के बीच के क्षेत्र की भाषा की द्योतक है।

जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है कि ब्रजभाषा का उद्‌भव सन् 1000 ई. के आसपास माना जाता है। इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके विकास को मुख्यत: भागों में बाँटा जा सकता है- आरम्भिक काल (सन् 1000 से सन् 1500 ई. तक), मध्य काल (सन् 1500 ई. से सन् 1800 ई. तक) तथा आधुनिक काल (सन् 1800 से आज तक)। आरम्भिक काल की ब्रजभाषा में हेमचन्द्र ने अपना व्याकरण शब्दानुशासन की रचना की है। मध्यकाल की ब्रजभाषा में सूरदास, नन्ददास, केशव, बिहारी, भूषण, घनानन्द आदि कवियों ने अपनी काव्य-रचना की है। लल्लुलालजी, भारतेन्दु, रत्नाकर आदि कवियों की कृतियों में आधुनिक काल की ब्रजभाषा का प्रयोग हुआ है।

ब्रजभाषा की बोलियाँ

ब्रजभाषा की पाँच प्रमुख उपबोलियाँ हैं-

- **अन्तर्वेदी**—यह एटा, बदायूँ, मैनपुरी के क्षेत्र में बोली जाती हैं।
- **भुक्ता**—यह नैनीताल के आसपास बोली जाती है।
- **डांगी**—यह धौलपुर, भरतपुर व जयपुर जिले के पूर्वी भाग में बोली जाती है।
- **मिश्रित**—यह पलवल व भरतपुर के बीच के मध्य क्षेत्र में बोली जाती है।
- **जादोवाटी**—यह राजस्थान के करौली क्षेत्र के आसपास बोली जाती है।

आगरा, मथुरा व अलीगढ़ क्षेत्रों में बोली जाने वाली ब्रजभाषा को परिनिष्ठित ब्रजभाषा कहा जाता है। ब्रजभाषा का साहित्य हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। बल्लभ सम्प्रदाय के अष्टछाप कवियों सूरदास, नन्ददास, नरोत्तमदास आदि से लेकर रीतिकाल के कवियों जैसे- बिहारी, घनानंद, देव, भूषण, मतिराम आदि सभी कवियों ने अपनी प्रमुख काव्य-रचना में इसी भाषा का प्रयोग किया है। यही नहीं, अवधी भाषा के महाकवि तुलसीदास ने भी अनेक ग्रंथों गीतावली, कवितावली, विनय-पत्रिका आदि की भी इसी भाषा में रचना

की है। यदि हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल के कृष्णकाव्य और सम्पूर्ण रीतिकाल की भाषा की दृष्टि से यदि ब्रजभाषा काल है।

ब्रजभाषा की ध्वन्यात्मक विशेषता-

- ब्रजभाषा में ड, ड़ और ल ध्वनियों के स्थान पर 'र' ध्वनि का उच्चारण किया जाता है। जैसे- घरी (घड़ी), उरझत (उलछन), भोरी (भोली) आदि।
- ब्रजभाषा में अन्य स्वर ध्वनियों के साथ-साथ ऐ और औ की भी ध्वनियाँ भी मिलती हैं। अर्थात् इसमें कुल बारह स्वर-ध्वनियों का प्रयोग होता है- अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, एँ, ए, आँ, ओ, ऐ, औ।
- इसके सैंतीस व्यंजनों में 'न्ह', 'म्ह' 'रूह' व 'ल्ह' ध्वनियाँ भी मिलती हैं। इसके अतिरिक्त तीनों सकारों अर्थात् 'श्', 'ष्' व 'स्' में केवल 'स्' ही व्यंजन मिलता है।
- ब्रजभाषा में 'ऋ' के स्थान पर 'इर' अथवा 'रि' का उच्चारण किया जाता है, जबकि इसका लेखन में प्रयोग होता है।
- इसमें ए और ओ के ह्रस्व रूप का भी प्रयोग होता है।
- ब्रजभाषा में कभी-कभी 'अ' का उदासीन रूप भी प्रयोग होता है और यह प्रायः शब्द के अन्त में आता है। जैसे- बहुअ।
- इसमें 'ह' का कभी-कभी लोप होने की प्रवृत्ति भी पायी जाती है। जैसे- साहुकार = साउकार, बारह = बारा आदि।

ब्रजभाषा की व्याकरण सम्बन्धी विशेषताएँ

(1) जिस प्रकार खड़ी बोली ब्रजभाषा में आकारांत संज्ञाओं व क्रियाओं का प्रयोग होता है, वैसे ही ब्रजभाषा में ओकारांत संज्ञाओं का प्रयोग किया जाता है, जैसे- भला-भलो, लड़का-लड़कों, बिगड़ा-बिगरो आदि।

(2) ब्रजभाषा में संयुक्त परसर्ग का प्रयोग निम्न ढंग से होता है-

(क) कर्त्ता- ने, नें, नै
(ख) कर्म- कौ, कू
(ग) करण- सौं, सों, सै, तै
(घ) सम्प्रदान- कइं, कैं, ताईं, हेत
(ङ) अपादान-तैं, सैं, सें। ■

प्रश्न 8. (ब) अवधी भाषा के उद्भव एवं विकास का वर्णन कते हुए इसकी विशेषताएँ बताइए।

उत्तर-

अवधी भाषा का उद्भव एवं विकास

अवधी भाषा, पूर्वी हिन्दी की सबसे मुख्य बोली है और हिन्दी की उन बोलियों में हैं, जिन्हें विश्वस्तरीय ख्याति प्राप्त हुई है। इस बोली का नाम अवधी, अवध शब्द से स्थानानन्तरण सम्बन्ध के आधार पर बना है। 'अवध' अयोध्या का ही नामान्तर है, जो मध्ययुग में एक बहुत बड़े सूबे के रूप में विकसित था। प्राचीन भारतीय इतहास में अयोध्या को दक्षिण कौशल की राजधानी माना गया है। इस आधार पर इस बोली का एक अन्य नाम कौशली भी कहीं-कहीं प्राप्त होता है। सन्तों, कवियों ने कभी-कभी इसे 'पुरबिया' भी कहा है पर आज इसका मुख्य और मान्य नाम अवधी है।

अवधी भाषा क्षेत्र–अवधी का क्षेत्र आज उसी भू-भाग में है, जिसमें अवध प्रान्त या राज्य था। वर्तमान फैजाबाद और लखनऊ मण्डल के कुल 14 जिले अवधी क्षेत्र में आते हैं– ये हैं बहराइच, गोण्डा, फैजाबाद, अम्बेडकर नगर, बाराबंकी, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, रायबरेली, उन्नाव, लखनऊ, सीतापुर, लखीमपुर खीरी, हरदोई। इस समय अवधी बोली बोलने वालों की क्षेत्रीय संख्या लगभग 5 करोड़ के आसपास है।

अवधी साहित्य का इतिहास व महत्व

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल का सम्पूर्ण सूफी प्रेमाख्यान काव्य और रामकाव्य धारा का अधिकतर साहित्य अवधी बोली में है। सूफी कवियों में मुल्ला दाउद, कुतुबन, मंझन, जायसी, उसमान, नूर मोहम्मद, कासिमशाह, शेखनिसार आदि इसी अवध क्षेत्र के निवासी थे और इसी में इन कवियों ने अपनी रचनाएँ भी की हैं। राम काव्यधारा में गोस्वामी तुलसीदास ने इस बोली की रामचरित मानस के माध्यम से विश्व कीर्ति प्रदान की। अन्य रामभक्त कवि जो तुलसी वाले मार्ग के हैं अथवा रसिक धारा के हैं, अवधी का माध्यम ही अपनाते रहे हैं।

भक्तिकाल की निर्गुणधारा में कई सन्तों जैसे जगजीवन साहब, मोहन साई आदि ने भी अवधी में ही काव्य रचना की। सम्पूर्ण सतनामी सम्प्रदाय इसी धारा में है। आधुनिक काल के कवियों की एक लम्बी परम्परा भी अवधी से जुड़ी है, जैसे रमईकाका, वंशीधर शुक्ल, बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस', पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र, गुरुप्रसाद 'मृगेश', विश्वनाथ पाठक, त्रिलोचन शास्त्री आदि। रीतिकाल में भी अवधी में रचनाएँ चलती रहीं। इस तरह भक्तिकाल से लेकर आधुनिक काल तक अवधी बोली का साहित्यिक महत्व सर्वविदित है।

अवधी की भाषायी विशेषताएँ

अवधी की भाषायी विशेषताओं में निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं–

1. ध्वनिगत विशेषताओं में ण ञ न (कौण > कौन, बाण > बान), ड़ > र (साड़ी > सारी), व > ब (वचन - बचन), श, ष ञ स (वर्षा- बरसा) इत्यादि प्रमुख हैं। उकारान्तता (राम कहतु चलु) इसकी साधारण प्रवृत्ति है तथा ऐ और औ इसमें सन्ध्यक्षरों के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जैसे- पैसा > पइसा, और > अउर।

2. व्याकरणिक विशेषताओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि इसमें संज्ञा के तीन रूप जैसे- लरिका, लरिकवा, लरिकउनाम मिलते हैं। 'ए', 'न' प्रत्ययों से बहुवचन बनाए जाते हैं, जैसे- रात > रातें, लरिका > लरिकन। ई, इनी, नी तथा इया प्रत्ययों से पुल्लिग शब्द स्त्रीलिंग बनते हैं, जैसे- मोरनी, बुढ़िया आदि। क्रियाओं में वर्तमान के लिए त-रूप (बैठत, देखत), भूतकाल के लिए वा-रूप (आवा, जावा) तथा भविष्य काल के लिए ब-रूप (खाइब) प्रचलित हैं।

3. अवधी की शब्दावली प्रमुखत: संस्कृत के तद्भवीकरण तथा देशज प्रक्रिया से विकसित हुई है।

अवधी की प्रमुख विशेषता उसके लचीलेपन तथा संतुलन में है। यह ब्रज की तरह न तो अति कोमल है, न हरियाणी की तरह कठोर। लोकमंगल के तत्व इसकी आन्तरिक संरचना में ही निहित हैं। यही कारण है कि भक्तिकाल के अधिकांश प्रबन्ध काव्य इसी भाषा में रचे गए हैं। निम्नलिखित पंक्तियों में लोकमंगल का यही भाव दिखता है–

"परहित सरसि धरम नहिं भाई, परपीड़ा सम नहिं अधमाई।" ■